Series No.13

सामवेदीय श्रौतस्मार्त
कारिकासंग्रहः

Samavedeya Srouta-Smarta
KARIKASANGRAH

ॐ

Dr Girijaprasad Shadangi

सामवेदीय श्रौतस्मार्त **कारिकासंग्रहः**

Samavedeya Srouta-Smarta **KARIKASANGRAH**

Dr Girijaprasad Shadangi

सामवेदीय श्रौतस्मार्त

कारिकासंग्रहः

Samavedeya Srouta-Smarta

KARIKASANGRAH

Edited
by

Dr Girijaprasad Shadangi
Department of Samaveda
Sri Venkateswara Vedic University.
Tirupati

Samavedeya Srouta-Smarta KARIKASANGRAH

Editor : Dr Girijaprasad Shadangi

Publisher : Dr Girijaprasad Shadangi

Place: Tirupati

Page : 248

ISBN:978-93-5321-657-3

Edition: First

Year: 2018

Price: 450/-

Copies: 500

Address:
Meenakshi Shadangi
103, 1st Floor, Sri Padmavati Homes
Vinayak Nagar, Tiruchanoor
Tirupati – 517503
Mo-9951051209
Email: gpshadangi@gmail.com

Printed by:
Jwalamukhi Mudranalaya Pvt Ltd
Bangalore-560004

विषयानुक्रमणिका

*****

(श्रौतकारिकावलिः)

प्रस्तावना

यज्ञ कर्म हेतु वेदमन्त्रों का भूतल पर अवतरण हुआ है। इन मन्त्रों से और यज्ञ यागादि के माध्यम से धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की प्राप्ति होती है। यद्यपि वेदमन्त्रों का प्रयोग और फलों का वर्णन ब्राह्मणादि ग्रन्थों में वर्णित है। फिर भी यज्ञयागादि कर्मो की सरलता हेतु सूत्र ग्रन्थों की रचना ऋषि मुनियों ने परवर्ती काल में की है। जिन को हम आश्वलायन, आपस्तम्ब, बौधायन, द्राह्यायण, लाट्यायनादि नाम से जानते है। इन्ही सूत्रग्रन्थ और वेदमन्त्रों के माध्यम से श्रौतयाग संपन्न होते है।

इसी प्रकार गृह्यसूत्रों को कारिकाओं के माध्यम से षोडशसंस्कार कर्मों को विधिवद् करने हेतु पूर्वापरप्रयोग रुप मे लाया गया है। मूल रुप से कारिका श्लोकबद्ध होती है। अत्यन्तसंक्षिप्तसूत्ररुप और अनेक अर्थ को प्रदान करने वाला श्लोक कारिका होता है- **"संक्षिप्तसूत्रबह्वर्थसूचकः श्लोकः कारिका"** । इस प्रकार श्लोकबद्ध कारिकायें सभी वेदशाखाओं के लिये ऋषियों ने प्रणयन किया है। उनमें सामवेद के लिये वामन, शाट्यायन, गौतमादि महर्षियों द्वारा रचित वामनकारिका, शाट्यायनकारिका, वैनतेयकारिका, तरुणाग्निहोत्रि कारिका, गौतममहर्षिप्रोक्त अनेक कारिकायें स्मार्तकर्म हेतु उपलब्ध है। इन्ही कारिका, गृह्यसूत्र और वेदमन्त्रों के आधार से प्रयोगग्रन्थ की रचना की गयी है।

1.वामनकारिका

वामनकारिका स्मार्तपूर्वापरप्रयोग को गृह्यसूत्रानुसार परिभाषित करती है। गृह्यसूत्र वृत्ति मे जो अस्पष्ट अंश काम्यप्रयोग, वृष्टि, पशु, पुत्र, आरोग्यसाधककर्म, अर्कविवाह, कदलीविवाह, रजस्वला-सूतिका-गर्भिणी-संस्कारक्रम, आहिताग्निसंस्कारादि कर्म है

उनका गृह्यसूत्रके अनुसार यहाँ वर्णन किया गया है। **वामन** के द्वारा प्रणयन किया गया यह ग्रन्थ 60 खण्ड और 1148 श्लोक मे निबद्ध है। उपलब्ध कारिकाओं मे से अत्यन्त बृहत् और प्रयोग सम्बन्धी सभी विषयों को प्रतिपादन करता है। ग्रन्थ कर्ता आचार्य खादिर को प्रणाम करते हुए गृह्याकर्मों का वर्णन करते है -

प्रणम्य खादिराचार्यं गृह्यमाश्रित्य तत्कृतम्।
संक्षेपेण पदार्थानां स्मार्तानां वक्ष्यते क्रमः।। 1।।

अन्तिमश्लोक-

या ओषधीस्सोमराज्ञीर्द्वयं पश्चाज्जपत्ततः।। 17।।
तान् बीजान्प्रक्षिपेत्पश्चात् पालिकासु यथा क्रमम्।। इति
सर्वप्रयोगानुक्त्वा एवमुपसंह्रियते।।

ग्रन्थकर्ता शाट्यायन आचार्य के मत को कई स्थानों पर उल्लेख किया है। जैसे उपरिष्टात्तन्त्र मे-

व्यस्ताभिर्जुहुयात्पाहि त्रयोदश समाह्वयाः।
त्रयोदशाहुतीरेता आहुश्शाट्यायनेरिताः।।

अग्न्यनुगतादिप्रायश्चित्तकारिका मे-

पाहित्रयोदशाख्यं तु कुर्याच्छाट्यायनेरिताः।

पुनस्सन्धानकारिका मे-

जुहुयादाहुतिं यत्कुसीदमित्यनया तदा।
शाट्यायनेरितं वापि सर्वत्रापि विकल्पते।। 18।।

2.शाट्यायनकारिका-

यह शाट्यायनकारिका विवाहादि गृह्योक्त कर्मों का बोधक है। यहाँ पर अङ्गादि कर्मों को सरलरीतिसे प्रतिपादित करते हुए पूर्वप्रयोग का ही वर्णन किया है। सूत्र में नहीं कहा गया नान्दी पुण्याह अंकुरार्पण आदि प्रयोग को बताता है। अग्नि के अनेक नाम दिया है। संपूर्ण कारिका 28 खण्ड और 100 श्लोक में है। ग्रन्थकर्ता का नाम अज्ञात है।

ग्रन्थ का प्रारम्भ श्लोक-

अर्पनान्दी च रक्षा च सङ्कल्पवरणाप्लवम्।
पुण्याहोदकसेकाग्निब्रह्मकुम्भनिवेशनम्।।1।।

और अन्तिमश्लोक-

गो दासि कन्यकाश्चैव तिष्ठन्नेव प्रतिग्रहः।
पुच्छे केशे च हस्ते च न्यस्तहस्ते जलं क्षिपेत्।।10।।

3.वैनतेयकारिका

वैनतेय कारिका पार्वणप्रयोग से लेकर नवग्रहमखप्रयोग पर्यन्त संस्कारों का वर्णन करता है। यहाँ पर 407 श्लोक और 49 खण्ड है।

ग्रन्थ का आरम्भ-

शङ्खचक्रगदापद्मविभूषितचतुर्भुजम्।
नमामि श्रीधराश्लिष्टपार्श्वं रङ्गेश्वरं हरिम्।।1।।

और अन्तिम-

केचित्कुर्वन्ति कर्मेदं प्रणीय नवधाऽनलम्।
एकाग्नावेव होतव्यमस्माभिः ग्रहदोषकैः।।41।।
इत्थं ग्रहाणां कथिता पूजा परमशोभना।
कुर्वन्नेव तेजसाऽसौ विवस्वान्भूम्ना विष्णुः प्रज्ञया वाक्पतिश्च।
मार्कण्डेयश्चायुषा किं बहूक्त्या सर्वैरंशैः शङ्करो जायते च।।

यह कारिका सामवेद जैमिनीय शाखीयों का है।

4.तरुणाग्निहोत्रिकारिका

तरुणाग्निहोत्रिकारिका सामवेद जैमिनीयशाखा से सम्बन्ध रखता है। यहाँ पार्वणतन्त्र से प्रारम्भ होकर वैश्वदेव ताम्बूलचर्वणप्रयोग तक प्रतिपादन किया गया है। यह कारिका 26 खण्ड और 270 श्लोकात्मक है। ग्रन्थ का प्रारम्भ-

विनियोगो हि मन्त्राणां स्पष्टं गृह्ये प्रकाशते।
अथ क्रियाक्रमं वक्ष्ये मन्त्रादींश्च क्वचित्क्वचित्।।1।।

और अन्त मे -

अनुज्ञाप्य द्विजान् दत्वा फलदानं समाचरेत्।
ताम्बूलचर्वणं कृत्वा दद्याद्गां गुरवे शुभाम्।।8।।

बालाग्निहोत्री के द्वारा जैमिनीगृह्यसूत्र को विस्तार से कहा गया है।
फलश्रुति श्लोक-

श्रीमान्मरकतश्यामो वेणुना भूषिताधरः।
चकास्तु हृदि गोविन्दो मदीये वल्लभीप्रियः।।
नगार्जुनग्राममहीशिरोमणिः यस्सामदुग्धाम्बुधिमन्थमन्दरः।
प्राहुश्च यं वेङ्कटनाथदीक्षितं तं यायजूकं गुरुमानतोऽस्म्यहम्।।
कावेरीतोयपानादसकृदपि सवे सोमपानाच्च सम्यक्।
श्रीरङ्गक्ष्मापतेर्यत्तिलकितवदनं तस्य सन्दर्शनाच्च।
अश्रान्तं शुद्धचेता गुरुपदकृतधीः ज्ञातशास्त्रार्थतत्वः।
श्रीमान् बालाग्निहोत्री विशदयति मुनेः जैमिनेर्गृह्यकर्म।।

5.गौतमकारिका

गौतममहर्षि के द्वारा अनेक कारिकाएँ उपदिष्ट है। उनमें से प्राप्त कारिकाओं मे नक्षत्रदेवतामन्त्रकारिका, षष्ठ्यब्दपूर्तिकारिका, वास्तुहोमकारिका, पितृमेधकारिकायें उपलब्ध है।

5.1.नक्षत्रदेवतामन्त्रों को गौतममहर्षि के द्वारा आयुष्य अभिवृद्धि हेतु कहा गया है। यहाँ पर कृत्तिका से प्रारम्भ करते हुए भरणी तक नक्षत्रों का सामवेदोक्त मन्त्रों तथा देवताओं को कारिका के माध्यम से प्रतिपादित किया गया है। यह कारिका 15 श्लोकात्मक है।
कारिका का आरम्भ-

अथ छन्दोगसूत्रस्य ग्रहाराधनकर्मणि।
वक्ष्येऽहं कृत्तिकादीनामृक्षाणां मन्त्रदेवाताः।।1।।

और अन्तिम श्लोक-

नाके सुपर्णं भरणी यमो वै देव ईरितः।
एवमुक्तं गौतमेन ह्यायुषोऽस्याभिवृद्धये।।15।।

5.2. **वास्तुहोमकारिका** सामवेद से सम्बन्धित कारिका है। यहां पर 22 श्लोक है। गृहवास्तु के कर्मों का वर्णन करता है। कारिका का आरम्भ -

अथातो वास्तुहोमस्य प्रयोगस्तूच्यतेऽधुना।
पूर्वप्रोष्ठपदे तारे ह्यन्तर्गृहसमायताः।।1।।

और अन्तिम श्लोक-

पुनः कुर्याच्चतुर्मासेष्वथ वा वत्सरेषु वा ।
वास्तुहोमे कृते तस्य धनधान्यादि वर्धते।।22।।

5.3. **मृत्युञ्जयशान्तिकारिका** – गौतममहर्षि प्रोक्त मृत्युञ्जयशान्ति कारिका 5 श्लोकात्मक है। अपमृत्युनाशक, सर्वपापप्रणाशक, सर्वव्याधिहर और अकालमृत्यु के निवारण हेतु यह कर्म किया जाता है।

5.4.षष्ठ्यब्दपूर्तिकारिका में 35 श्लोक है। यहाँ पर छन्दोगों (सामवेदीयों) के षष्ठ्यब्दपूर्तिप्रयोग से सम्बन्धित कर्मों को विस्तार से वर्णन किया गया है। कारिका का प्रारम्भ-

अथातस्सम्प्रवक्ष्यामि शान्तिं षष्ठ्यब्दपूरणे।
छन्दोगहितकामार्थं गौतमो मुनिरब्रवीत्।।1।।

अन्तिम श्लोक -

षष्ठ्यब्दपूर्तिकी शान्तिः व्याख्याता गृह्यतां बुधैः।
सर्वपीडाप्रशमनी पूर्णायुष्यप्रदायिनी।।35।।

5.5. **पितृमेधकारिका** के मुख्यप्रतिपाद्य विषय अपरकर्म है। मरण के बाद पहले दिन से लेकर संस्कारों के सपिण्डीकरण कर्म पर्यन्त वर्णन है। यह कारिका 56 श्लोक और 9 खण्डों मे निबद्ध है। कारिका का

प्रारम्भ-

प्रणम्य गौतमाचार्य्यं सूत्रमाश्रित्य तत्कृतम्।
कारिकासंग्रहं वक्ष्ये सुबोधायाल्पमेधसाम्।।1।।

और अन्तिम श्लोक-

पूर्णे वर्षे मृततिथावाब्दिकं च समाचरेत्।
परेद्युर्ग्रहयज्ञं च ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः।।4।।

कारिका के अन्त में-

अनुग्रहेण च गुरोः हरेश्च कृपया मया।
सूत्रं च सूत्रवृत्तं च समालोच्य यथाविधि।
संस्कारादिसपिण्ड्यन्तकारिकासंग्रहः कृतः।।

इस से ज्ञात होता है की आचार्य गौतम के द्वारा उपदिष्ट विषयों को परवर्ति कालमें उनके शिष्य के द्वारा सम्पादित किया गया है।

6.कल्पकारिका -

कल्पकारिका को श्रौतकारिका, क्रतुप्रायश्चित्तकारिका, गणेशकारिका के नाम से भी जाना जाता है। अग्निष्टोम आदि यागों मे उद्गातृओं का कर्तव्य तथा अनुष्ठान के क्रिया की ज्ञापन हेतु श्रौतकारिका ग्रन्थ पथप्रदर्शक है। आरम्भ मे उद्गाता के द्वारा महदित्यादि का जपप्रयोग क्रम से बोध कराता है। कर्मों मे दोषपरिहार हेतु हर एक ऋत्विक् को यह क्रम जानना जरुरी है। ऋत्विजों के द्वारा कर्म लोप से अनर्थ फल का उत्पत्ति होता है जिससे यजमान को हानि पहुँचती है। ऋत्विज् भी दोषभाक् होते है। नारदमुनि कहते है की -

प्रहीणः स्वरवर्णाभ्यां यो वै मन्त्रः प्रयुज्यते।
यज्ञेषु यजमानस्य रुशत्यायुः प्रजां पशून्।।

इत्यादि श्लोक दोषस्मरण कराते है। ग्रन्थ का प्रारम्भ गणेश शङ्कर को नमस्कार करते हुए कर्मों की वैशिष्ट्यता और कल्पकारों के मत को प्रायश्चित्तकर्म हेतु दर्शाते है।

गणेशं शङ्करं नत्वा कल्पकारमतः परम्।
प्रायश्चित्तानि वक्ष्येऽहं कर्मवैगुण्य शान्तये।।1।।

अन्त मे- एवमेवान्ययोः कुर्युः स्तोत्रसाफल्यसम्पदम्।
शेषं प्रकृतिवत्कर्म सवनेषु त्रिषूच्यते।। 111 इति

इति **"प्रायश्चित्तविषये कल्पकारिकाष्टोत्तरशतं सम्पूर्णम्"** लिखते हुए ग्रन्थ मे 108 श्लोकों को दर्शाते है परन्तु 111 श्लोक उपलब्ध है।

तत्तत्कर्मसु इति कर्तव्यताबोधकानां सूत्राणां. कारिकाणां, प्रयोगानां च सत्वेऽपि अनवधानात्, आलस्यात् अयथावत् ज़ानाद्वा मन्त्रतन्त्रादिषु लोपः जायते। लोपे च वैगुण्यं, तेन च निष्फलत्वं विपरीत फलत्वं वा कर्मणः स्यात्। अतः तत्र तत्र प्रायश्चित्ते कृते निर्दुष्टं भवति। कल्पकारिकायां प्रवर्ग्यसामप्रभृति यज्ञपुच्छान्तं मन्त्रतन्त्र लोपे प्रायश्चित्तं कथितम्।

7.क्रतुसंग्रहकारिका

क्रतुसंग्रहकारिका सायणाचार्य के द्वारा विरचित है। यह कारिका 29 श्लोकों के संग्रहरूप अग्निष्टोमप्रयोगान्त क्रियाओं का संकलन है। ग्रन्थ के आरम्भ म-

अथाऽग्निष्टोमसंस्थेन ज्योतिष्टोमेन याजयेत्।
सपूर्वमृत्विजो वृत्वा देवभूमिविनिश्चये।। 1।।

अन्तिम श्लोक-

दैनिकानिर्वपेद्देवसुवासापि यजूंष्यथ।
उपोष्य वेदिमाग्नेयमिष्ट्वाऽग्निष्टोमसंस्थितिः।।29।।

सूत्रेषु प्रयोगेषु सत्स्वपि, कर्मणां क्रमबोधिका कारिकाऽपेक्ष्यते। यथा वामनकारिका शाट्यायनकारिका इत्यादि गृह्यकर्मक्रमबोधिका तथा क्रतुसंग्रहकारिकेति श्रौतकर्मावबोधिका कारिका वर्तते। ताण्ड्यमहाब्राह्मणभाष्ये सायणाचार्येणादृता।

8.मन्त्रविनियोगसंग्रहकारिका

सामवेद के ब्राह्मणों में से ताण्ड्यब्राह्मण का स्थान श्रौतप्रयोग दृष्टि मे अत्यन्त उच्च है। ताण्डि नामक ऋषि अथवा आचार्य से प्रणीत यह ताण्डि शाखा से सम्बन्ध है। 24 अध्याय मे स्थित सभी मन्त्रों के विनियोग का वर्णन 34 श्लोक में किया है। कारिका के प्रारम्भ मे-

ब्राह्मणप्रथमाध्याये मन्त्राणां विनियोजनम्।
अत्रादौ वृत उद्गाता महदित्यादिकं जपेत्।। 1।।

और समापन -

वेदार्थस्य प्रकाशेन तमो हार्दन्निवारयन्।
पुनर्थांश्चतुरो दद्यात् विद्यातीर्थमहेश्वरः।। 34।।

ताण्ड्यब्राह्मणोक्तानां महन्मेऽवोचः इत्यादि मन्त्राणां विनियोग परिज्ञानं श्लोकात्मककारिकया झटिति जायते। नैवं सूत्रप्रयोगवाक्यैः तेषां स्मृतेः दुष्करत्वात्। अत्र कारिकायां प्रतिमन्त्रविनियोगः क्रमेण सुलभतया ज्ञातुं शक्यते। अतः अग्निष्टोमान्तभागः दक्षिणाप्रतिग्रहभागश्चात्र योजितः।

9.श्रौतप्रकाशिका

श्रौतप्रकाशिका सुब्रह्मण्य आवाहन से लेकर सर्वस्तोम प्रकार तक 124 विषयों को 252 श्लोकों के माध्यम से स्पष्ट किया है। इसके ज्ञान से सामवेद के ऋत्विक् निर्विघ्नरूप से अपने प्रयोग करने मे सक्षम होंगे। ग्रन्थ का प्रारम्भ-

अथेति मङ्गलार्थस्स्यात्सर्वक्रत्वर्थ एव च।
सुब्रह्मण्यायजुः प्रायश्चित्ताम्नायस्तथैव च।। 3।।

और समापन-

एकविंशं तुरीयं च त्रयस्त्रिंशमितीरितम्।
सर्वस्तोमप्रकारोयं श्रुत्युक्तो विशदीकृतः।। 248।।

ग्रन्थ का पहला संकलन मैसूर के विद्वान् नारायणस्वामी दीक्षित के द्वारा किया गया था। जो की अनुपलब्ध है।

अप्रकाशिता कारिका

अभी भी देवनागरी लिपि में अनेक अप्रकाशित कारिकाएँ है। उनमे **जैमिनीय श्रौतकारिका** । यह कारिका हस्तप्रत और ग्रन्थलिपि मे है। इसका प्रारम्भ-

वक्षस्थितेन्दिरालक्ष्मजियाद्रगेश्वरं महः।
जगता ह्यादितं एन कलौमरकतत्विषा।।

और अन्तिम श्लोक-

मध्ये सतां प्रयोगस्य चिरन्त्वलं दीपिका।।

वसिष्ठगोत्र से उत्पन्न श्रीनिवासाख्य विद्वान् के द्वारा इस ग्रन्थ की रचना की गयी है।

इसी प्रकार **जैमिनीय श्रौतदीपिका**-

प्रारम्भ श्लोक-

तुरङ्गराज नाम्नोयं क्रियते क्रतुदीपिका ।।
अथाधानाद्युतवसानान्तं ज्योतिष्ठोम क्रियाक्रमं....

और अन्तिमश्लोक

सामनिधनान्ते होमं कुर्वित्यध्व्यर्युमन्विक्ष्य चोदयेत्।।

इस दीपिका नामक ग्रन्थ में 32 खण्ड है। इस मे आधाने उद्गातृवरणक्रमः, नित्याग्निहोत्रक्रमः, राजक्रयनियमः, अग्निषोमीय, प्रथमप्रवर्ग्य, प्रवर्ग्योद्वासन, आहवनीय, चमसभक्षणविधानम्. माध्यन्दिसवने क्रियाकर्म, माध्यन्दिनपवमाने विशेषः, सोमभक्षणम्, दक्षिणाम्, होत्रपृष्ठम्, मैत्रावरुणपृष्ठम्, ब्राह्मणाच्छसिपृष्ठम्, सप्तदशमच्छावाकस्य पृष्ठम्, आर्भवपमानस्तुतिः, इत्यादि विषय प्रतिपादन किया गया है। अप्रकाशित और ग्रन्थ लिपि में है।

इसी प्रकार शर्य्याप्रयोगः, पूर्वऋद्धिन्धानकारिकाएँ देवनागरी लिपि में प्रकाशित होना बाकि है। सामवेद के अनेक कारिकाग्रन्थ तालपत्र और हस्तप्रत मे तिक्लारि, देवनागरी, मलयालम्, ग्रन्थ आदि लिपि मे भारत के अनेक विद्वान् तथा संस्थाओं के पास उपलब्ध है।

बैङ्गलूर के दिवङ्गत विद्वान् **नागप्पश्रौती** के ग्रन्थालय से कई कारिकाओं के हस्तप्रत, तोगूर के जैमिनीय शाखा के प्रतिष्ठित विद्वान् **टि. मकरभूषण** जी से कुछ हस्तप्रत, होन्नावर के विद्वान् **अलेख शिवराम भट्ट**, तिक्लारि लिपि मे स्थित तालपत्र और हस्तप्रत के रुपमें स्थित कारिकाओं को संगृहीत किया। इन सब कारिकाओं के सङ्कलन में सहायक सभी महानुभावों के प्रति मैं कृतज्ञता अर्पण करता हुँ। और सदा सर्वदा मेरे मार्गदर्शक रहे **विद्वान् प्रकाश सुब्राय भट्ट**, गुरुजी ने शुद्धाशुद्ध विषय में अनेक स्थानों पर त्रुटियों का परिष्करण किये है, उनको मेरा साष्टाङ्ग प्रणिपात । मुझे ग्रन्थ सम्पादन कार्य में कभी कोई शङ्का आने पर समाधान हेतु सदा तत्पर हितैषी तथा सरल स्वभाव से परिचित विद्वान् **डा आर् सुब्रह्मण्य भिडे** महाशय को इस अवसर पर धन्यवाद ज्ञापित करता हुँ।

प्रस्तुतसंस्करण की आवश्यकता-

समग्र देश मे सामवेद से सम्बन्धित ग्रन्थों का प्रकाशन और संशोधन कार्य अत्यन्त शिथिल रहा है। जिसके कारण अभी तक सामवेदीयों को अपने प्रयोग मे अनेक बाधाओं का सामना करना पड रहा है। अनेक कारिकाएँ नष्ट हो गयी है। उपलब्ध स्मार्त और श्रौत से सम्बन्धित कारिकाओं को यथा शीघ्र संशोधन, सङ्कलन और प्रकाशन करना हमारा उत्तर दायित्व होता है। इस उद्देश्य से तालपत्र हस्तप्रत तथा प्राचीन प्रकाशित ग्रन्थों को संग्रह करके

सामवेदीयश्रौतस्मार्तकारिकासंग्रह नामक यह ग्रन्थ प्रकाशित किया गया है।

सामवेदीयस्मार्तश्रौतकारिकासंग्रह ग्रन्थ में स्मार्तप्रयोग से सम्बन्धित 5 और श्रौतप्रयोग से सम्बन्धित 4 कुल 9 कारिकाएँ प्रकाशित की गई है । इन कारिकाओं के माध्यम से सामवेद के प्रयोगकर्ता षोडशसंस्कार सम्बन्धित प्रयोग एवं श्रौत प्रयोग में अपने को निपुण बना सकते है। यह कारिका ग्रन्थ सभी को मार्गदर्शन करें ऐसी परमेश्वर से प्रार्थना करता हुँ।

आपका विनीत
गिरिजाप्रसाद षडङ्गी

दिनाङ्कः - 18.10.2018
स्थल - तिरुपति

***

सङ्केताक्षरसूची

आ.पि	-	आण्डपिल्लै
ता.ब्रा	-	ताण्ड्यब्राह्मणम्
द्रा.श्रौ.सू	-	द्राह्यायणश्रौतसूत्रम्
द्रा.श्रौ.सू.भा	-	द्राह्यायणश्रौतसूत्रभाष्यम्
द्रा.श्रौ.सू.ध	-	द्राह्यायणश्रौतसूत्रधन्विभाष्यम्
ष.वि	-	षड्विंशब्राह्मणम्
ला.श्रौ.सू	-	लाट्यायनश्रौतसूत्रम्
छा.उ	-	छान्दोग्योपनिषत्
उप.नि	-	उपनिदानसूत्रम्
प्रति.सू	-	प्रतिहारसूत्रम्
प्रस्ता.सू	-	प्रस्तावसूत्रम्
पं.सू	-	पञ्चविधसूत्रम्
नि.सू	-	निदानसूत्रम्
पू.आ	-	पूर्वार्चिकः
उ.आ	-	उत्तरार्चिकः
पु.सू	-	पुष्पसूत्रम्

जनस्य गोपा अजनिष्ट जागृविः (उ.आ.3.1.6)

(जागरुक व्यक्ति ही जनता की रक्षा कर सकता है)

1.वामनकारिका

1.मङ्गलाचरणम्

1. प्रणम्य खादिराचार्यं गृह्यमाश्रित्य तत्कृतम्।
संक्षेपेण पदार्थानां स्मार्तानां वक्ष्यते क्रमः।।1।।
2. अन्येषु पादबन्धेषु तत्तद्ग्रन्थेषु सत्स्वपि।
पाठधारणसौख्याय क्रियते पद्यया गिरा।।2।।
3. यथा वा निर्मितस्तेषु पूर्वपूर्वेषु सत्स्वपि।
चरमश्चरमस्तद्वदयं ग्रन्थो भविष्यति।।3।।
4. अथ कर्माण्यनादेशे सर्वाण्यप्युत्तरायणे।
पूर्वपक्षे शुभे चाह्नि तिथिवारगुणान्विते।।4।।
5. पूर्वाह्ने शुभलग्ने च स्नात्वाचम्योपवीतिवान्।
प्राणानायम्य सङ्कल्प्य कर्मनामोक्तिपूर्वकम्।।5।।
6. प्राङ्मुखस्सपवित्रेण कुर्याद्दक्षिणपाणिना।
होमानात्मार्थपत्न्यर्थान्कृत्स्नमौपासनेऽनले।।6।।
7. परार्थानेकदेशेऽग्नौ स चान्ते लौकिको भवेत्।
अङ्गान्यभिमुखः पश्चादासित्वाग्नेस्समाचरेत्।।7।।
8. होमाङ्गानां व्यवायं च न स्यात्केनचिदात्मनः।
मन्त्रानादि गृहीतांस्तु कृत्स्नान्कर्मसु निर्दिशेत्।।8।।
9. स्वाहान्तास्ते च होमे स्युः परस्यादिग्रहेण तु।
जानीयात्पूर्वमन्त्रान्तं विप्रान्कर्मान्त आशयेत्।।9।।
10. हविर्विशेषानिर्देशे सर्वत्र जुहुयाद्घृतम्।
मन्त्रानुक्त्वा चतुर्थ्यन्तैर्देवतावाचिभिः पदैः।।10।।
11. निर्वापहोमावुद्देशत्यागं चापि समाचरेत्।
मन्त्रश्रुतौ तु तेनैव होमो यद्देवतापदैः।।11।।

।।इति प्रथमः खण्डः।।1।।

2. नान्दीमुखम्

12. तत्र नान्दीमुखश्राद्धक्रमस्तावदुदीर्यते।
तच्छ्राद्धं दैवतीर्थेन पूर्वाह्णे प्राङ्मुखेन च।।1।।

13. तिलस्थाने यवान्कृत्वा कार्यं यज्ञोपवीतिना।
नात्र स्वधानमश्शब्दौ न कुर्यादप्रदक्षिणम्।।2।।

14. आदत्तव्यं च युग्मत्वमभुग्नान्यासनानि च।
एवं पार्वणतन्त्रेण सर्वं कुर्वीत दैववत्।।3।।

15. विस्तृतं वक्ष्यमाणत्वात्तन्त्रं तन्नेह लिख्यते।
होमांस्तु लौकिके वह्नौ त्रीन्कुर्यान्नित्यहोमवत्।।4।।

16. नान्दीमुखेभ्य इत्यग्रे प्रत्याहुतिसमीरयेत्।
ततः पितृभ्यस्स्वाहेति निर्दिशेत् प्रथमाहुतौ।।5।।

17. पितामहेभ्यस्स्वाहेति मध्यमायामुदीरयेत्।
प्रशब्दोपक्रमं ब्रूयादेवमेवोत्तराहुतौ।।6।।

18. दध्ना सम्मिश्रितान्पिण्डान् बदरैरक्षतैरपि।
होममन्त्रैरुदक्संस्थानुदगग्र कुशेषु तु।।7।।

19. दद्यात्स्वाहेति च स्थाने तृप्तिरस्त्विति निर्दिशेत्।
यद्वा दैवद्वयं तिस्रो मातरः पितरस्त्रयः।।8।।

20. त्रयो मातामहाश्चाद्याश्चैतानुद्दिश्य पूर्ववत्।
प्रत्येकं भोजयेद्युग्मान् ब्राह्मणांस्तण्डुलादिना।।9।।

21. दद्यात्तेभ्योऽप आसिच्य वदन्नान्दीमुखा इति।
तत्तन्नामतो विश्वेदेवा इत्येवमादिकम्।।10।।

22. प्रीयन्तामिति चोक्तान्तमेतत्पुंसवनादिषु।
संस्कारेषु विना जातसोष्यकर्मव्रतानि च।।11।।

23. क्रमादष्टसु कुर्वीत कुर्यादाधानसोमयोः।।

इति द्वितीयः खण्डः।।2।।

3.कौतुकबन्धनम्

क्रमः कौतुकबन्धस्य यथाशास्त्रमुदीर्यते।
24. तण्डुलैः पूरितं पात्रमुपलिप्ते महीतले।।1।।
निधायोपरिपात्रस्य क्रमुकानां फलैस्सह।
25. न्यस्य ताम्बूलपत्राणि तेषु भस्म निधाय च।।2।।
अयुग्मतन्तुकं सूत्रं कौतुकं न्यस्य भस्मनि।
26. उपविश्य ततः पश्चात्पार्श्वासीनैर्द्विजैस्सह।।3।।
आपोहिष्ठेत्युदीर्याग्रे सूत्रं दर्भाग्रवारिणा।
27. प्रोक्षेत्तरत्समन्दीति चतस्रश्चाप्युदीरयेत्।।4।।
यः पावमानीरित्याद्या ऋचश्शुद्धवतीरपि।
28. साम्ना तरत्समेत्येतोन्विति चाबोधयादिकम्।।5।।
महित्रीणामिति द्वे च गायेत्त्वावत इत्यपि।
29. इन्द्रन्नरो न इत्येतत्सामायुर्निधनं ततः।।6।।
त्यमूष्विति द्वयं चोक्त्वा त्रातारमिति साम च।
30. तत्रोक्त्वा हविरित्येतत्स्थाने स्वस्ति न इत्यपि।।7।।
गीत्वा सोमः पुनेत्यन्तमातीषादीयमित्यपि।
31. ससुन्वेति च सामोक्त्वा तदुदीर्घमुदीरयेत्।।8।।
विश्वतोदावन्प्रथमं द्वितीयं साम इत्यपि।
32. ततो ब्राह्मणमेता इत्यतिरात्र पदानि च।।9।।
उक्त्वा त्रिरात्रवित्यादि पिबेत्युक्त्वा च सामनी।
33. तद्ब्राह्मणं च त्रीन्वेति भस्मना कौतुकं ततः।।10।।
त्रियम्बकेति सम्मृज्य बृहत्सामेत्यृचं जपेत्।
34. दक्षिणे पाणावाबध्य स्त्रीणां वामे तु बन्धनम्।।11।।
विश्वेत्तेति निधायान्ते गायेद्यद्वेति साम च।
35. आरम्भेषु प्रयोक्तव्यमेतन्मङ्गलकर्मणाम्।।12।।

इति तृतीयः खण्डः।।3।।

4.पुण्याहवाचनम्

पुण्याहवाचनं कुर्वन्करकाद्यम्बुपूरितम्।
36. गृहीत्वा प्राङ्मुखस्तिष्ठेद्युग्मा विप्रास्तदग्रतः।।1।।
दर्भहस्तसमासीरन् वाक्यं वाचयितुं ततः।
37. उक्त्वा भवद्भिरित्यादि समासीनान्द्विजान्प्रति।।2।।
वाच्यतामित्यनुज्ञां च लब्ध्वा तेभ्योऽथ वाचयेत्।
38. पूर्वं कर्मण इत्युक्त्वा ततः पुण्याहमित्यपि।।3।।
भवन्त इत्युदीर्याथ ब्रूयादन्ते ब्रुवन्त्विति।
39. ओमिति पूर्वं वक्तारः पुण्याहं कर्मणोस्त्विति।।4।।
ब्रूयुरेवं पुनश्च द्विः कृत्वा पुण्याहवाचनम्।
40. कर्मशब्दं चतुर्थ्यन्तमुक्त्वा स्वस्तीत्यनन्तरम्।।5।।
ब्रूयाद्भवन्त इत्यादि तत ओं स्वस्तिकर्मणे।
41. अस्त्वित्यन्ते प्रतिब्रूयुर्द्विरेवं वाचयेत्पुनः।।6।।
अभ्यासे मध्यमे तत्र चतुर्थ्यन्तमुदीर्य तु।
42. कर्म नाम यथा पूर्वं स्वस्तीत्याद्यमुदीरयन्।।7।।
वक्तारोऽपि चतुर्थ्यन्तं तत्तत्कर्मोक्तिपूर्वकम्।
43. स्वस्तीत्येवं प्रतिब्रूयुः कर्मकर्ताऽथकर्मणः।।8।।
ऋद्धिं भवन्त इत्येवं ब्रुवन्त्वित्यपि निर्दिशेत्।
44. ओमित्युक्त्वेतरे वापि ब्रूयुः कर्मर्ध्यतामिति।।9।।
पुनर्द्विर्वाचयित्वैवं जलपात्राञ्जलं ततः।
45. अवनीयावनौ किञ्चित्पुण्याहेत्यादि कीर्त्तयेत्।।10।।
प्रयच्छेद्दक्षिणां तेभ्यो ब्राह्मणेभ्योऽथ शक्तितः।
46. कुर्यात्सर्वर्धि कर्मादिष्वेतदन्तेषु केषुचित्।।11।।

इति चतुर्थः खण्डः।।4।।

5. अग्निमुखम्

क्रमः पुरस्तात्तन्त्रस्य यथाचारमुदीर्यते।
47. प्रधानं प्राप्नुयाद्भागं यमग्रे प्रविशं गृहम्।।1।।
ततोपलिप्ते कृत्वादौ गोमयेनोपलेपनम्।
48. दर्भेण तत्र रेखां च प्राचीं दक्षिणतो लिखेत्।।2।।
ततस्तदादिमारभ्य कृत्वोदीचीं तदन्ततः।
49. आरभ्योल्लिख्य च प्राचीं लेखास्तिस्रश्च मध्यतः।।3।।
दक्षिणोपक्रमाः प्राचीस्तदभ्युक्ष्य च वारिणा।
50. आत्मनोऽभिमुखं तत्र निधायाग्निं समिध्य च।।4।।
उक्त्वेमं स्तोममित्यादि प्रत्यृचं प्रागुपक्रमम्।
51. प्रदक्षिणं चतुर्दिक्षु स्पृष्ट्वोपान्ते हुताशनम्।।5।।
समूह्य परितस्तस्य पश्चात्केवल भूतले।
52. न्यञ्चौ पाणी निधायेदं भूमेरिति जपेत्ततः।।6।।
तत्र वस्वन्तता रात्रौ दक्षिणेन हुताशनम्।
53. आसनं ब्रह्मणो दर्भैः प्रागग्रैः कलयेत्ततः।।7।।
ब्रह्मा निरस्त इत्येकं तृणं त्यक्त्वा प्रयोगवित्।
54. संस्पृश्य सलिलं तत्र यावत्कर्म समापनम्।।8।।
सकर्मशीलमार्षेयं कर्मज्ञं वेदवादिनम्।
55. ब्राह्मणं वरयेद्विप्रं ब्रह्माणं त्वां वृणीमहे।।9।।
इति वृतो भविष्यामीति तं प्रतिप्रोच्य वै द्विजः।
56. आसीतोदङ्मुखस्तूष्णीमावसोरितिमन्त्रतः।।10।।
मन्त्रं भूर्भुव इत्यादि प्रणवान्तं ततो जपेत्।
57. भूर्भुवस्स्वर्बृहस्पतिर्ब्रह्माहं मानुषोमिति।।11।।
व्याहृत्या यज्ञियां वाचं व्याहरेद्व्याहृतित्रयम्।
58. ऋचं वा वैष्णवीं कर्मकर्ता ब्रह्मा स्वयं यदि।।12।।

ब्रह्मणस्थान आसित्वा कृत्वा तत्र कमण्डलुम्।

59. छत्रं यद्वोत्तरासङ्गमासीनस्स्वासने ततः।।13।।

अग्नेः पुरस्तात्प्रागग्रैः दर्भैर्दक्षिणतोऽपि च।

60. उत्तरत्र प्रतीच्याञ्च त्रिःकुर्यात्स्तरणं ततः।।14।।

उदगग्रानथास्तीर्य दर्भाँस्तेषूपविश्य च।

61. प्रादेशमात्रे दर्भाग्रे नखस्पर्शं विना कृते।।15।।

छित्वा वदन्पवित्रे स्थो वैष्णव्याविति पाणिना।

62. विष्णोरित्यद्भिरुन्मृज्य घृतं पात्रेऽवनीय च।।16।।

उदगग्रे गृहीत्वा च पवित्रे हस्तयोर्द्वयोः ।

63. अङ्गुष्ठानामिकाभ्यां त्रिर्देवास्त्वेत्यादिकं वदन्।।17।।

आज्यस्योत्पवनं कुर्यात्सन्ततं प्रत्युदीरणम्।

64. अथोदगग्रे न्यस्योर्व्यां पवित्रे प्रोक्ष्य वारिणा।।18।।

उदगग्रे प्रहृत्याग्नौ तत्राङ्गारनिरुहणम्।

65. उदग्भागे निधायाज्यस्थालीं तत्र निधाय च।।19।।

ज्वलदेकैकदर्भेण द्विरवज्वालयेद्घृतम्।

66. आज्ये प्रक्षिप्य दर्भाग्रे ज्वलद्दर्भं घृतोपरि।।20।।

त्रिष्परिभ्राम्य तत्पात्रमुदग्बर्हिषि सादयेत्।

67. निरुह्य तानथाङ्गारान्समाहृत्य स्रुवादिकम्।।21।।

पात्रं हवींषि चान्यानि सन्ति चेन्न्यस्य बर्हिषि।

68. औदुम्बरी सजातीयास्तत्र प्रादेशसम्मिताः।।22।।

समिधः खादिराद्यावान्यसेत्षोडशयज्ञिकाः।

69. ततो दक्षिणजान्वक्तो दक्षिणेन हुताशनम्।।23।।

आपोऽदितेनुमन्यस्वेत्युक्त्वा प्राचीं दिशं प्रति।

70. रेखावदवसिच्याग्नेः पश्चादनुमतेन्विति।।24।।

मन्यस्वेत्यप्युदक्संस्थामुदक्प्राचीं दिशं प्रति ।

71. सरस्वतेऽनुमन्यस्वेत्यन्तर्भाव्य हवींषि च।।25।।

प्रसिच्य देवसवितः प्रसवेत्यादिनानलम्।
72. हविर्भिस्सकलैस्सार्धं परिषिञ्चेत्प्रदक्षिणम्।।26।।
सर्पिषाथसमिन्मूलमध्याग्रांजनमाचरेत्।
73. समिधो मिलिताः कृत्वा बर्हिष्येकां निधाय च।।27।।
इतरास्समिधो वह्नौ प्रक्षिपेत्प्रणवं स्मरन्।
74. अग्निं ब्रह्मात्मनां गन्धपुष्पैरभ्यर्चनं ततः।।28।।
हस्तमुष्टौ गृहीत्वा च पुष्पाक्षतसमित्कुशान्।
75. जलं गन्धं च तां मुष्टिमूरावारोप्य दक्षिणे।।29।।
जपेत्तपश्च तेजश्च श्रद्धा चेत्याद्यनुच्छ्वसन्।
76. ओङ्कारं प्लावनं ध्यायन्नात्मनः श्रेयसोदयम्।।30।।
कामसिद्धिं तु काम्येषु दन्ताञ्जिरिति चोच्छ्वसेत्।
77. ईशान्यां दिशि मन्त्रान्ते सन्त्यजेत्समिधादिकं।।31।।
आदाय समिधं चाद्भिः प्रोक्ष्याग्नौ प्रक्षिपेत्ततः।
78. कुर्यादिध्माङ्ग होमाख्यं ततो व्यस्ताहुतित्रयम्।।32।।

इति पञ्चमः खण्डः।।5।।

6. उपरिष्टात्तन्त्रम्

अथोपरिष्टात्तन्त्रस्य प्रयोगक्रम उच्यते।
79. हुत्वा व्याहृतिभिस्तत्र समस्तान्ताभिरग्रतः।।1।।
ततः प्रजापते नत्वेत्यृचाहुतिमथाचरन्।
80. होमपञ्चकमेतच्च प्राजापत्यान्तपञ्चकम्।।2।।
निहितां समिधं हुत्वा ततो व्यस्ताहुतित्रयम्।
81. पाहिनो अग्न इत्यादि मन्त्रेण जुहुयात्ततः।।3।।
हुत्वा च पाहिनो विश्वेत्यादिमन्त्रमुदीरयन्।
82. यज्ञं पाहीति मन्त्रेण जुहुयादाहुतिं ततः।।4।।
सर्वं पाहीत्यनेनापि हुत्वा पाहिन इत्यृचा।
83. जुहुयात्पुनरूर्जेति सहरय्येत्यृचा ततः।।5।।

व्यस्ताभिर्जुहुयात्पाहि त्रयोदश समाह्वयाः ।
84. त्रयोदशाहुतीरेता आहुश्शाट्यायनेरिताः।।6।।
प्रत्येकं त्रिस्त्रिरभ्यस्य हुत्वा व्याहृतिभिस्ततः।
85. समस्ताभिश्च जुहुयात्तत आज्ञातमित्यृचा।।7।।
हुत्वा प्रजापतेनेति सदसस्पतिमित्यपि।
86. ऋचं सामेत्यृचा हुत्वा रेतस्याभ्यामिति क्रमात्।।8।।
हुत्वोदुत्तममित्युक्त्वा यत इन्द्रेत्युदीर्य च।
87. वैष्णवीं ऋचमुक्त्वा च सावित्री व्याहृतीरपि।।9।।
यत्कुसीदमितीमां च जुहयादाहुतिं पृथक्।
88. ततः परिस्तृतान्दर्भानादाय स्तरणक्रमात्।।10।।
अक्तं रिहाणा व्यन्त्वेति सकृन्मन्त्रमुदीरयन्।
89. दर्भाग्रमध्यमूलानि क्रमादाज्येऽवधाय च।।11।।
पुनर्द्धिरवधायैवं गृह्णन् सव्येन पाणिना।
90. अपरेणाद्भिरभ्युक्ष्य दर्भमेकं निधाय च।।12।।
इतराः प्रक्षिपेदग्नौ यः पशूनामिति ब्रुवन्।
91. प्रक्षिप्य निहितं दर्भं ततस्तूष्णीं हुताशने।।13।।
शबलीत्यादिना हुत्वा प्रसिञ्चेद्वारि पूर्ववत्।
92. तत्रान्वमँस्थ इत्येवं निर्दिशेद्वारि पूर्ववत्।।14।।
पर्युक्ष्य देवसवितः प्रासावीरिति मन्त्रतः ।
93. वामदेव्यं ततो गायेत्ततस्तस्य ऋचं जपेत्।।15।।
भद्रं कर्णेभिरित्येतामृचं स्वस्तिन इत्यपि ।
94. ब्राह्मणं च त्रयस्त्रिंशदक्षरास्वित्युदीरयन्।।16।।
ब्रह्मणे दक्षिणां दत्वा ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः।
95. आज्यतन्त्रं तथा तन्त्रद्वयमेतदुदीर्यते।।17।।
प्रकृतिश्चरुतन्त्राणां स्थालीपाकक्रियेष्यते।
96. अष्टका पशुतन्त्रं च पशुतन्त्रतयोच्यते।।18।।

नित्याहुतिश्चैव परिचरणप्रकृतिर्मता।

97. उपनीतौ समित्तन्त्र समिदाधानमीरितम्।।19।।

इति षष्ठः खण्डः।।6।।

7. विवाहकारिका

वेदमङ्गैस्सहाधीत्य ब्रह्मचारी व्रतान्वितः।

98. मीमांसाया विचार्यार्थं गुरुणा स्नातकर्मणि।।1।।

विवाहे चाभ्यनुज्ञातस्तस्य गेहान्निवृत्य च।

99. आत्मनः कन्यकायाश्च जन्मर्क्षानुगुणे शुभे।।2।।

कन्यकामुद्वहेत्काले मन्वाद्युक्तगुणान्विते।

100. तत्र पूर्वदिने कृत्वा श्राद्धं वृद्धिनिबन्धनम्।।3।।

विवाहसमयात्पूर्वं कन्यामाबध्य कौतुकम्।

101. कारयित्वा स्वयं चापि कृतकौतुकबन्धनः।।4।।

अलंकृतश्च गन्धाद्यैर्धृतशुक्लाम्बरद्वयम्।

102. यथा विभवमारुह्य यानं प्राप्य वधूगृहम्।।5।।

प्राङ्मुखस्थण्डिलस्थानात्प्रत्यक्तत्रोपविश्य च।

103. प्रक्षाल्य पादावाचम्य प्राणायामं विधाय च।।6।।

कर्मनाम विशेषोक्तिपूर्वं सङ्कल्पयेत्ततः।

104. यत्र कन्याप्रदः कन्यां गृहीत्वा समवस्थितः।।7।।

तत्र गत्वा वरोपेतान् वृणीरन्वरबान्धवाः।

105. चतुर्थ्यन्तं वरस्योक्त्वा नामतद्गोत्रपूर्वकम्।।8।।

कन्यानाम द्वितीयान्तमुक्त्वा तद्गोत्रपूर्वकम्।

106. धर्मप्रजार्थमित्युक्त्वा ते वृणीमह इत्यपि।।9।।

ब्रूयुरेवं वृतो दाता दास्यामीति वदेत्ततः।

107. नाभिप्रदेशे कन्यायास्ततस्ते वरबान्धवाः।।10।।

शिथिलीकृतवस्त्राया जुहुयुः पिष्टवारिणा।

108. कामवेदत इत्याद्यैस्त्रिभिर्मन्त्रैर्यथाक्रमम्।।11।।

अमुमित्यत्र च ब्रूयुर्वरनाम वरस्ततः।
109. पुण्याहं वाचयेत्पश्चात्प्रदाता वरणोक्तिवत्।।12।।
वरस्य कन्यकायाश्च गोत्रनिर्देशपूर्वकम्।
110. निर्दिश्य नामनी तुभ्यमिमामित्यभिधाय च।।13।।
प्रजासहत्वकर्मभ्यः प्रतीत्येवमुदीर्य च।
111. पादयामीति चाप्युक्त्वा वरहस्ते जलं सकृत्।।14।।
दद्याद्दैवेन तीर्थेन भक्तिश्रद्धासमन्वितः।
112. दद्याच्च भूहिरण्यादि वरो निष्क्रम्य पूर्ववत्।।15।।
उपविश्यासने कुर्यादुपलेपादिकं ततः।
113. ब्रह्मोपवेशनात्पश्चात् पूर्वेणाग्निं द्विजोत्तमः।।16।।
कश्चिद्दक्षिणतो गत्वा सोदकुम्भ उदङ्मुखः।
114. प्रावृतो वाग्यतस्तिष्ठेद्यावन्मूर्धावसेचनम्।।17।।
या अकृन्तन्निति स्नातां स्वयमाच्छाद्य वाससा।
115. धारयेदुत्तरीयं च पतिरुत्तरमन्त्रतः।।18।।
आचान्तस्सलिलैः कन्यां गन्धमाल्याद्यलङ्कृताम्।
116. पश्यन्नानीयमानां तां सोम इत्यादिकं जपेत्।।19।।
कन्यका प्रम इत्यादि प्राश्य इति जपेत्स्वयम्।
117. स्वयं सर्वं जपेत्सचेत्तन्मन्त्रोदीरणा क्षमा।।20।।
वरस्य दक्षिणे पार्श्वे ततस्ताम्मातुलादिकः।
118. उदगग्रेषु दर्भेषु प्राङ्मुखीमुपवेशयेत्।।21।।
स्तरणादि ततः कुर्यादूर्ध्वं तन्त्राज्यसंस्कृतेः।
119. शूर्पं लाजान्वितं बर्हिष्याज्यपात्रादिभिस्सह।।22।।
निदध्यात्कन्यकामाता पश्चादग्नेर्दृषत्सुतम्।
120. प्रसेकादि ततः कुर्यात्प्रपदान्तं यथाक्रमम्।।23।।
वधूकरेण संस्पृष्टस्ततो व्यस्ताहुतित्रयम्।
121. ताभिर्व्यस्तसमस्ताभिः कुर्याद्धोमचतुष्टयम्।।24।।

अग्निरेत्विति षड्भिश्च हुत्वा व्याहृतिभिः पुनः।
122. उत्थाय दक्षिणं वध्वाः पाणिं गृह्णन् तया सह।।25।।
तदीयं दक्षिणं पार्श्वं गत्वा पश्चिमदेशतः।
123. स्थित्वोदगग्रदर्भेषु तस्या विकसिताञ्जलिम्।।26।।
रचयित्वा स्वहस्ताभ्यां गृह्णीयाच्च तमञ्जलिम्।
124. शमीपलाशसम्मिश्रान् लाजापच्छूर्पसंयुता।।27।।
पूर्वेणाग्निं वधूमाता तिष्ठेत्प्रत्यङ्मुखी ततः।
125. वरोऽञ्जलिं गृहीत्वैव सव्येनान्येन पाणिना।।28।।
उत्क्षिप्य दक्षिणं तस्याः पादान्तेन दृषत्सुतम्।
126. इममश्मानमित्युक्त्वा वधूमाक्रामयेत्ततः।।29।।
पाणिभ्यां परिगृह्णीयात् पुनर्वध्वञ्जलिं वरः।
127. तत आदाय शूर्पस्थान् लाजानञ्जलिना सकृत्।।30।।
लाजान् शूर्पमुपस्तरणाभिघारणवर्जितम्।
128. वध्वञ्जलौ वधूभ्राता सुहृद्वा कश्चिदावपेत्।।31।।
वधूश्चाञ्जलिविच्छेदमकुर्वाण हुताशने।
129. जुहुयात्सा पतिर्मन्त्रमियन्नारीत्युदीरयेत्।।32।।
ततो गृह्णन् वधूपाणिं तस्याः पश्चिमदेशतः।
130. पुनरुत्तरतो गत्वा कन्यलेति हुताशनम्।।33।।
प्रदक्षिणं परिणयन्वधूमग्रे स्वयं व्रजेत्।
131. मातृब्रह्मोदकानां तु बहिर्भावः प्रदक्षिणे।।34।।
वध्वाः पश्चिमदेशेन गमनादेस्तु कर्मणः।
132. अग्निं प्रदक्षिणं तस्या द्विरावृत्तिः पुनर्भवेत्।।35।।
मध्यमे होममन्त्रस्तु पर्यायेऽर्यमणन्निति।
133. उत्तमे पूषणन्वादि ततो ध्यायन्प्रजापतिम्।।36।।
शूर्पेण प्रक्षिपेत्तूष्णीं लाजानग्नौ तया सह।
134. गृह्णन्नेव वधूपाणिमग्नेः पूर्वोत्तरं दिशि।।37।।

गमयित्वा वधूं तस्याः पुरस्ताच्च स्वयं व्रजेत्।
135. उक्त्वा चैकमिषे विष्णुरित्याद्यं मन्त्रसप्तकम्।।38।।
प्रतिमन्त्रं वधूपादं दक्षिणं क्रमयेत्क्रमात्।
136. सप्तमे च पदे स्थित्वा सखासप्तपदीति ताम्।।39।।
वीक्षमाणो जपेत्पश्यन् द्रष्टुं प्राप्ता सुमङ्गलीः।
137. सुमङ्गलीरिति ब्रूयादपरेणाग्निमौदुकः।।40।।
ब्रह्माग्न्योर्मध्यतो गत्वा पाणिग्राहस्य मूर्धनि।
138. कुम्भस्थवारिणा सिञ्चेत्ततो वध्वाश्च मूर्धनि।।41।।
समञ्जन्त्वित्युदीर्याथ गृभ्णामित्यादिभिर्वरः।
139. उत्तरोत्तरमन्त्रेण पीडयन्नुत्तरोत्तरम्।।42।।
अङ्गुष्ठसहितं तस्या गृह्णीयाद्दक्षिणं करम्।
140. ततस्सप्तपदिस्थानं निवृत्याग्निं प्रदक्षिणम्।।43।।
कुर्वन्पूर्ववदासित्वा पश्चात्तन्त्रं समापयेत्।
141. श्रायन्तीयसमन्ताभ्यां ब्राह्मणाभ्यां तथा तयोः।।44।।
अक्षतारोपणं विप्राः कुर्वन्ति शिरसोस्तयोः।
142. चतुर्थीहोमकरणात् प्रागग्न्यनुगते सति।।45।।
गृह्याग्न्यनुगतोक्तं स्यात् प्रायश्चित्तमतः परम्।
143. ततः प्रागुत्तरामाशान्नीत्वा वह्निं वधूमपि।।46।।
प्रापयेद्द्विजमुख्येभ्यो भुवनं यस्य कस्यचित्।
144. लेखाहोमं च कृत्वैवं यद्वा गच्छेद्वधूगृहात्।।47।।
तत्रानन्तरमायाते सायंकाले हुताशनम्।
145. निधायाच्छादिते देशे उपलेपादिपूर्वकम्।।48।।
प्राग्ग्रीवं लोहितं वह्नेः पश्चादुत्तरलोम च।
146. आस्तीर्यानडुहं चर्म तत्र दर्भासनं विना।।49।।
वाग्यतामुपविश्यैनां कृत्वा परिसमूहनम्।
147. ततो भूमिजपं कृत्वा कुर्याद्ब्रह्मोपवेशनम्।।50।।

नक्षत्राण्युदितानीति प्रोक्ते येनापि केनचित्।

148. स्तरणादिसमस्तान्तं कुर्यादत्रापि पूर्ववत्।।51।।
निधानं नात्र लाजानां कर्त्तव्यं नात्रचाश्मनः।

149. वधूमूर्ध्न्याज्यसम्पातान् स्रुवेणावनयेत्ततः।।52।।
लेखाप्रभृति षड्भिर्हुत्वा गृह्णन्वधूकरम्।

150. अग्निं प्रदक्षिणं नीत्वा तां ध्रुवाद्यौरिति ध्रुवम्।।53।।
ईक्षयेदथ सा स्वीयगोत्रनामोक्तिपूर्वकम्।

151. अभिवाद्य गुरून् सर्वान् वाग्यतो नियमं त्यजेत्।।54।।
ऊर्ध्वतन्त्रं पतिः कृत्वा दद्याद्गां ब्रह्मणे ततः।।

इति सप्तमः खण्डः।।7।।

8. मधुपर्ककारिका

152. मधुपर्कं ततो दद्याद्वरायास्मै वधूप्रदः।
वरेण सार्धमायातां स्तद्बन्धूनपि पूजयेत्।।1।।

153. अर्हणायास्य पुरतः कृत्वादावुपलेपनम्।
ततोदगग्रदर्भेषु प्रदातुः परिचारकाः।।2।।

154. निदध्युर्विष्टरौ दर्भपञ्चविंशतिनिर्मितौ।
पाद्यं सुगन्धपुष्पार्घ्यं वार्याचमनवारिणा।।3।।

155. मधुपर्कं च सम्मिश्रम्मधुनाज्येन वा दधि।
पूजासाधनमन्यच्च तत्र स्रक्चन्दनादिकम्।।4।।

156. ततः प्रतिगृहीतेदमहमित्युत्थितो जपेत्।
अथ त्रिर्वेदितो दाता विष्टराविति विष्टरौ।।5।।

157. आदाय पार्श्वे न्यस्यैकमुदगग्रमथापरम्।
अध्यासीत जपेन्मन्त्रं पूर्वं या ओषधीरिति।।6।।

158. यत इत्यादिना वीक्ष्य पाद्यं त्रिर्वेदितं ततः।
सव्याङ्घ्रिं दक्षिणाङ्घ्रिं च प्रत्येकं सहितावपि।।7।।

159. सव्यमित्यादिभिर्मन्त्रैरवसिञ्चेत्त्रिभिः क्रमात्।

गमयित्वा वधूं तस्याः पुरस्ताच्च स्वयं व्रजेत्।
135. उक्त्वा चैकमिषे विष्णुरित्याद्यं मन्त्रसप्तकम्।।38।।
प्रतिमन्त्रं वधूपादं दक्षिणं क्रमयेत्क्रमात्।
136. सप्तमे च पदे स्थित्वा सखासप्तपदीति ताम्।।39।।
वीक्षमाणो जपेत्पश्यन् द्रष्टुं प्राप्ता सुमङ्गलीः।
137. सुमङ्गलीरिति ब्रूयादपरेणाग्निमौदुकः।।40।।
ब्रह्माग्न्योर्मध्यतो गत्वा पाणिग्राहस्य मूर्धनि।
138. कुम्भस्थवारिणा सिञ्चेत्ततो वध्वाश्च मूर्धनि।।41।।
समञ्जन्त्वित्युदीर्याथ गृभ्णामित्यादिभिर्वरः।
139. उत्तरोत्तरमन्त्रेण पीडयन्नुत्तरोत्तरम्।।42।।
अङ्गुष्ठसहितं तस्या गृह्णीयाद्दक्षिणं करम्।
140. ततस्सप्तपदिस्थानं निवृत्याग्निं प्रदक्षिणम्।।43।।
कुर्वन्पूर्ववदासित्वा पश्चात्तन्त्रं समापयेत्।
141. श्रायन्तीयसमन्ताभ्यां ब्राह्मणाभ्यां तथा तयोः।।44।।
अक्षतारोपणं विप्राः कुर्वन्ति शिरसोस्तयोः।
142. चतुर्थीहोमकरणात् प्रागग्न्यनुगते सति।।45।।
गृह्याग्न्यनुगतोक्तं स्यात् प्रायश्चित्तमतः परम्।
143. ततः प्रागुत्तरामाशान्नीत्वा वह्निं वधूमपि।।46।।
प्रापयेद्द्विजमुख्येभ्यो भुवनं यस्य कस्यचित्।
144. लेखाहोमं च कृत्वैवं यद्वा गच्छेद्वधूगृहात्।।47।।
तत्रानन्तरमायाते सायंकाले हुताशनम्।
145. निधायाच्छादिते देशे उपलेपादिपूर्वकम्।।48।।
प्राग्ग्रीवं लोहितं वह्नेः पश्चादुत्तरलोम च।
146. आस्तीर्यानडुहं चर्म तत्र दर्भासनं विना।।49।।
वाग्यतामुपविश्यैनां कृत्वा परिसमूहनम्।
147. ततो भूमिजपं कृत्वा कुर्याद्ब्रह्मोपवेशनम्।।50।।

नक्षत्राण्युदितानीति प्रोक्ते येनापि केनचित्।

148. स्तरणादिसमस्तान्तं कुर्यादत्रापि पूर्ववत्।।51।।
निधानं नात्र लाजानां कर्त्तव्यं नात्रचाश्मनः।

149. वधूमूर्ध्न्याज्यसम्पातान् स्रुवेणावनयेत्ततः।।52।।
लेखाप्रभृति षड्भिर्हुत्वा गृह्णन्वधूकरम्।

150. अग्निं प्रदक्षिणं नीत्वा तां ध्रुवाद्यौरिति ध्रुवम्।।53।।
ईक्षयेदथ सा स्वीयगोत्रनामोक्तिपूर्वकम्।

151. अभिवाद्य गुरून् सर्वान् वाग्यतो नियमं त्यजेत्।।54।।
ऊर्ध्वतन्त्रं पतिः कृत्वा दद्याद्गां ब्रह्मणे ततः।।

इति सप्तमः खण्डः।।7।।

8. मधुपर्ककारिका

152. मधुपर्कं ततो दद्याद्वरायास्मै वधूप्रदः।
वरेण सार्धमायातां स्तद्बन्धूनपि पूजयेत्।।1।।

153. अर्हणायास्य पुरतः कृत्वादावुपलेपनम्।
ततोदगग्रदर्भेषु प्रदातुः परिचारकाः।।2।।

154. निदध्युर्विष्टरौ दर्भपञ्चविंशतिनिर्मितौ।
पाद्यं सुगन्धपुष्पार्घ्यं वार्याचमनवारिणा।।3।।

155. मधुपर्कं च सम्मिश्रम्मधुनाज्येन वा दधि।
पूजासाधनमन्यच्च तत्र स्रक्चन्दनादिकम्।।4।।

156. ततः प्रतिगृहीतेदमहमित्युत्थितो जपेत्।
अथ त्रिर्वेदितो दाता विष्टराविति विष्टरौ।।5।।

157. आदाय पार्श्वे न्यस्यैकमुदगग्रमथापरम्।
अध्यासीत जपेन्मन्त्रं पूर्वं या ओषधीरिति।।6।।

158. यत इत्यादिना वीक्ष्य पाद्यं त्रिर्वेदितं ततः।
सव्याङ्घ्रिं दक्षिणाङ्घ्रिं च प्रत्येकं सहितावपि।।7।।

159. सव्यमित्यादिभिर्मन्त्रैरवसिञ्चेत्त्रिभिः क्रमात्।

निहिते विष्टरौ पादौ ततो या ओषधीरिति।।8।।

160. निदध्यादुत्तरेणार्घ्यं पूर्ववत् त्रिर्निवेदितम्।
अन्नस्येत्यादिनादाय प्रसिञ्चेदात्मनश्शिरः।।9।।

161. गन्धाद्यैरर्चितः पश्चादादायाचमनोदकम्।
निवेदितं यशोऽसीति तूष्णीमाचम्य तेन च।।10।।

162. यशसो यश इत्युक्त्वा मधुपर्कं च पूर्ववत्।
निवेदितं गृहीत्वा तं मयि धेहीति संयुतान्।।11।।

163. यशसो भक्ष इत्याद्यांस्त्रीन्मन्त्रान्निर्दिशेत्क्रमात्।
त्रिः पिबेन्मधुपर्कस्य किञ्चित्प्रक्षालयन् करम्।।12।।

164. किञ्चित्पीत्वा पुनस्तूष्णीमाचम्याचमनाम्भसा।
दत्वा विप्राय तच्छेषमुपस्थायार्हणेति गाम्।।13।।

165. गौर्गौरिति प्रदाता त्रिः वेदितां मुञ्चगामिति।
अनुमन्त्र्य वरो दातुः नाम्नामुष्येत्यथोत्सृजेत्।।14।।

इति अष्टमः खण्डः।।8।।

9.गृहप्रवेशकारिका

166. तस्यां रात्रावहोरात्रौ द्वयोऽपि ब्रह्मचारिणौ।
एकस्मिन् शयने रात्रौ शयीयातां वधूवरौ।।1।।

167. क्षारादिवर्जयेत्तां तौ भोक्तुमन्नमुपस्थितम्।
हविष्यमभिमृश्यान्नपाशेनेति जपेद्वरः।।2।।

168. असाविति वधूनाम ब्रूयाद्भुक्त्वा ततोदनम्।
वध्वै प्रयच्छेदुच्छिष्टं लेखाहोमादनन्तरम्।।3।।

169. तां वधूं रथमारोप्य सुकिंशुकमिति ब्रुवन्।
वरः स्वभवनं गच्छेन्नयन्नग्निं च केनचित्।।4।।

170. मार्गे च सभये मन्त्रं मा विदन्नित्यमुं जपेत्।
इह गावः प्रजायध्वमिति प्राप्य गृहं जपेत्।।5।।

171. अन्तः प्रविश्य शय्यायां समासीत तया सह।

तां वधूमभिवीक्ष्येह धृतिरित्यादिकं जपेत्।।6।।

इति नवमः खण्डः।।9।।

10. चतुर्थीहोमकारिका

172. चतुर्थेऽहनि पूर्वाह्न उपलेपादिपूर्वकम्।
निधायाग्निं समस्तान्तमुपक्रम्य समूहनम्।।1।।

173. लेखाहोमवदत्रापि कर्म कुर्याद्यथाक्रमम्।
स्रुवेणावनयन्नाज्यबिन्दून्पात्रे जलान्विते।।2।।

174. पञ्चभिर्जुहुयादग्ने प्राय इत्यादिभिस्ततः।
वधूं तेनोदपात्रेण तत आप्लावयेत्स्वयम्।।3।।

175. कृत्वोपरितनं तन्त्रं ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः।।

इति दशमः खण्डः।।10।।

11. गर्भाधानकारिका

रजन्यामनिषिद्धायां मुहूर्तेऽत्र शुभावहे।

176. तस्या उपस्थामालभ्य विष्णुरित्यादि मन्त्रतः।।1।।
गर्भन्धेहीत्यनुस्नातां उपगच्छेत्पतिर्वधूम्।।

इति एकादशः खण्डः।।11।।

12.औपासनकारिका

177. आहृत्य श्रोत्रियागाराद् ब्रह्मचारी हुताशनम्।
अन्त्यां समिधमाधाय समावृत्तेः पुरस्तनीम्।।1।।

178. तमग्निं तद्दिनारभ्य सायमाहुत्युपक्रमम्।
नित्यं परिचरेत्तत्र विवाहञ्च समाचरेत्।।2।।

179. पाणिग्रहणवह्निं वा चतुर्थीरात्र्युपक्रमम्।
यद्वा विवाहरात्र्यादि श्रोत्रियागारतोऽनलम्।।3।।

180. आहृत्य स्थण्डिलं कृत्वा तत्र वह्निं निधाय च।
नित्यं परिचरेद्धोमं स्वयं कर्तुमशक्नुवन्।।4।।

181. अन्येन कारयेद्यद्वा पत्न्या मन्त्र विना कृतम्।

प्रज्वाल्यास्तमयात्पूर्वमग्निमस्तमिते रवौ।।5।।

182. त्रिः प्रक्षाल्योत्तरत्राग्नेर्निदध्यात्तण्डुलादिकम्।
एकां च समिधं पक्वं हविश्चेत्क्षालनं विना।।6।।

183. पश्चादग्नेरथासित्वा सकृत्प्राणान्नियम्य च।
संकल्प्य देवसवितरिति पर्युक्ष्य पूर्ववत्।।7।।

184. निहितां समिधं वह्नौ प्रणवेन निधाय च।
आदाय हविषाङ्गुष्ठपर्वमात्रं तु पाणिना।।8।।

185. अग्निमध्येऽग्नये स्वाहेत्युदीर्य जुहुयात्ततः।
हुत्वाग्नेः प्रागुदग्भागे तूष्णीं ध्यात्वा प्रजापतिम्।।9।।

186. पर्युक्ष्य देवसवितः प्रासावीरिति मन्त्रतः।
गौषूक्तसाम गीत्वाथ विना ब्राह्मणभोजनम्।।10।।

187. वामदेव्यस्य गानादि कुर्यात्प्रातः पुरोदयात्।
औपासनं समिध्यैव जुहुयादुदिते रवौ।।11।।

188. कुर्वीत तत्र सूर्याय स्वाहेति प्रथमाहुतिम्।
आश्वसूक्तं तु गौषूक्तस्थाने गायेद्धुते सति।।12।।

189. पयो यदि हविस्तत्र दधि वा कंसपात्रतः।
चरुस्थाल्याथवा होमः स्रुवेणाज्याहुतिर्यदि।।13।।

इति द्वादशः खण्डः।।12।।

13. अग्न्यनुगतादि प्रायश्चित्तकारिका

190. उक्तयोः कालयोः कर्तुमशक्तं सायमाहुतिम्।
रात्रौ कुर्वीत कृत्स्नायां कृत्स्नेऽह्नि प्रातराहुतिम्।।1।।

191. तत्राप्यकरणे वह्नेस्तत्कालानुगतावपि।
नित्यहोमस्य तन्त्रेण प्राजापत्यान्तपञ्चकम्।।2।।

192. निधायानन्तरे काले कृत्वा चाप्यकृताहुतिम्।
कुर्यात्प्राप्ताहुतिं तावत्कालं चोपवसेत्स्वयम्।।3।।

193. कालद्वयव्यतिक्रान्तावर्वाग्द्वादशवासरात्।

तावत्कालाविनाशे च वह्नेः पूर्वोक्ततन्त्रतः।।4।।

194. पाहित्रयोदशाख्यं तु कुर्याच्छाट्यायनेरिताः।
एतदेवाज्यतन्त्रेण विच्छेदेऽनुगतेऽपि च।।5।।

195. द्वादशाहमुपक्रम्य मासादर्वाक्समाचरेत्।
आहुतीर्यद्यतिक्रान्तास्सर्वाः कर्तुमशक्नुवन्।।6।।

196. भोजनानि द्विजाग्रेभ्यो दद्यात्तावन्ति शक्तितः।
आदधीत पुनर्वह्निं मासादूर्ध्वं यथाविधि।।7।।

197. सहप्रवासे दम्पत्योरगृहीत्वा हुताशनम्।
आरोपितसमिन्नाशे वह्नेस्त्यागेऽपि चेच्छया।।8।।

198. कुर्वीत पुनराधानं श्वादिस्पर्शेऽनलस्य च।
द्वादशाहातिपत्तौ च विधावेतदुदीरितम्।।9।।

इति त्रयोदशः खण्डः।।13।।

14. पुनस्सन्धानकारिका

199. करिष्यन्पुनराधानं हविष्याश्येकवासरम्।
परेद्युः प्रपदं देवकृतस्येत्येवमादि च।।1।।

200. जपेदुपवसन् ग्रामाद्बहिरष्टोत्तरं शतम्।
श्वोभूतेऽन्तर्जले स्थित्वा पुनर्मामित्यृचौ जपेत्।।2।।

201. स्नात्वाग्निं श्रोत्रियागारादाहृत्य स्थण्डिलादिकम्।
इध्माङ्गहोमपर्यन्तं तन्त्रं कृत्वा पुरस्तनम्।।3।।

202. प्रत्येकं त्रिस्त्रिरभ्यस्य व्याहृतीर्जुहुयात्ततः।
पुनर्द्वादशकृत्वास्ताः प्रत्येकं समुदीरयन्।।4।।

203. हुत्वा ताभिस्त्रिरभ्यस्य पुनः कुर्यान्नवाहुतिम्।
कुर्वन्नञ्जलिमुत्थाय ततोऽग्निं दूतमित्यृचम्।।5।।

204. अग्निर्मूर्धेत्यृचमग्निस्तिग्मेनेत्यादिकामपि।
जपेत्ततोऽग्नेरक्षाण इत्येतामुपविश्य च।।6।।

205. जुहुयादग्न आयाहीत्यग्निं व इति चानया।

नमस्ते अग्न इत्युक्त्वा हुत्वोपत्वाग्न इत्यपि ।।7।।

206. सोमँ राजानमित्येतामुक्त्वा च जुहुयात्ततः।
जुहुयादग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति चाहुतिम् ।।8।।

207. कृत्वोपरितनं तन्त्रं कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम्।
नित्याग्निधारणाशक्तावयन्ते योनिरित्यृचा।।9।।

208. समारोप्य समिध्यग्निं यात इत्यथवात्मनि।
निधाय होमकालेषु लौकिकाग्निं समिध्य च।।10।।

209. कुर्वीतोपावरोहेति तत्र प्रत्यवरोहणम्।
अङ्गमन्तरितं कृत्वा प्राजापत्यान्तपञ्चकम्।।11।।

210. नित्यहोमस्य तन्त्रेण कुर्यात्सर्वेषु कर्मसु।
दृष्टार्था चेत्तदङ्गा च कृतार्थं स्थण्डिलादि चेत्।।12।।

211. न तदङ्गक्रियां कुर्यात् प्रायश्चित्तं तु केवलम्।
कुर्यादेतत्क्रमान्यत्वेऽप्यङ्गं न पुनराचरेत्।।13।।

212. कृते कर्मणि यद्यङ्गभ्रेषादि स्मरणं भवेत्।
प्रायश्चित्तं तु कर्तव्यं तस्याङ्गस्य च न क्रियाम्।।14।।

213. प्रधानमकृतं चैतत्पुनस्साङ्गं समाचरेत्।
प्रधानेषु बहुष्वेका कृतौ तत्साङ्गमाचरेत्।।15।।

214. सर्वत्र चाप्यनादेशे प्राजापत्यान्तपञ्चकम्।
नित्यहोमस्य तन्त्रेण प्रायश्चित्तं समाचरेत्।।16।।

215. प्रायश्चित्तनिमित्तस्य गौरवे घृततन्त्रतः।
द्रव्यत्यागात्मकं नित्यं स्वकालेष्वकृतं यदि।।17।।

216. जुहुयादाहुतिं यत्कुसीदमित्यनया तदा।
शाट्यायनेरितं वापि सर्वत्रापि विकल्पते।।18।।

217. प्रायश्चित्तस्य च विधिस्तारतम्या व्यवस्थितः।
प्रायश्चित्तनिमित्तस्याद्यदिप्रागाज्यसंस्कृतेः।।19।।

218. प्रायश्चित्तं तु कर्तव्यमाज्यसंस्कृत्यनन्तरम्।

निमित्तानन्तरं कुर्यादूर्ध्वं यद्याज्यसंस्कृतेः।।20।।

219. तन्त्रमध्ये निमित्तं चेत्तत्तन्त्रमुपजीव्यतु।
प्रायश्चित्तं चरेदन्यत्तन्त्रं कृत्वा बहिर्यदि।।21।।

इति चतुर्दशः खण्डः।।14।।

15. वैश्वदेवकारिका

220. वैश्वदेवं गृही कुर्यात् गृह्याग्नौ पचनेऽथवा।
तत्राहनि रजन्यां च पाकसिद्धेरनन्तरम्।।1।।

221. भूतमित्यन्न कर्त्र्योक्त उच्चैरोमित्युपांशु च।
माक्षाणमस्त इत्युक्त्वा पात्रे कस्मिंश्चिदोदनम्।।2।।

222. निधायोदकसेकादि नित्यहोमवदाचरेत्।
प्रजापतय इत्युक्त्वा स्वाहेति प्रथमाहुतिम्।।3।।

223. विदध्यादग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति चोत्तरे।
तत्र पर्युक्षणान्ते तु कृते भूतबलिं हरेत्।।4।।

इति पञ्चदशः खण्डः।।15।।

16. बलिहरणकारिका

224. मन्त्रास्तत्र नमोन्तास्युः स्मर्तव्या मनसा चरेत्।
प्राक्सँस्थमवसिच्याप उपलिप्ते महीतले।।1।।

225. पृथिव्यै वायव इति प्रजापतय इत्यपि।
प्राक्संस्थं तत्र विश्वेभ्यो देवेभ्य इति च स्मरन्।।2।।

226. निधाय चतुरः पूर्वं परिषिञ्चेद्बलीन् सह।
प्रत्येकमादावन्ते च परिषिञ्चेत्ततः परान्।।3।।

227. अद्भ्य इत्युदकधारदेशे मध्ये तु वेश्मनः।
निदध्यादोषधिवनस्पतिभ्य इति च स्मरन्।।4।।

228. ततो गर्भगृहद्वारि आकाशाय बलिं नयेत्।
रात्रावहनि कामाय मन्यवे च यथाक्रमम्।।5।।

229. बलिद्वयनिधानं स्याच्छय्यावस्करदेशयोः।

प्रथमस्थापितस्थूणा समीपेऽथ बलिं हरेत्।।6।।

230. रक्षोगणेभ्य स्थूणायाः पार्श्वे तस्यास्तु दक्षिणे।
पितृभ्यः पितृतीर्थेन प्राचीनावीतिसंयुतः।।7।।

231. अवशिष्टान्नयेदन्नमद्भिर्मिश्रीकृतं ततः।
अतिथिभ्यः प्रदायान्नं यवागूकणवारिभिः।।8।।

232. स्थूणायाः प्रागुदग्भागे रुद्रायेति बलिं हरेत्।
अस्य रुद्रबलेः पूर्वं किञ्चिच्छाकोदनादिकम्।।9।।

233. हविष्यादहविष्याच्च गृहीत्वा लौकिकेऽनले।
पर्युक्षोभयतः कुर्यादाहुती मन्त्रवर्जिते।।10।।

234. यदा हविष्यमश्नीयात्पक्वं शाकादि केवलम्।
तत्रापि वैश्वदेवादि कुर्यात्तस्यैकदेशतः।।11।।

235. पाकाश्चेदसकृत्सिद्धा रजन्यां यदि वा दिवा।
एकस्मिन् काल एकस्य कुर्याद्धोमबली तदा ।।12।।

236. यदि पाका पृथक्सिद्धा भृत्यानामात्मनोऽपि च।
आत्मार्थादेवकुर्वीत कर्मद्वयमिदं तदा।।13।।

237. एकस्मिन्नेव कर्तव्यमात्मार्थेषु बहुष्वपि।
कुर्वीतोपवासश्चैतदाशौचादिषु नाचरेत्।।14।।

238. अहविष्याशने तस्मात्प्रदायाग्रं द्विजन्मने।
वैश्वदेवादि कुर्वीत हविष्येणैव केनचित्।।15।।

इति षोडशः खण्डः।।16।।

17. स्थालीपाककारिका

239. यदा परिचरेदग्निं स्थालीपाकमनन्तरम्।
पौर्णमासीमुपक्रम्य नित्यं कुर्वीत पर्वसु।।1।।

240. प्रतिपत्पञ्चदश्योर्या सन्धिः पर्वेति तन्मतम्।
न चेन्मध्यन्दिनादूर्ध्वं कुर्यादत्र परेऽहनि।।2।।

241. पञ्चदश्यपराह्णे तु स्नात्वा क्षारादि वर्जितम्।

अश्नीयातां हविष्यान्नं दम्पती नियमान्वितौ।।3।।

242. समिद्दर्भादिमाहृत्य श्वोभूते प्रातराहुतिम्।
हुत्वाग्नेः प्रत्यगासित्वा प्राणायामं विधाय च।।4।।

243. यथार्थं पौर्णमासेन दर्शेनेति विशेषयन्।
स्थालीपाकेन यक्ष्येऽहमिति संकल्प्य पर्वणोः।।5।।

244. ब्रह्मोपवेशनान्तं च कृत्वारभ्य समूहनम्।
दर्भद्वयमयं कुर्चं चरुस्थाल्यां निधाय च।।6।।

245. द्विप्रस्थतण्डुलेभ्यश्च चरुस्थाल्यां ततः सकृत्।
अग्नयेत्विितिमन्त्रेण द्विस्तूष्णीमपि निर्वपेत्।।7।।

246. शिष्टानप्यावपेत् स्थाल्यां त्रिःप्रक्षाल्य प्रदक्षिणम्।
मिश्रयेन्मेक्षणेनाथ श्रपयेद्वारिनिर्गमे।।8।।

247. ययोरिति चरुस्थाल्यां निनयेत्सलिलान्तरम्।
अभिघार्योदगुद्वास्य चरुं प्रत्यभिघार्य च।।9।।

248. आज्यसंस्कारपर्यन्तमाचरेत्स्तरणादिकम्।
अष्टादशसमित्सर्पिश्चर्वाद्यासाद्य बर्हिषि।।10।।

249. इध्माङ्गान्तं प्रसेकादि कृत्वा व्यस्ताहुतीः पुनः।
आज्यं चतुर्गृहीत्वा तु स्रुवेण स्रुच्युदग्दिशि।।11।।

250. जुहुयादग्नये स्वाहेत्येवं सोमाय चाहुतिम्।
स्वाहान्तं दक्षिणे पार्श्वे कुर्याद्ग्रहणपञ्चकम्।।12।।

251. पञ्चावत्याचरेदाज्यमुपस्तीर्य ततः स्रुचि।
मेक्षणेन चरोर्मध्यात्पुरतोऽप्यवदाय च।।13।।

252. पञ्चावत्तीतु पश्चाच्च तत्स्रुवेणाभिघार्य च।
प्रत्याज्यं चाग्नये स्वाहेत्यग्नौ कृत्वा सकृत्स्रुचि।।14।।

253. उपस्तीर्योत्तरादर्धादवदाय सकृच्चरोः।
द्विराज्यमभिघार्याग्नौ प्रागुदग्भाग आहुतिम्।।15।।

254. जुहुयादग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति तत्र च।

द्विरुपस्तरणं कुर्यात्पञ्चावत्ती ततः क्रमात्।।16।।

255. उपरिष्टात्तु तं तन्त्रं परिषेकान्तमाचरेत्।
चरुशेषं ततः किञ्चित् प्राश्याचम्योत्तरत्र तु।।17।।

256. शेषं स्थाल्यां सहोद्धास्य ब्रह्मणे तं प्रदापयेत्।
पक्वोदनानि पूर्णं च पात्रं तस्मै तदीप्सितम्।।18।।

257. अन्यद्वा दक्षिणां दद्यात्तूष्णीमोमित्युदीर्य च।
ब्रह्मा तत्प्रतिगृह्णीयात्कुर्याद्दानादिकं ततः।।19।।

258. अधिकारी प्रयोगे तु समाप्ते भोजयेद्द्विजान्।।

इति सप्तदशः खण्डः।।17।।

18. स्थालीपाककालातीतप्रायश्चित्तम्

उक्तकाले व्यतिक्रान्तदिवसे यत्र कुत्रचित्।

259. आगामि पर्वणः पूर्वं स्थालीपाकं समाचरेत्।।1।।
तत्राप्यकरणे पाहि त्रयोदशसमीरिताः।

260. आहुतीराज्यतन्त्रेण कृत्वा पर्वण्यनन्तरे।।2।।
स्थालीपाकमतीतं च कृत्वा प्राप्तं समाचरेत्।

261. प्रायश्चित्तं विधायैतद्विप्रेभ्यो भोजनानि च।।3।।
दद्यादतीतकर्मार्थं बहुकालव्यतिक्रमे।।

इति अष्टादशः खण्डः।।18।।

19. पुंसवनकारिका

262. आद्यगर्भे निषेकादि दिनषष्टिव्यतिक्रमे।
त्रिंशत्यहस्सु कस्मिंश्चिदनुकूले शुभे दिने।।1।।

263. पुण्ये मुहूर्ते कुर्वीत वध्वाः पुंसवनक्रियाम्।
अस्य कालस्य केनापि हेतुनातिक्रमे सति।।2।।

264. सीमन्तोन्नयनात्पूर्वं कुर्यादेकत्रवासरे।
तस्यापि कर्मणो स्वीयमुख्यकालव्यतिक्रमे।।3।।

265. कालान्तरे विधायाग्रे प्राजापत्यन्तपञ्चकम्।

अकृते कर्मणि कुर्यात्तत्रापि प्रसवात्परम्।।4।।

266. पूर्वोक्तमेकदेशेऽग्नौ प्रायश्चित्तं तु केवलम्।
आशौचापगमे कुर्यात्कर्म यद्यत्कृतं वा भवेत्।।5।।

267. अशौचापगमे कुर्यादकृते न तु कर्मणि।
कुर्याद्गर्भान्तरे कर्तुरन्यस्मिन्कर्म कर्त्तरि।।6।।

268. लौकिके वैदिके चैव वह्नौ कुर्वीत यस्य च।
कृत्स्नाग्निराहितस्तेन कर्तव्यं लौकिकेऽनले।।7।।

269. तत्र पूर्वेद्युराचार्य श्राद्धं वह्निनिबन्धनम्।
परस्मिन् दिवसे प्राप्ते पार्श्वयोः फलसंयुताम्।।8।।

270. परितः स्त्रिः प्रकीर्याधस्सप्तभिस्सप्तभिर्यवैः।
तावद्भिरथवा माषैर्मूल्यत्वेनाभिसंयुतैः।।9।।

271. सर्वत्रेत्यादिनोत्थाय देशेनाच्छादिते च ताम्।
न्यसेद्वधूं कृतस्नातां धृतशुक्लाम्बरद्वयाम्।10।।

272. अलंकृतां च गन्धाद्यैः कृतकौतुकबन्धनम्।
कारयित्वाथ पुण्याहं वाचयित्वा द्विजानपि।।11।।

273. समूहनादि कृत्स्नाग्नौ कुर्यात्सङ्कल्पपूर्वकम्।
ब्रह्मोपवेशनान्ते तु कृते दक्षिणतो वधू।।12।।

274. उपवेश्याथ दर्भेषु प्रपदान्तं समाचरेत्।
वधू कराग्रसंस्पृष्टस्ततो व्यस्ताहुतित्रयम्।।13।।

275. द्विःकृत्वा पश्चिमे देशे तत्र दर्भेष्ववस्थितः।
तदीयं दक्षिणं चांसमात्मदक्षिणपाणिना।।14।।

276. अवमृश्य प्रसार्याथ तं पाणिमुदरं प्रति।
प्रापय्यावमृशन्नेव वस्त्राद्यन्तरवर्जितम्।।15।।

277. अभिमृश्योदरं कृत्स्नं पुमाँसावित्युदीरयन्।
ततोर्ध्वतन्त्रं कृत्वा च ब्रह्मणे दक्षिणां ततः।।16।।

278. ब्रह्मचारी कुमारी वा विप्रा यद्वा व्रतान्विता।

शुङ्गां न्यग्रोधजां प्राचीं दिशं प्रत्येव पेषयेत्।। 17।।

279. स्नातां प्राक्शिरसं वह्नेः पश्चाद्दर्भेषु तां वधूम्।
पतिस्संवेश्य तस्याश्च दक्षिणे नासिकापुटे।। 18।।

280. शुङ्गारसं पुमानग्निरिति सिञ्चेद्वधूरपि।
उदरस्थं रसं कुर्याद्ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः।। 19।।

इति एकोनविंशतिः खण्डः।। 19।।

20. सीमन्तोन्नयनकारिका

281. चतुर्थे मासि षष्ठे वा सीमन्तोन्नयनक्रियाम्।
तस्याः कुर्याच्छुभे काले तत्र नान्दीमुखाह्वयम्।। 1।।

282. श्राद्धं पूर्वेद्युराचार्यश्शुङ्गाधर्मेण संयुताम्।
शाखामुदुम्बरोद्भूतां प्रातराहृत्यपूर्वकम्।। 2।।

283. त्रिश्श्वेतामपि सम्पाद्य शललीं ते उभे अपि।
न्यस्यानाच्छादिते देशे चरुं चामन्त्रदेवतम्।। 3।।

284. सतिलं श्रपयित्वाग्नौ लौकिके स्थापनादिकम्।
पश्चात्स्थानासनं चापि पूर्वकर्मवदाचरेत्।। 4।।

285. आदायौदुम्बरीशाखां तया वध्वा शिरोरुहान्।
अयमूर्जावतो वृक्ष इतिमन्त्रावुदीरयन्।। 5।।

286. सकृदूर्ध्वं पृथक्कुर्याच्छलल्या न्यस्तया ततः।
राकामहमिति द्वाभ्यां पुनस्सीमन्तमुन्नयेत्।। 6।।

287. ततश्चरुं निधायाग्नेरुत्तरत्र घृतोत्तरम्।
तत्रात्मनो मुखच्छायां वीक्षमाणां वधूं पतिः।। 7।।

288. किं पश्यसीति पृष्ट्वा तां प्राजामित्यादि वाचयेत्।
ऊर्ध्वं तन्त्रं पतिः कृत्वा दत्वा च ब्रह्मदक्षिणाम्।। 8।।

289. ब्राह्मणान् भोजयित्वा च तां वधूमाशयेच्चरुम्।।

इति विंशतिः खण्डः।। 20।।

21. सोष्यन्तीहोमकारिका

प्रतिगर्भं तु सञ्जाता यदा प्रसववेदना ।
290. एकदेशं निधायाग्नेरुपलेपादिपूर्वकम्।।1।।
इध्माङ्गाहुतिपर्यन्तं कृत्वारभ्यसमूहनम्।
291. यातिरश्चीति मन्त्राभ्यां जुहुयादाहुतिद्वयम्।।2।।
तत्रासाविति गर्भस्थ नाम गुह्यमुदीर्य तम्।
292. तन्त्रं समापयेत्काले अतीते न समाचरेत्।।3।।
कुर्वीत घृततन्त्रेण प्राजापत्यान्तपञ्चकम्।।

इति एकविंशतिः खण्डः।।21।।

22. जातकर्मकारिका

293. पुत्रं जातं पिता श्रुत्वा स्नात्वा स्वर्णादिशक्तितः।
प्रदाय द्विजमुख्येभ्यो स्नापयित्वा च तं शिशुम्।।1।।
294. प्राङ्नाभिकृन्तनात्स्तन्यः दानाभ्यां व्रीहिभिस्सह।
यवान्यग्रोधशुङ्गावत्पेषयेन्मिश्रितां स्ततः।।2।।
295. अङ्गुष्ठानामिकाभ्यां च आदायाङ्केन धारयन्।
कुमारमियमाज्ञेति मन्त्रेण प्राशयेत्ततः।।3।।
296. निघृष्य मधुसर्पिभ्यां सह स्वर्णं शिलातले।
आदाय तं प्राशयित्वा मेधान्त इति पूर्ववत्।।4।।
297. पुण्याहवाचनं कृत्वा ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः।
जातकर्मादिसंस्कारात्स्वकालेष्वकृता यदि।
298. चौलान्ता आहुतीः पाहित्रयोदशसमाह्वयाः।।5।।
उत्तरोत्तरकर्मभ्यः पूर्वं कृत्वाज्यतन्त्रतः।
299. तत्तत्कर्माकृतं कृत्वा विदध्यादुत्तरोत्तरम्।।6।।
तत्राप्यकरणे कृत्वा प्रायश्चित्तं यथोदितम्।
300. विदध्यादुपनीतेः प्राङ्नवै तत्रापि ते कृताः।।7।।
लोप एव ततो जातो तस्मिन् पक्षे ततः परम्।।

23. चन्द्रदर्शनकारिका

301. पूर्वपक्षद्वयेऽतीते शुक्लपक्षे त्वनन्तरम्।
स्नापयित्वा तृतीयायां प्रातरेव तमर्भकम्।।1।।

302. ग्राहयित्वा च सलिलं अस्तं प्राप्ते दिवाकरे।
देशेनाच्छादिते सूर्यरश्मिषूपरतेषु च।।2।।

303. नभस्थलाकृतिं कृत्वा माता पिष्टेन भूतले।
तृतीयचन्द्रमादित्यं सप्तविंशतिभानि च।।3।।

304. तत्र कृत्वा तदाकारानपूपांस्तत्र तत्र च।
निधाय बालमाच्छाद्य परिशुद्धेन वाससा।।4।।

305. उत्तरीयान्विताचम्य तत्र दर्भेषु तिष्ठतः।
पितुः प्रत्यङ्मुखस्थस्य स्थित्वा दक्षिणतस्सुतम्।।5।।

306. तत्रोदक्छिरसं तस्य पाण्योस्तत्पृष्ठदेशतः।
गत्वोत्तरत्र दर्भेषु तिष्ठेत्प्रत्यङ्मुखी ततः।।6।।

307. यत्ते सुसीम इत्येतदुपस्थाय निशाकरम्।
पित्रोदक्छिरसं पुत्रं प्रयच्छेन्मातृहस्तयोः।।7।।

308. कश्चित्प्रागग्रदर्भेषु विप्रो दक्षिणतस्थितः।
प्रातर्गृहीत तोयेन पूरयेदञ्जलिं पितुः।।8।।

309. पिता यदद इत्युक्त्वा भूमाववनयेज्जलम्।
पुनर्द्भिः पूरितं तूष्णीं अवसिच्य जलं क्षितौ।।9।।

310. चन्द्रलिङ्गानि सामानि गायेत्पार्श्वस्थितैस्सह।
ब्राह्मणान्भोजयित्वा च कुर्यात्पुण्याहवाचनम्।।10।।

इति त्रयोविंशतिः खण्डः।।23।।

24.नामकरणकारिका

311. शिशोर्जन्मदिनादूर्ध्वमतीत्य दशवासरान्।
शतं वा वत्सरं चैके दिवसे नान्तरागते।।1।।

312. नाम कुर्वीत पूर्वेद्युः श्राद्धं नान्दीमुखाह्वयम्।

कृत्वोपविश्य दर्भेषु संकल्प्य स्थण्डिलादिकम्।।2।।

313. कृत्वाग्नेः प्रणयेत्तत्र किञ्चिन्माता ततस्सुतम्।
स्नापयित्वा स्वयं स्नात्वा धृतधौताम्बरद्वयम्।।3।।

314. शुचिना वाससाच्छाद्य पुत्रं दक्षिणतः पितुः।
उपविश्य पितुर्हस्ते तत्रोदक्छिरसं सुतम्।।4।।

315. उदग्देशं ततो गत्वा तस्य पश्चिमदेशतः।
तत्रासीतोदगग्रेषु दर्भेषु प्राङ्मुखी सति।।5।।

316. समूहनादिकं कुर्वन् पुत्रमङ्केन धारयन्।
इध्माङ्गाहुतिपर्यन्तं तन्त्रं कृत्वा पुरस्तनम्।।6।।

317. पुनर्व्याहृतिभिर्हुत्वा कोऽसीत्यादिमुदीरयन्।
बालस्य चक्षुषी श्रोत्रे नासारन्ध्रे च संस्पृशेत्।।7।।

318. असावित्युभयत्रास्य गुह्यनाम चिकीर्षितम्।
ब्रूयाद्युग्माक्षरान्तं चेदयुङ्नाम विधिश्रुतम्।।8।।

319. सुश्रीति पूरयेदेवं कन्यानाम युगक्षरम्।
व्यवहाराय नामान्यत्कृत्वा ते नामनी क्रमात्।।9।।

320. मातुराख्याय तद्धस्ते दत्वोदक्छिरसं सुतम्।
विधायोपरितन्त्रं च पुण्याहं वाचयेद्विजान्।।10।।

321. अभ्यासे मध्यमे बालजन्ममासस्य नामतः।
शिशोर्नामद्वयेनापि कर्मनाम विशेषयेत्।।11।।

322. तद्यथा चैत्र जातस्य परमेश्वरशर्मणः।
कृष्णस्य नामकरण इतिशेषं विशेषयेत्।।12।।

इति चतुर्विंशतिः खण्डः।।24।।

25. विप्रोष्यकारिका

323. विप्रोष्य कार्यवशात्पुनः प्रत्यागतो गृही।
पुत्रान् ज्येष्ठानुपूर्व्याऽङ्के निधायैषां शिरांसि च।।1।।

324. प्रत्येकं परिगृह्याङ्गादङ्गादित्यादिकं जपेत्।

अभिजिघ्रेच्छिरांस्येषां पशूनांत्वेत्युदीरयेत्।।2।।

325. असावित्यत्र पुत्राणां नामानि समुदीरयेत्।
जातकर्मादि चौलान्तान् संस्कारान्मन्त्रवर्जितान्।।3

326. कुमार्या अपि कुर्वीत साङ्गहोमविवर्जितान्।।

इति पञ्चविंशतिः खण्डः।।25।।

26. अन्नप्राशनकारिका

शिशोर्जन्मर्क्षमारभ्य षष्ठे मासि शुभेऽहनि।

327. मुहूर्ते शोभने चान्नप्राशनं तु समाचरेत्।।1।।
तत्र कृत्वा तु पूर्वेद्यु श्राद्धं वृद्धिनिबन्धनम्।

328. स्नापयित्वा शिशुं प्रातरलंकृत्य स्रगादिभिः।।2।।
आबध्य कौतुकं हस्ते कृत्वा पुण्याहवाचनम्।

329. कुमारं स्वाङ्कमारोप्य सर्वव्यञ्जनसंयुतम्।।3।।
घृतदध्यादि संयुक्तं पक्वमन्नं सुसंस्कृतम्।

330. इयमाज्ञेति मेधान्त इति मन्त्रावुदीरयन्।।4।।
अङ्गुष्ठानामिकाग्राभ्यां आदाय प्राशयेच्छिशुम्।

331. जलं च पाययेत्तूष्णीं ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः।।5।।

इति षड्विंशतिः खण्डः।।26।।

27.चौलकारिका

जन्मर्क्षादि तृतीयेऽब्दे चौलकर्मोत्तरायणे।

332. शुक्लपक्षे शुभे काले कुर्यान्मुहूर्तस्सम्मिते।।1।।
विधायाभ्युदयश्राद्धं पूर्वेद्युरपरेऽहनि।

333. कुमारं तमलंकृत्य कृत्वा कौतुकबन्धनम्।।2।।
पुण्याहं वाचयित्वोक्त्वा नामनी चौलकर्मणोः।

334. द्वितीयान्ततृतीयान्ते संस्करिष्येऽहमित्यपि।।3।।
संकल्प्य स्थण्डिलं कृत्वा तदभ्युक्ष्य च वारिणा।

335. प्रणीय तत्र गृह्याग्नेरेकदेशं समिध्य च।।4।।

समूहनादि कृत्वैव कृते ब्रह्मोपवेशने।

336. वक्तारं दक्षिणेनाग्निमायसक्षुरसंयुतम्।।5।।
वृत्वा प्रत्यङ्मुखं दर्भस्तम्बानप्येकविंशतिः।

337. जलं चाग्न्यन्तरेणोष्णमादर्शं चाथवा क्षुरम्।।6।।
ताम्रेण निर्मितं तेन निदध्यादुत्तरत्र तु।

338. निदध्याल्लौकिके वह्नौ सिद्धमन्नं तिलैर्युतम्।।7।।
शकृच्चानडुहं माता पुत्रमङ्केन बिभ्रति।

339. आसीत प्राङ्मुखी भूत्वा पितुरुत्तरतस्ततः।।8।।
स्तरणादि पिता कुर्यात्प्रपदान्तं यथाक्रमम्।

340. कुमारकरसंस्पृष्टः कृत्वा व्यस्ताहुतित्रयम्।।9।।
समस्तान्ताहुतिं कुर्यात्तत्र आयमगादिति।

341. पश्येद्वपनकर्तारं सवितारमनुस्मरन्।।10।।
उष्णेनेत्युष्ण सलिलं पश्येद्वायुमनुस्मरन्।

342. प्राङ्मुखस्य कुमारस्य पृष्ठतः प्राङ्मुखस्थितः।।11।।
मूर्ध्नि दक्षिणतस्तस्य केशानुष्णेन वारिणा।

343. क्लेदयेदाप इत्युक्त्वा विष्णोरित्याद्युदीरयन्।।12।।
प्रेक्ष्यादर्शं क्षुरं यद्वा सप्तदर्भाङ्कुरांस्ततः।

344. ब्रुवन्नोषध इत्याद्य मूर्ध्वाग्रान्तान्पृथक्कृतान्।।13।।
केशैस्संयोजयेदार्द्रैरादर्शेन क्षुरेण वा।

345. स्वधितमैनमित्युक्त्वा केशान् दर्भाग्रसंयुतान्।।14।।
संयोज्य तेन तान्केशान् त्रिःप्रोहेत् प्राग्दिशं प्रति।

346. प्रतिसंमार्जनं मन्त्रं येन पूषेत्युदीरयन्।।15।।
प्रच्छिद्याथ सकृत्तूष्णीमायसेन क्षुरेण वा।

347. केशान् दर्भाग्रसंयुक्तान् शकृद्यानडुहे क्षिपेत्।।16।।
पश्चादुत्तरतश्चैव मूर्ध्नि केशोक्षणादिकम्।

348. कुर्याच्छकृन्निधानान्तं परिगृह्याथ तच्छिरः।।17।।

जपेत्त्रयायुषमिति गत्वा तत उदङ्मुखः।

349. अनुशिष्य च वप्तारमनिधाय शिखां शिरः।।18।।

वपेत्युत्तरतो वह्नेश्शिरो बालस्य वापयेत्।

350. कृत्वोपरितनं तन्त्रं दद्याद्गां ब्रह्मणे ततः।।19।।

ब्राह्मणांश्चाशयेत्केशानरण्ये परिचारकाः।

351. निखनेयुर्निदध्युर्वा दर्भस्तम्बे सगोमयम्।।20।।

इति सप्तविंशतिः खण्डः।।27।।

28. उपनयनकारिका

ब्राह्मणस्योपनयनं गर्भाद्यष्टमवत्सरे।

352. बृहस्पतौ शुभस्थाने स्थिते तल्लग्नयोर्द्वयोः।।1।।

अयने चोत्तरे पूर्वपक्षादेश्च समागमे।

353. गृहस्थ उपवासादि युक्तः पित्रादिनाचरेत्।।2।।

एकादशद्वादशयोः कुर्याद्राजन्यवैश्ययोः।

354. तस्मिन् दोषान्विते काले कुर्याच्छुद्धष्टमादिषु।।3।।

पूर्वं सङ्कल्पयेदुक्त्वा नामनी शिष्यकर्मणोः।

355. द्वितीयान्ततृतीयान्ते संस्करिष्य इति ब्रुवन्।।4।।

वप्त्वोत्तमाङ्गं सुस्नातं चन्दनाद्यैरलंकृतम्।

356. कुमारं कारयित्वा तु वृद्धिश्राद्धं विधाय च।।5।।

बध्वा कौतुकसूत्रेण ततःपुण्याहवाचनम्।

357. कुमारं भोजियित्वा च विधाय स्थण्डिलादिकम्।।6।।

एकदेशं प्रणीयाग्नेस्समिध्यग्निं समूह्य च।

358. ततो भूमिजपं कृत्वा ब्रह्माणमुपवेश्य च।।7।।

धारयेदहतं वास उपवीताजिने अपि।

359. प्रतिमुच्य विना मन्त्रं शिष्यमाचामयेत्ततः।।8।।

प्राङ्मुखं दक्षिणे पार्श्वे सपवित्रकरं ततः।

360. उपविश्योदगग्रेषु दर्भेषु स्तरणादिकम्।।9।।

प्रपदान्तविधिं कृत्वा संस्पृष्टशिष्यपाणिना।
361. व्यस्ताहुतित्रयं कुर्यात् समस्तान्ताहुतीरपि।। 10।।
शिष्यमग्नेव्रतेत्याद्यैः पञ्चभिर्हावयेत्ततः।
362. गमयित्वोत्तरत्रैनं शिष्यमात्माग्निमध्यतः।। 11।।
तत्रोदगग्रदर्भेषु तमावृत्य प्रदक्षिणम्।
363. प्रत्यङ्मुखमवस्थाप्य तस्य चाकोशमञ्जलिम्।।12।।
रचयित्वोदगग्रेषु दर्भेषु प्राङ्मुखस्थितः।
364. उपर्यस्याञ्जलेः कुर्यात्स्वयं चाकोशमञ्जलिम्।। 13।।
अथोदगग्रदर्भेषु कश्चिद्विप्र उदङ्मुखः।
365. स्थित्वा दक्षिणतो ब्रह्मचर्यमित्यादि मन्त्रवित्।। 14।।
आचार्यस्याञ्जलिं तोयैः पूरयेदञ्जलिस्थितैः।
366. प्रेक्षमाणोञ्जलिश्शिष्य आगन्त्रेति जपेद्गुरुः।। 15।।
कुमारं ब्राह्मणो ब्रह्मचर्यमित्यादि वाचयेत्।
367. को नामासीति गुरुणा पृष्टो माणवकस्ततः।। 16।।
नामाभिवादनीयं स्वं जन्मर्क्षविशेषतम्।
368. ब्रूयाद्यद्वा स्वजन्मर्क्षदेवता वाचकाश्रयम्।। 17।।
तद्यथा ज्येष्ठ इन्द्रो वा विष्णुशर्मेत्युदीरयन्।
369. गुरुशिष्याञ्जलौ तोयं क्षारयेत्सोऽपि भूतले।। 18।।
ततश्शिष्याञ्जलिं देवस्यत इत्याद्युदीरयन्।
370. दक्षिणोत्तरहस्ताभ्यां गृहीत्वा तं प्रदक्षिणम्।। 19।।
आवर्त्य प्राङ्मुखं कुर्यात् सूर्यस्येत्यादि मन्त्रतः।
371. तन्नाममन्त्रयोर्ब्रूयात्संबुध्यन्तमसाविति।। 20।।
ततोंऽसं दक्षिणं तस्य पाणिनालभ्य तं करम्।
372. स्पृशन्नेव प्रसार्याथ तिरोधानविवर्जितम्।।21।।
शिष्यस्याभिमृशन्नाभिं प्राणानामिति मन्त्रतः।
373. तस्योदरमुरःकण्ठमन्तकेत्यादिभिः क्रमात्।।22।।

पाणिभ्यां परिगृह्णीयात् तत्तत्स्पर्शेन निर्दिशेत्।
374. अमुमित्यत्र तान्येव ततो दक्षिणपाणिना।।23।।
प्रजापतय इत्युक्त्वा तस्यांसं दक्षिणं स्पृशेत्।
375. सव्येन पाणिना सव्यं देवायत्वेति संस्पृशेत्।।24।।
शिष्यं प्रति ततो ब्रूयाद्ब्रह्मचार्यसाविति।
376. मन्त्रत्रयेऽप्यसौ स्थाने निर्दिशेन्नामपूर्ववत्।।25।।
शिष्यं समिधमाधेहीत्यादिभिः प्रेषयेत्ततः।
377. स च बाढमिति ब्रूयात्प्रतिप्रेष्यन् ततो गुरुः।।26।।
तत्रोपविश्य दर्भेषु शिष्यं मुकुलिताञ्जलिम्।
378. भूमौ सव्येतरं जानुं निधायासीनमग्रतः।।27।।
प्रदक्षिणं मेखलया मौञ्ज्या त्रिपरिवारयेत्।
379. इयं दुरुक्तादित्यादि वाचयेत्प्राङ्मुखं ततः।।28।।
गुरौ स्वासन आसीने तस्य वह्नेश्च मध्यतः।
380. गत्वा दक्षिणतश्शिष्यो गुरौ कृत्वात्मचक्षुषी।।29।।
मनश्च तत्करं वामं स्वीयदक्षिणपाणिना।
381. गृहीत्वाङ्गुष्ठरहितमुदीर्याधीहि भो इति।।30।।
उदगग्रेषु दर्भेषु तस्य पार्श्वेऽथ दक्षिणे।
382. आसीतोदङ्मुखस्तन्त्रमूर्ध्वं प्राग्ब्राह्मणाशनात्।।31।।
कृत्वाचार्य ऋषिच्छन्दो देवतोक्तिपुरस्सरम्।
383. पादशोर्धर्चशस्सर्वां सावित्रीं वाचयेत्ततः।।32।।
एवमृष्यादि निर्दिश्य प्रत्येकं व्याहृतित्रयम्।
384. वाचयेत्प्रणवं चोच्चैर्दण्डं बैल्वादिकं ततः।।33।।
दत्वा सुश्रव इत्यादि वाचयेत्प्रतिगृह्यताम्।
385. शिष्यः पूर्वं परस्ताच्च वह्निं पर्युक्ष्य पूर्ववत्।।34।।
उदीर्याग्नय इत्यग्नावादध्यात्समिधं ततः।
386. अथादित्यमुपस्थाय दण्डहस्तप्रदक्षिणम्।।35।।

वह्निं परीत्य भवति भिक्षां देहीति मातरम्।
387. भिक्षेति विप्रो राजन्यो भवच्छब्दं तु मध्यतः।।36।।
ब्रूयाद्वैश्योन्ततो मात्रा दत्वा स्वस्तीत्यपक्षितौ।
388. निनीयापक्वभिक्षां तु गृहीत्वान्याः सुहृत्स्त्रियः।।37।।
भिक्षेति पूर्ववद्भैक्षं निवेद्यं गुरवे ततः।
389. स्वीकृत्य तदनुज्ञातः कृते ब्राह्मणभोजने।।38।।
इति अष्टाविंशतिः खण्डः।।28।।

29. समिदाधानकारिका

अहश्शेषं नयेत्तिष्ठन्वाग्यतोऽस्तङ्गते रवौ।
390. पर्युक्ष्योभयतः पञ्चसमिधो लौकिकेऽनले।।1।।
हुत्वाग्नय इति व्यस्त समस्तान्ताहुतीरपि।
391. आदध्याद्वर्जयेत्क्षारलवणादि दिनत्रयम्।।2।।
इति एकोनत्रिंशत् खण्डः।।29।।

30. ब्रह्मचर्यानुष्ठानकारिका

वर्तेत गुर्वधीनस्सन्नासमावर्तनाद्बहिः।
392. दण्डहस्तं चरेद्भैक्षं सायं प्रातर्दिने दिने।।1।।
आदध्यात्समिधस्याग्नौ गुरूनप्यभिवादयेत्।
393. नित्यस्नानं च कुर्वीत मेखलादेश्च धारणम्।।2।।
अन्यांश्च विहितान्कुर्यान्निषिद्धान्परिवर्जयेत्।
394. पुरास्तात्कर्म निर्वृत्ते संस्पर्शेच्चितियूपयोः।।3।।
कर्णक्रोशे निषिद्धार्थेष्विन्द्रियाणां प्रवर्तने।
395. अक्ष्णोश्च वेपने स्वापे संध्ययोश्चाज्यतन्त्रतः।।4।।
यद्वा पर्युक्ष्य जुहुयाद्रेतस्याभ्यां घृताहुती।
396. समिधावाज्यलिप्ते वा जपेद्वा पापलाघवे।।5।।
इति त्रिंशत् खण्डः।।30।।

31. अनुप्रवचनकारिका

तं सावित्रीमृचं तस्य साम चाध्यापयेद्गुरुः।

397. नीत्वा कालं यथाश्रद्धमध्यायोपक्रिया अपि॥1॥
कारयित्वा त्वमुं शिष्यमुपनीतं विसर्जयेत्।

398. तत्रोपनयनं सर्वकर्मार्थं सव्रतान्तरम्॥2॥
विनैवोपकरोतीति सावित्र्याध्ययनं प्रति।

399. व्रतमित्युच्यते तेन रूपेणास्य विसर्जनम्॥3॥
गोदानव्रातिकादित्यमहानाम्नी व्रतानि तु।

400. देवव्रतानि चत्वारि तत्रादित्यव्रतं यदि॥4॥
न कुर्यात्पाक्षिकत्वेन कुर्वीतोपनिषद्व्रतम्।

401. तान्युत्तरायणे शुक्लपक्षे पुण्ये च वासरे॥5॥
कुर्यात्तेषां विसर्गाण्यप्युपनीती विसर्जनम्।

402. कुर्वन्पूर्वदिने शिष्यं हविष्यान्नं दिवा सकृत्॥6॥
भोजयित्वोदयात्पूर्वं गुरुश्शिष्यसमन्वितः।

403. प्राङ्वोदङ्वा बहिर्ग्रामान्निर्गत्याद्भिः कमण्डलुम्॥7॥
पूरयित्वा गृहीत्वान्ते गोमयेनोपलेपनम्।

404. प्रागुदक्प्रवणे देशे कृत्वा तत्र कमण्डलुम्॥8॥
कुशैः प्रदक्षिणं कुर्यादुदिते तेन वारिणा।

405. शिष्येण सार्धमाचम्य दर्भमुष्टिकरो गुरुः॥9॥
अन्वारब्धश्च शिष्येण वामदेव्येन मण्डलम्।

406. प्रह्वः प्रविश्य शिष्येण सार्धमाचम्य मण्डले॥10॥
एकदेशं निधायाग्नेरुपलेपादिपूर्वकम्।

407. इध्माज्ञाहुतिपर्यन्तं तन्त्रं कृत्वा पुरस्तनम्॥11॥
शिष्येण स्पृष्ट इन्द्राय बृहद्भानव इत्यमुम्।

408. मन्त्रं स्वाहान्तमुच्चार्य पश्चिमोत्तरदेशतः॥12॥

आरभ्य वह्नावाज्येन दिशं प्राग्दक्षिणां प्रति।

409. घृतं सन्ततमाघार्य दिशं दक्षिणपश्चिमाम्।।13।।
उपक्रम्येवमेवाग्नौ दिशं प्रागुत्तरां प्रति।

410. प्रजापतय इत्युक्त्वा ततो मनव इत्यपि।।14।।
स्वाहेत्याघार्य हुत्वाज्यभागाख्यं चाहुतिद्वयम्।

411. अग्निं सोमस्तथा रुद्र इन्द्रो ब्रह्मा प्रजापतिः।।15।।
देवाश्च ऋषयश्चर्चो यजुस्सामान्यनन्तरम्।

412. श्रद्धा प्रज्ञा च मेधा च सावित्री सदसस्पतिः।।16।।
ततोऽनुमत इत्यादीनुद्दिश्य पृथक् पृथक्।

413. एतैश्शब्दैश्चतुर्थ्यन्तैस्स्वाहान्तैर्जुहुयात्क्रमात्।।17।।
अथोपरितनं तन्त्रं कृत्वासीनः कुशासने।

414. दर्भमुष्टिं च हस्तेन गृह्णन् प्रणवपूर्वकम्।।18।।
व्याहृतीरपि सावित्रीं तस्यास्साम च मानसाम्।

415. गुरुश्चतुरनुद्रुत्य सोमँ राजानमित्यतः।।19।।
ब्रह्मजज्ञानमित्येते पञ्चभिर्निधनैर्युतम्।

416. वामदेव्यं च वैरूपं गायेद्व्राचोव्रते अपि।।20।।
भद्रश्रेयश्च गीत्वाथ गायत्रं श्रावयेद्गुरुः।

417. सप्तहं सामगीत्वाथ महासामानि पञ्च च।।21।।
कल्माषवामदेव्यं च पूर्ववत् स्थण्डिलादिकम्।

418. विधायेध्माङ्गहोमान्तं संस्पृष्टशिशष्यपाणिना।।22।।
समस्तान्ताहुतीर्हुत्वा ततस्तँ हावयेद्गुरुः।

419. शिष्यमग्ने व्रतपते व्रतानीत्यादि पञ्चभिः।।23।।
मन्त्रस्थं व्रतशब्दस्य व्रतनाम्ना विशेषतः।

420. क्रियापदानि संयोज्य लिङ्गमन्त्रेषु निर्दिशेत्।।24।।
ऋचं सामेति सदसस्पतिमित्याहुतिद्वयम्।

421. हुत्वोर्ध्वं तन्त्रं कृत्वा च प्रदाय ब्रह्मदक्षिणाम्।।25।।

वामदेव्येन निष्क्रम्य मण्डलाद्भोजयेद् द्विजान्।
422. अग्निकार्यं च कुर्वीत तस्मिन्नेव हविर्भुजि।।26।।
इति एकत्रिंशत् खण्डः।।31।।

32. गोदानव्रतकारिका

गृहमागत्य गोदानमुपाकुर्याद्व्रतं ततः।
423. सलोमं वापयेच्छिष्य तत्र चौलस्य तन्त्रतः।।1।।
मूर्धानं परिगृह्यात्र जपेन्मन्त्रक्रियापि च।
424. चरोर्निधानमित्येतत् त्रितयं विनिवर्तते।।2।।
अजं केशखनित्रा च दद्याद्गां ब्रह्मदक्षिणाम्।
425. अथोपनीतिवत्कुर्याद्भैक्षान्तं स्थण्डिलादिकम्।।3।।
न तत्रालङ्क्रिया नापि नववस्त्रस्य धारणम्।
426. मेखलासूत्रं दण्डं च त्यक्त्वा निर्धारयेत्ततः।।4।।
भैक्षान्तं कर्मणां तेन कुर्यादन्यद्व्रतेष्वपि।
427. गोदानव्रतमित्यत्र वक्तव्यं शिष्यहावने।।5।।
ऋक्संहितांतमेकाब्दं गोदानव्रतचारिणम्।
428. आचार्योध्यापयेदग्न आयाहीत्यादृगादिकम्।।6।।
एषस्यान्त्यादृगन्ता च ततस्तत्सामसंहिताम्।
429. अध्याप्याथोपनयनव्रतस्यैव विसर्जनम्।।7।।
गोदानस्य चरेत्तन्त्रं न गृह्णीयात्कमण्डलुम्।
430. नावश्यमुदयात्पूर्वं बहिर्निर्गमनादिकम्।।8।।
प्रवेशनिर्गमौ नात्र वामदेव्येन मण्डलम्।
431. सामानि पञ्चनिधनवामदेव्यानि तानि च।।9।।
श्रेयान्तानि न गेयानि सप्तहोपक्रमान्यपि।
432. कल्माषान्तानि गायत्रस्थाने तं श्रावयेद्गुरुः।।10।।
आग्नेयान्यैन्द्रपर्वाणि पावमानानि च क्रमात्।
433. यद्वा पर्वाद्यसामानि श्रावयेदन्तिमानि च।।11।।

सोमँ राजानमित्येतदित एत उदित्यपि।
434. सपूर्व्य इत्यभित्रिपृ सामानि श्रावयेत्ततः।।12।।
गोदानव्रतमित्यूहं कुर्यादत्रापि हावने।
435. अथोपनीतिवत्कुर्याद्व्रातिकोपक्रियां ततः।।13।।
व्रातिकव्रतमित्यूहः कार्यो मन्त्रेषु पञ्चसु।
436. संवत्सरं तमाचार्यो व्रातिकव्रतचारिणम्।।14।।
इन्द्रज्येष्ठन्न इत्याद्य शिष्यमध्याप्य संहिताम्।
437. सुप्रप्राणा इहस्तेति परांकाष्ठासमन्विताम्।।15।।
छन्दसाम च यद्याव (इत्यादीर्वाणि) पूर्णे संवत्सरे सति।
438. तस्योपनयनस्यैव व्रातिकस्य विसर्जनम्।।16।।
कुर्यान्न श्रावणात्पूर्वं होमं तन्त्रं समाचरेत्।
439. गायत्रश्रावणस्थाने अर्कद्वन्द्वव्रतानि तम्।।17।।
श्रावयेत्पर्वणामाद्यसामान्यं तानि चाथवा।
440. सोमँ राजानमित्यादीन्यपि गोदानवत्ततः।।18।।
श्रावयेद्व्रातिकोक्ता च व्रतशब्दं विशेषयेत्।।

इति द्वात्रिंशत् खण्डः।।32।।

33. आदित्यव्रतकारिका

441. उपाकुर्यादथादित्यव्रतमित्युपनीतिवत्।
तत्रादित्यव्रतमिति ब्रूयाच्छिष्यस्य वाचने।।1।।
442. नीलोक्तवस्त्रमकृतस्नानं नीलोपवीतिनम्।
तमनन्तर्हितादित्यमेकाब्दं तद्व्रतान्वितम्।।2।।
443. शिष्यमृक्संहिता अग्नआयूँषित्याद्युपक्रमम्।
अध्याप्य शोचिष्केशं विचक्षणेत्यन्तसंयुताम्।।3।।
444. शुक्रियाणि च सामानि तद्व्रतस्य विसर्जनम्।
व्रातिकस्यैव कुर्वीत पूर्णे संवत्सरे सति।।4।।
445. तत्र श्रवणकाले च श्रावयेच्छुक्रियाणि तु।

आदित्यव्रतमित्येतत्कुर्यान्मन्त्रेषु पूर्ववत्।।5।।

इति त्रयस्त्रिंशत् खण्डः।।33।।

34. महानाम्नीव्रतकारिका

446. माहानाम्निकसंज्ञं च यथोपनयनव्रतम्।।
उपाकुर्युर्महानाम्निव्रतमित्यत्र पूर्ववत्।।1।।

447. ब्रूयात्पञ्चसु मन्त्रेषु त्रीणि वर्षाणि तच्चरेत्।
एकं वा यदि वा शक्तर्योधीताः पित्रादिभिस्त्रिभिः।।2।।

448. व्रतकाले च तं कृष्णवसनं कृष्णभोजनम्।
धर्मैश्चान्यैः निदानोक्तैः युक्तं पाणौ धृतोदकम्।।3।।

449. शक्वरीः पाणिना गृह्णन् जलमध्यापयेद्गुरुः।
तत्रैकस्सहितौ द्वौ वा गायेतान्नततोऽधिकाः।।3।।

450. एकैकस्मिन् दिने पूर्वमृचमुक्त्वा सकृद्गुरुः।
शिष्येण सह तामेव सकृद्ब्रूयात्ततः सकृत्।।4।।

451. सपुरीषपदं साम गीत्वा तेन समं पुनः।
तद्गीत्वा तमृचं प्राग्वत्पश्चाद्यं वाचयेत् सकृत्।।5।।

452. पुनर्नावर्तयेदेकदिनेऽब्दे पूरिते सति।
व्रातकस्यैव कुर्वीत तद्व्रतस्य विसर्जनम्।।6।।

453. शिष्यः पूर्वदिनं नाश्नन्नववस्त्रेण चक्षुषी।
परिणद्धा पराह्नेऽसौ रात्रावासीत वाग्यतः।।7।।

454. श्रेयः पर्यन्त भागानां गुरुः कृत्वा परेऽहनि।
युक्तरुक्ममपाम्पूर्णकंसपात्रं निधाय च।।8।।

455. वत्सं सन्निहितं कृत्वा जलं हस्तेन धारयेत्।
वारिहस्तं तमाचार्यः पूर्ववच्छ्रावयेदृचम्।।9।।

456. पुरीषपदसंज्ञानि प्रतिस्तोत्रं समीरयन्।
साम च श्रावयित्वा तं पूर्ववच्छ्रावयेदृचम्।।10।।

457. उपाकरणवत्कुर्यात् व्रतशब्दो विशेषणम्।

वामदेव्यस्य गानान्ते कृते वासो विवेष्टनम्॥11॥

458. उन्मुच्य वीक्षयेच्छिष्यमपोभिव्यख्यमित्यपः।
ज्योतिरभिव्यख्यमिति मन्त्रेण वीक्षयेत्॥12॥

459. वत्सं पशूनभिव्यख्यमित्युदीर्य दिवाकरम्।
सुरभिव्यख्यमित्युक्त्वा शिष्ये वाङ्गियमं ततः॥13॥

460. उत्सृज्य वत्समुष्णीष वस्त्रं गां रुक्मसंयुताम्।
कंसपात्रं च गुरवे दद्याद्विप्रांश्च भोजयेत्॥14॥

इति चतुस्त्रिंशत् खण्डः॥34॥

35. उपनिषद्व्रतकारिका

461. उपाकुर्यादुपनिषद्व्रतं चाप्युपनीतिवत्।
कुर्यान्मन्त्रोहमन्त्रापि तमेकाब्दं व्रतान्वितम्॥1॥

462. अध्याप्य देवसवित इत्युपक्रम्यसंयुताम्।
मयि सन्त्विति चान्ते तु युतां पूर्णे तु वत्सरे॥2॥

463. व्रातिकस्यैव कुर्वीत विदधीत विसर्जनम्।
श्रावयेद्व्रतकालोक्तं कृत्स्नं न यदि शक्नुयात्॥3

464. शिष्यं श्रावयितुं देवसवितः प्रसवादिकम्।
वाक्यमोमित्यसावेति यो हवा इति च क्रमात्॥4

465. पर्वणामाद्यवाक्यानि श्रावयेदन्तिमानि तु।
सोमँराजानमित्यादीन्यपि गोदानवत्ततः॥5॥

466. पूर्ववद्व्रतशब्दं च व्रतनाम्ना विशेषयेत्।
तत्तद्व्रतोक्तकालेषु तत्तद्दानसमापयेत्॥6॥

467. व्रतमुत्कर्षयेद्यद्वा कृत्वा तत्तद्विसर्जनम्।
शेषमध्यापयेच्छिष्यं तानि केनापि हेतुना॥7॥

468. व्रतानि स्वेषु कालेषु यदि कर्तुं न शक्नुयात्।
व्रतानुष्ठानरहितं कृत्वाध्यापनमग्रतः॥8॥

469. प्राक्समावर्तनात्कृत्वा शाट्यायनसमीरिताः।

आहुतीराज्यतन्त्रेण कुर्यात्तानि व्रतान्यपि।।9।।

470. तत्रापि करणाशक्तौ प्रायश्चित्तमुदीरितम्।
कुर्वीत केवलं लोपस्यात्समावर्तनात्परम्।।10।।

471. अथार्थज्ञानपर्यन्तः साङ्गवेदमधीत्य सः।
आचार्यायेप्सितं चार्थं दत्वास्यानुज्ञयैव वा।।11।।

472. समावर्तेत तद्गेहात्काले ज्योतिषिकेरिते।
शिष्यः पूर्वदिने कृत्वा वृद्धिश्राद्धं परेऽहनि।।12।।

473. प्रावृते प्राङ्मुखो भूत्वा प्राग्भागे गुरुवेश्मनि।
समासीतोदगग्रेषु तस्य दक्षिणतो गुरुः।।13।।

474. प्रागग्रेषु समासीत दर्भेषु प्राङ्मुखं ततः।
तापयित्वाग्निना तोयं युक्तं व्रीहियवादिभिः।।14।।

475. चन्दनाद्यैश्च तत्पात्रे कस्मिंश्चिदवनीय च।
शीताभिरद्भिस्संयोज्य पात्रं तत्कश्चिदाहरेत्।।15।।

476. ततः शिष्याञ्जलिं विप्रः कश्चिद्दक्षिणतः स्थितः।
पूरयेत्तेन तोयेन भूमौ शिष्यस्तमञ्जलिम्।।16।।

477. ये अप्स्वित्यवनीयेन गृहीत्वा ब्राह्मणाज्जलम्।
यदपामिति मन्त्रेण भूमाववनयेत्पुनः।।17।।

478. एवमेव पुनस्तूष्णीमवनीय जलं क्षितौ।
यो रोचनस्तमित्यादि मन्त्रेणात्माभिषेचनम्।।18।।

479. कुर्यात्तद्धारिणा येन स्त्रियमित्यादिनापि च।
तूष्णीमपि गुरुर्देव कुर्याच्छिष्याभिषेचनम्।।19।।

480. तेन मामिति चात्रासौ तेनेममिति निर्दिशेत्।
धृतान्यवस्त्रयुगलस्तत आचम्य चोदकम्।।20।।

481. उदगग्रेषु दर्भेषु स्थित्वा शिष्यः कृताञ्जलिः।
उद्यन्नित्यादिभिर्मन्त्रैरुपतिष्ठेत भास्करम्।।21।।

482. अन्तेषु चक्षुरित्यादि प्रतिमन्त्रमुदीरयेत्।

उक्त्वोदुत्तममित्याद्यामवमुच्याथ मेखलाम्।।22।।

483. भुक्त्वा शिखां निधायान्यात्केशश्मश्रूणि वापयेत्।
स्नात्वा विभूषितो वस्त्रं युगलं धारयेन्नवम्।।23।।

484. श्रीरसीत्यादिनामुच्य स्रजं शिरसि पादयोः।
अमुच्योपानहौ नेत्याविती दण्डं च वैणवम्।।24।।

485. गन्धर्वोसीत्युपादाय गत्वाचार्यस्य चान्तिकम्।
पश्येत्परिषदं यक्षमिवेति च्छत्रसंयुतम्।।25।।

486. उपविश्योदगग्रेषु दर्भेषु गुरुसन्निधौ।
मुख्यानोष्ठापिधानेति प्राणान् संस्पृश्य पाणिना।।26

487. वनस्पत इति ब्रूयात् गोयुक्तं संस्पृशेद्रथम्।
आस्थातेत्यादिमारुह्य रथं प्राचीं दिशं प्रति।।27।।

488. गत्वा किञ्चिदुदीचीं वा प्रत्यागच्छेत्प्रदक्षिणम्।
रथमावर्तयेदर्घ्यमस्मै दद्याद्गुरुर्न वा।।28।।

489. तदा प्रभृति कुर्वीत धर्माः स्नानादिचोदिताः।।

इति पञ्चत्रिंशत् खण्डः।।35।।

36. गोवृद्धिकारिका

यः कामयेत गोवृद्धिमिमाम इति मन्त्रतः।

490. निर्गमय्य सगाः प्रातः सायं प्रत्यागता गृहम्।।1।।
इमामधुमतीर्मह्यमितीक्षेतां फलोदयात्।

491. यद्वा जनिष्यमाणानां वत्सानां योग्रतोजनि।।2।।
एतस्मिन् वत्सरे वत्सः तस्य मातुः प्रलेहनात्।

492. पूर्वं ललाटमुल्लिह्य निगिरेत्तद्भवामिति।।3।।
तस्मिन् संवत्सरेऽन्येषां येषां प्रसवसम्भवा।

493. वत्सानां तेषु जातेषु सायमाहुत्यनन्तरम्।।4।।
गोष्ठे संग्रहणेत्युक्त्वा प्रजापतय इत्यपि।

494. स्वाहान्तमाज्यतन्त्रेण जुहुयादाहुतिद्वयम्।।5।।

यद्वा भुवनमित्युक्त्वा कृतो स्त्रीपुंसवत्सयोः।
495. कुर्यात्स्वधितेनाच्छेदं पूर्वं पुंसस्त्रियास्ततः।।6।।
इतरेषां च कर्णाग्रे छित्वा किञ्चिदमन्त्रकम्।
496. लोहितेनेति मन्त्रेण कुर्यात्सर्वानुमन्त्रिणम्।।7।।
रज्जुं गोबन्धनीं गोषु निर्गतासु प्रसारिताम्।
497. यद्वानुमन्त्रयेतेयं तन्तीत्याफललाभता।।8।।
इति षड्त्रिंशत् खण्डः।।36।।

37. सर्पबलिकारिका

श्रावण्यां पौर्णमास्यां तु प्रातराहुत्यनन्तरम्।
498. कुर्यात्सर्पबलिं पूर्वं पूर्वाह्णात्परतो यदि।।1।।
यजनीये कृता त्वैतत् स्थालीपाकं समाचरेत्।
499. गृह्याग्नौ भर्जयेत्पूर्वं संकल्याक्षततण्डुलान्।।2।।
तेषामर्धं निधायाथ सक्तून्कृत्वैतरानपि।
500. शूर्पेणानोप्य तच्छूर्पमुत्तरेण हुताशनम्।।3।।
दर्भेषु सादयेद्दर्वीं पात्रं च जलपूरितम्।
501. दर्भस्तम्बं च तत्रान्यत्पात्रं च जलवर्जितम्।।4।।
ततो दक्षिणतो वह्नेर्गत्वा तत्रोवपिश्य च।
502. पश्चिमप्रवणे वह्नेः पुरो देशे पदद्वयम्।।5।।
अतीत्य स्थण्डिलं कृत्वा वह्नेः किञ्चित्प्रणीय च।
503. प्रणीताग्नेश्चतुर्दिक्षु प्रागारभ्य प्रदक्षिणम्।।6।।
अतीत्य पदमेकैकं गोमयेनोपलिप्य च।
504. उपविश्य प्रणीताग्नेर्देशे दक्षिणपश्चिमे।।7।।
गृहीत्वा जलपात्रे च किञ्चित्पात्रान्तरे जलम्।
505. तस्मादर्धं गृहीत्वा च जलं दक्षिणपाणिना।।8।।
तं पाणिं बलिदेवस्य दक्षिणस्यानलस्य च।
506. प्रसार्य मध्यतः पूर्वमुपलिप्ते जलं नयेत्।।9।।

सक्तुमुष्टिं सकृद्दर्व्या गृहीत्वा तत्र पूर्ववत्।
507. यः प्राच्यामिति मन्त्रेण निदधीत बलिं ततः।।10।।
अवनीयावशिष्टं च जलपात्रान्तराश्रितम्।
508. हस्तप्रक्षालनं कृत्वा सतिलग्रहणादिकम्।।11।।
करक्षालनपर्यन्तं तिसृष्वन्यासु दिक्ष्वपि।
509. कुर्यात्प्रदक्षिणं देशे तत्रासित्वैव पूर्ववत्।।12।।
मन्त्रान्ब्रूयात्तथालिङ्गमुदग्देशे बलिं नयेत्।
510. पश्चिमस्योपलिप्तस्य देशस्याग्नेश्च मध्यतः।।13।।
नयेत्प्रसारयेत्पाणिं शिष्टान् सक्तून् हुताशने।
511. शूर्पेणाप्यपरस्याग्नेः पार्श्वमागत्य तत्र तु।।14।।
पश्चात्प्राङ्मुख आसित्वा पाणी न्यञ्चौ निधाय च।
512. नमः पृथिव्या इत्यादि जपं कुर्याद्यथोत्थितः।।15।।
दर्भस्तम्बमुपस्थाय सोमो राजेति मन्त्रतः।
513. याँ सन्धामिति मन्त्रस्थान् संस्मरन् प्रणमेदहीन्।।16।।
अथादाय प्रणीताग्निं तण्डुलान्निहतानपि।
514. प्राङ्वोदङ्वा बहिर्ग्रामान्निर्गत्याचम्य चोदकम्।।17।।
उपविश्य शुचौ देशे उपलेपादिपूर्वकम्।
515. निधायाग्निं हयेराक इत्याद्या निर्दिशनृचः।।18।।
चतस्रश्चतुरो होमं नित्यहोमस्य तन्त्रतः।
516. आत्तयाञ्जलिना कुर्यात्तण्डुलेभ्यः सकृत्सकृत्।।19।।
पश्चादग्नेर्दिशं प्राचीमुत्क्रम्याष्टौ दिशं प्रति।
517. तत्रैवादि मुखं स्थित्वा प्रागारभ्य प्रदक्षिणम्।।20।।
त्रिस्त्रिर्जपेद्वसुवन एधीत्यूर्ध्वं निरीक्ष्य च।
518. जपेत्तिर्यक्च वीक्ष्यैव स्ववेश्मानन्यमानसः।।21।।
प्रत्यागत्य गृहीताग्निमवशिष्टांश्च तण्डुलान्।
519. अग्निं सुरक्षितं कृत्वा प्राचीं दक्षिणतस्ततः।।22।।

संस्कृत्य भर्जनेनैव श्वोभूतेऽक्षततण्डुलान्।

520. सक्तून्कृत्वा नवे पात्रे तान्निधाय सुरक्षितान्।।23।।
रजनीं तामुपक्रम्य सायमाहुत्यनन्तरम्।

521. सक्तुभ्यः किञ्चिदादाय शूर्पे सर्वासु रात्रिषु।।24।।
शूर्पस्योदङ्निधानादि शूर्पेणाचमनावधि।

522. कुर्वीत मार्गशीर्ष्याः प्राक् पौर्णमस्यास्ततोऽन्तिके।।25
बलौ हृत्यत पुण्याहं वाचयित्वाशयेद्विजान्।।

38. सर्पबलिउत्सर्जनकारिका

523. मासे प्रोष्ठपदे हस्ते पूर्वस्मिन् द्वयसम्भवे।
विदधीरन्नुपाकर्म गुरुशिष्यसमन्वितः।।1।।

524. न पूर्वाह्नदिने तत्र भुक्त्वा पूर्वदिने सकृत्।
गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दध्याज्यं च परेऽहनि।।2।।

525. सावित्रीमीरयन्गन्धद्वार इत्यादिकामपि।
आप्यायस्व दधिक्राव्ण इत्यृचौ च यथाक्रमम्।।3।।

526. उक्त्वा सम्मिश्रयेच्छुक्रमसि ज्योतिरसीति च।
ततः कुशोदकं दद्याद्देवस्यत्वेति मन्त्रतः।।4।।

527. हृष्यन्तोऽथ तिलां दर्भां दूर्वां तैलाक्षतानपि।
सञ्चूर्णितमपामार्गहरिद्रामलकान् पृथक्।।5।।

528. पात्राणि पञ्चगव्यं च पुष्पमूलफलानि च।
गन्धोपवीत धूपादि गृहीत्वा सहिता नदीम्।।6।।

529. अभिगत्वा तटाकादि सकृत्कृत्वावगाहनम्।
आचम्य पञ्चगव्यं च प्राश्याचम्य पुनः क्रमात्।।7।।

530. गायत्रीमष्टसंख्याकं जपेयुर्गुरुणा युतः।
अवगाहनमारभ्य द्विः कृत्वाचमनावधि।।8।।

531. स्नात्वा च नित्यकर्माणि कुर्युस्सर्वे ततो गुरुः।
शिष्यैस्सहाद्भिः प्रक्षाल्य तीर्थमर्कदळानि च।।9।।

532. सङ्कल्प्योत्सर्जनं कर्म करिष्यामीत्युदीरयन्।
सप्तपात्राणि दर्भेषु भागे तीर्थस्य पश्चिमे।।10।।

533. उदगग्राण्युदक्सँस्थान्युत्तानानि निधाय च।
विश्वामित्रादिसप्तर्षीन्बुध्या पिण्डेषु सप्तभिः।।11।।

534. विश्वामित्रो जमदग्निर्भरद्वाजोऽथ गौतमः।
अत्रिर्वसिष्ठस्सप्तैते कश्यपा ऋषयःस्मृताः।।12।।

535. पांसुपिण्डैरुदक्संस्थमेकां पङ्क्तिं प्रकल्पयेत्।
एवं तस्याः पुरस्ताच्च राणायन्यादिबुद्धितः।।13।।

536. निदधीत गुरुशिश्यैः सह पिण्डान् त्रयोदश।
प्रवक्तृन् दशसंकल्प्य षडी भाल्लव्युपक्रमात्।।14।।

537. तत्पङ्क्तेः पुरतः पिण्डान् निधाय दशपूर्ववत्।
तेषां पुरस्ताद्गङ्गाद्याः संस्मरन्नवदेवताः।।15।।

538. गङ्गा गोदावरी तुङ्गभद्रा सिन्धूसरस्वती।
सरयू नर्मदा सह्ययोनिश्च सरयूरिमाः।।16।।

539. शङ्करो भास्करो ब्रह्मा विष्णुस्सोमो महेश्वरः।
कृष्णो वराहो ब्रह्मा चेत्येतासान्नवदेवताः।।17।।

540. पूर्ववन्नामभिः पङ्क्तिपिण्डैरेकां प्रकल्पयेत्।
ब्रह्माणमथ वायुं च मृत्युर्वैश्रवणामपि।।18।।

541. संस्मरन् काश्यपं वह्निं मघवन्तं प्रजापतिम्।
पूर्ववत्पूर्वपङ्क्तेः प्राक् पिण्डानष्टौ निधाय च।।19।।

542. साध्याश्च मरुतो विश्वेदेवाश्चेति गणत्रयम्।
अष्टौ वसव इत्यादि गणांश्च त्रीन्गणे गणे।।20।।

543. देवान् संकल्प्य साध्यादीन् पिण्डां द्वादशपूर्ववत्।
पुरो देशे निधायाथ पार्श्वे तीर्थस्य दक्षिणे।।21।।

544. दक्षिणाग्रेषु दर्भेषु पात्राणि त्रीणि पूर्ववत्।
दक्षिणाग्राण्युदग्देशमारभ्य न्यस्य तेषु च।।22।।

545. तेन क्रमेण पात्रादि बुध्या पिण्डान्निधाय च।
ऋष्यादीन् मनसावाह्य तत्तत्पिण्डेषु च क्रमात्।।23।।

546. यज्ञोपवीतमृष्यादेः प्रतिवर्णं निधाय च।
दद्यात्तैलं च दूर्वाभिः पितॄणां पितृतीर्थतः।।24।।

547. उपचारांस्तु कुर्वीरन्प्राचीनावीतिनां ततः।
अपामार्गं च दूर्वाभिर्दद्युरामलकं ततः।।25।।

548. तेभ्यो दद्याद्धरिद्रां च कुर्वीरन् स्नापनं ततः।
आपोहिष्ठेति तिसृभिरग्रे कूर्चाग्रवारिणा।।26।।

549. तरत्समन्दीत्याद्याभिः ऋग्भिश्चतसृभिस्ततः।
यः पावमानीरित्याद्याः षड्टचस्समुदीर्य च।।27।।

550. तिस्रश्शुद्धवतीरुक्त्वा सोमँ राजानमित्यृचम्।
यत इन्द्रेत्यृचं चोक्त्वा ब्रह्मजज्ञानमित्यपि।।28।।

551. ऋचमुक्त्वा पवित्रन्त इत्यासामपि सामभिः।
स्नापयित्वार्घ्यसलिलं दद्युः पुष्पाक्षतैर्युतम्।।29।।

552. पितृभ्यस्सतिलैर्गन्धैर्गन्धद्वारेत्यृचा ततः।
गन्धं दत्वा ततो धूपमीडिष्वाहीति सामतः।।30।।

553. दीपं प्रदाय पावेति साम्ना तस्मात्परेण च।
कुसुमैरर्चयेयुस्तानर्चतेत्यादि सामतः।।31।।

554. अर्चन्तियेति साम्ना च गायन्तित्वेति सामभिः।
प्रगायतेत्यनेनापि साम्ना कृत्वा तदर्चनम्।।32।।

555. फलमूलानि भक्षार्थं तूष्णीं पानीय वारि च।
दत्वाचमनतोयं च ताम्बूलादि प्रदाय च।।33।।

556. कृत्वा दर्भाक्षतान् पात्रे पुष्पं कृत्वा तदञ्जलौ।
उक्त्वा देवान्यथेत्यादि पूर्वं सङ्कर्षणोक्तितः।।34।।

557. प्रतिनामाथ कुर्वीरन् तर्पणं देवतीर्थतः।
याज्ञवल्क्योक्ति पर्यन्तमुक्त्वा सङ्कर्षणादिकम्।।35।।

558. तर्पयेयु ऋषींस्तेषां तीर्थेनैव निवीतिनः।
संहिताकारनिर्देशात् प्राग्ब्रूवन्तस्ततःपरम्।।36।।

559. प्राचीनावीतिनः कुर्युः तर्पणं पितृतीर्थतः।
कुर्वीरन्नक्षतस्थाने तिलांस्तु पितृतर्पणे।।37।।

560. ततः परं च तेभ्यश्च स्वधेत्यन्तं यथाक्रमम्।
उदीरयन्तो वंशँ च स्वैस्वैस्तीर्थैः पृथक्पृथक्।।38।।

561. ऋष्यां द्वितर्पणं कुर्युर्निविताभिस्समन्वितः।
अभ्यस्येयुश्च ते राधाद्गौतमादित्यनन्तरम्।।39।।

562. राधो गौतममित्यादि यावत्खण्डसमापनम्।
तत उद्वास्य तान् सर्वान् आशीर्वादपुरस्सरम्।।40।।

563. आलोड्य पांसुपिण्डांश्च प्रक्षिप्य सलिले च तान्।
गीत्वाथ सलितेऽहावोहावा इत्यादि साम च।।41।।

564. शिरस्यभ्युक्ष्य सलिलैः पाँसु पुष्पादि संयुतैः।
स्नानं कुर्युः पुनश्चैतत्कर्मोत्सर्जनसंज्ञितम्।।42।।

इति अष्टात्रिंशत् खण्डः।।38।।

39. उपाकर्मकारिका

565. प्रत्यागत्य गृहं सर्वे प्रतिषेधविवर्जिते।
अलंकारैरलंकुर्युः गुरुश्च सकलानले।।1।।

566. ब्रह्मासननिधानान्तं कृत्वारभ्य समूहनम्।
सप्तभिस्सप्तभिर्दर्भैस्सप्तकूर्चान्निधाय च।।2।।

567. सप्तर्षीस्तांश्च संकल्प्य प्रत्येकं चतुरोपरान्।
दर्भैः पञ्चाशतः कृत्वा दानसंकल्प्य तानपि।।3।।

568. निदधाति ततः कुम्भे तान् कूर्चान् वारिपूरिते।
उपवीतं प्रदायाथ स्नापनादि यथा पुरा।।4।।

569. फलप्रदानपर्यन्तं सर्वे कुर्यात्ततो गुरुः।
परिस्तरणमारभ्य शिष्यान्वारभ्यवर्जितान्।।5।।

570. समस्ताहुतिपर्यन्तं कर्म कृत्वोपनीतिवत्।
तन्त्रं समापयेदूर्ध्वमुपवीतं च धारयेत्।।6।।

571. प्रतिमुच्योपवीतानि शिष्यांश्चाबध्य मेखलाम्।
आचम्योदकमासीरन् आचार्याभिमुखं ततः।।7।।

572. अध्याप्य पुच्छः सावित्रीं गुरुरर्धर्चशस्स तान्।
सर्वाश्च व्याहृतीः तिस्रः प्रणवं चापि योजयेत्।।8।।

573. सर्वेषामृचमेकैकां सामैकैकं च वाचयेत्।
ऊहे सप्त रहस्ये च स्तोत्रीयां ब्राह्मणादिषु।।9।।

574. एकैक वाक्यमादौ तु सोमँ राजानमित्यृचम्।
सामापि वाचयेदग्न आयाहीत्यादिकं ततः।।10।।

575. तद्वोगायेत्यथोच्चाद्यमिन्द्रज्येष्ठन्न इत्यपि।
उपास्मै गायतेत्याद्या ओग्नायेत्यादि साम च ।।11।।

576. तद्वौ होवेति चोच्चेति ततो यद्याव इत्यपि।
कः प्राणमायुरित्येतद्ध्रुवेवाचां च साम च।।12।।

577. कभ्राजेति विदेत्याद्यमृचं सामपि वाचयेत्।
उच्चातायीती चोहाद्यै वृषापवस्वधेति च।।13।।

578. प्रत्यस्मै पन्यमित्येते स्तोत्रीये विश इत्यपि।
प्रत्नं सधस्थमासादेत्याभित्वेत्यादि साम च।।14।।

579. ततो रथन्तरस्याद्यामाभित्वेत्येवमादिकम्।
पुनानस्सोमधेत्याद्यामुहुवेत्येवमादि च।।15।।

580. युक्तो पुरोजितायीति च्योहमित्याद्य सामपि।
माभेत्युहुवेत्याद्यं तंवोदस्मामितीदृचीम्।।16।।

581. वाचयेत्तत्त औहोयि यज्ञायज्ञीय इत्यपि।
महन्मे वोच इत्यादि स्तोमे युज्यत इत्यपि।।17।।

582. ततः प्रजापतिर्वेति त्रिवृदित्येवमादि च।
अथातिरात्र इत्येवमादिब्रह्म च वेति च।।18।।

583. तत ब्रह्महवेत्याद्यमथखल्वयमित्यपि।
अग्निरित्यादिकं देवसवितः प्रसवेति च।।19।।

584. ओमित्येतदसौ वेति यो ह वै ज्येष्ठमित्यपि।
अथातस्संहितेत्यादि नमो ब्रह्मण इत्यपि।।20।।

585. अथातो विधिमित्याद्या अथातश्छन्दसामिति।
अथेत्युपक्रमं सम्पत् सिद्धिरित्येवमादि च।।21।।

586. अथातः प्रतिहारस्येत्यपि कुर्वीत वाचनम्।
क्लृप्त इत्यादिकं ग्रामकामस्येत्यपि वाचयेत्।।22।।

587. लक्षणान्यग्न आयानुदात्तमित्यग्न इ्ञोत्विति।
वाचयेदामनेत्याद्यमथतालव्यमा इति।।23।।

588. अथोग्निमीळ इत्याद्यमिषेत्वेत्येवमादि च।
अग्न आयाहि वीत्यादि शन्नो देवीरभिष्टये।।24।।

589. शास्त्रादीन्यइउण् ....इत्युपक्रमात्।
मनुमेकाग्र इत्यादि स्मृत्यादीन्यपि वाचयेत्।।25।।

590. आद्यं पुरुषमित्यादीन्यपि प्रज्ञानुरोधतः।
वाचयेत्सामगानादिष्वशक्तः प्रणवं वदेत्।।26।।

591. धानावन्तमिति प्राश्य धानामाचम्य चोदकम्।
दधिप्राश्य दधिक्राव्ण इति ते गुरुणा सह।।27।।

592. आचम्य सकृदश्नीयुः पायसं घृतसंयुतम्।।
इति एकोनचत्वारिंशत् खण्डः।।39।।

40. अनुवाचनकारिका

ततः परेद्युः पूर्वाह्ने स्नात्वालंकृत्य पूर्ववत्।
593. फलमूलप्रदानान्तं कुर्वीरन् स्नापनादिकम्।।1।।
आरण्यवर्जमाचार्यस्सवित्रादीनि पूर्ववत्।
594. वाचयेत्तत्र चाग्नेयादृक् साम ब्राह्मणादिषु।।2।।
पादप्रस्तावमात्रं च वाक्यादीन्यपि वाचयेत्।

ऋष्यादेरुपवीतेन कङ्कणं दक्षिणे करे।।3।।

595. यावत्सूत्रं करिष्यामि तावत्सूत्रं धरिष्यति।
इति मन्त्रेण बध्नीयुस्ततो वेदानृषीनपि।।4।।

596. उद्वास्य रक्षितं कृत्वा कूर्चं पुत्रार्थिनो स्त्रियः।
नित्वेति गीत्वा सलिलैः स्नापयेत्कुम्भसंस्थितैः।।5।।

597. तत्पक्षोपक्रमं पक्षो ब्रूवारण्यकवर्जितम्।
अधीतोत्सर्जनं पौष्यां पौर्णमास्यां यथाक्रमम्।।6।।

598. कुर्युरुत्सर्जनात्पूर्वं तत्रोपकरणात् परम्।
विद्युत्स्तनयित्नोश्च सायंकाले समुद्भवेत्।।7।।

599. रात्रौ नाध्ययनं कुर्युः प्रातश्चेत्तत्र वासरे।
ऊर्ध्वमुत्सर्जनान्मोघा दृष्ट्वा वर्षोल्मुका यदि।।8।।

600. नाधीयीरन् निषिद्धेषु शास्त्राः कालान्तरेषु च।।

इति चत्वारिंशत् खण्डः।।40।।

41. आश्वयुजीकारिका

601. या पौर्णमास्याश्वयुजी पूर्वाह्नारम्भवर्जितम्।
तस्यामाश्वयुजी कर्म स्थालीपाकवदाचरेत्।।1।।

602. रुद्रायत्वेति मन्त्रेण तत्र निर्वापपूर्वकम्।
पायसं श्रपयेन्मानस्तोक इत्यादिना ततः।।2।।

603. प्रधानमाहुतीर्हुत्वा तन्त्रमूर्ध्वं समापयेत्।
पयः पात्रेऽवनीयाज्यं शिष्टं तत्रावनीय च।।3।।

604. आनोमित्रेति गास्तेन सायं प्रत्यागता गृहम्।
अभ्युक्ष्य वासयेद्वत्सां स्तद्रात्रौ मातृभिस्सह।।4।।

इति एकचत्वारिंशत् खण्डः।।41।।

42. आग्रयणकारिका

605. पौर्णमासी प्रतिपदि यद्वा प्रतिपदन्तरे।
शरद्याग्रयणं कुर्यात् स्थालीपाकस्य तन्त्रतः।।1।।

606. पौर्णमासी प्रतिपदि करणे नवतण्डुलैः।
आग्नेयेन सहैन्द्राग्निं पायसं श्रपयेत्पृथक्।।2।

607. जुहुयात्पूर्वमैन्द्राग्नं तन्त्रमेकं चरुद्वयम्।
शतायुधायेत्याद्याभिः हुत्वा चतसृभिर्घृतम्।।3।।

608. स्रुवेण जुहुयादग्निः प्राश्नात्वित्यनयापि च।
उपस्तीर्यावदायादि चरुभ्यामभिघार्य च।।4।।

609. हुत्वा स्विष्टकृतं तन्त्रमूर्ध्वं पर्युक्षणावधि।
कृत्वा किञ्चिज्जलं पात्रे भोजनार्थेऽवनीय च।।5।।

610. ऐन्द्राग्नाद्धविषं पात्रे तस्मिन्द्विरवदाय च।
पञ्चावत्ती स चेत्तस्मादवदाय पुनः सकृत्।।6।।

611. आपोभिघार्य भद्रान्न इत्याचमनवर्जितम्।
प्रगिरेत्त्रिस्संख्याद्यं मन्त्रं च त्रिरुदीरयन्।।7।।

612. आचम्यान्ते त्वमोसीति चक्षुषी नासिके अपि।
श्रोत्रे च संस्पृशेद्देशे उपनीतास्सुतादयः।।8।।

613. प्राश्याभिमर्शनं कुर्युः आग्नेयप्राशनादिकम्।
स्वयं समापयेदेतत् कुर्वन् प्रतिपदन्तरे।।9।।

614. आग्नेयं निर्वपेत्पूर्वं होमोऽप्यस्याग्रतो भवेत्।
पौर्णमासादि दर्शान्तमुपक्रान्तां हि पार्वणम्।।10।।

615. स्वकाले तत्समाप्यैव कार्यं कर्मान्तरं यतः।
एकप्रयोगनादेन कुर्यादत्रापि पूर्ववत्।।11।।

616. कुर्वीतैतद्वसन्तेऽपि नवमी नवतण्डुलैः।
तत्रैतमुत्यमित्यादि मन्त्रेण प्राशनं भवेत्।।12।।

इति द्विचत्वारिंशत् खण्डः।।42।।

43. आग्रहायणकारिका

617. अथाग्रहायणं मार्गशिर्ष्यां श्रावणकर्मवत्।
नमः पृथिव्या इत्यादि मन्त्रत्रयविना कृतम्।।1।।

618. अक्षतं प्राशनान्तं च पौर्णमास्यां समाचरेत्।
तद्रात्रं हव्यवाहायत्वेति मन्त्रेण पायसम्।।2।।

619. चरुं निरुप्य श्रपयेत् सायमाहुत्यनन्तरम्।
तन्त्रं पार्वणवत्कुर्यात् प्रथमेत्यादिमन्त्रतः।।3।।

620. प्रधानमाहुतिं हुत्वा परिषेचान्तमाचरेत्।
निधाय भूतले पाणी पश्चादग्नेरवाङ्मुखौ।।4।।

621. जपित्वा च प्रतिक्षत्र इति तत्र कुशादिभिः।
उदक्प्रवणमास्तीर्य तत्र दक्षिणतः स्वयम्।।5।।

622. आसीतोत्तरतो भार्या पुत्रा भ्रात्रादयस्ततः।
ज्येष्ठक्रमा उदग्देश आसीरंस्यात्र बान्धवाः।।6।।

623. न्यञ्चौ पाणी निधायोर्व्यां स्योनेत्यादि जपेद्गृही।
त्रिः प्रदक्षिणमावृत्य सर्वे प्राक् शिरसस्ततः।।7।।

624. संविश्य दक्षिणैः पार्श्वैः प्रयुञ्जीरन्त्सयाशिषः।
पुण्याहवाचनं कृत्वा गृही शेषं समापयेत्।।8।।

इति त्रयश्चत्वारिंशत् खण्डः।।43।।

44. अष्टकाहोमकारिका

625. कृष्णाष्टमी पुष्यमासे मार्गशीर्षादिषु त्रिषु।
एकैकं चरुतन्त्रेण स्थालीपाकं समाचरेत्।।1।।

626. ताश्चाष्टम्योष्टकास्तिस्रो विशेषस्तासु वक्ष्यते।
तिस्रोऽष्टकाः करिष्येऽहमिति सङ्कल्प्य तण्डुलान्।।2।।

627. आद्यायामष्टकायै त्वेत्यादिमन्त्रेण निर्वपेत्।
श्रपयेच्चरुमध्येन कपालेनान्तरेण तु।।3।।

628. अष्टावपूपान् कृत्वाग्नावकुर्वन् परिवर्तनम्।
श्रपयेच्चरुणा सार्धं स्रुच्युपस्तरणे कृते।।4।।

629. चरोस्तद्वदपूपेभ्योऽप्यवदायाभिघार्य च।
सहैव जुहुयादष्टकायै स्वाहेति मन्त्रतः।।5।।

630. उत्तमावतु सङ्कल्प्य विशेषापूपवर्जितम्।
एवमेव चरेत्पक्वं शाकं चान्ते द्विजाशने।।6।।

631. प्रयच्छेदुपदंशार्थं मध्यमायां तु गामपि।
अलाभे च विधायाग्ने चरुं निर्वापवर्जितम्।।7।।

632. आज्यसंस्कारपर्यन्तं पुरस्तादनलस्य गाम्।
प्रत्यङ्मुखीमवस्थाप्य कृत्वा व्यस्ताहुतित्रयम्।।8।।

633. हुत्वा यत्पशवः प्रध्येतानुत्वेत्यनुमन्त्र्य गाम्।
त्वामष्टकायै त्वा जुष्टं प्रोक्ष्यामिति यवान्वितैः।।9।।

634. सलिलैः प्रोक्ष्य गृह्याग्नेरुल्मुकेन प्रदक्षिणम्।
पर्यग्निकरणं कृत्वा प्रक्षिप्याग्नौ तदुल्मुकम्।।10।।

635. प्रोक्षणीः पाययेदग्नेः शमितादेश उत्तरे।
प्रत्यक्शिर उदक्पादीं कृत्वा संज्ञापयेत्पशुम्।।11।।

636. जुहुयाद्यजमानो यत्पशुरित्यादिमन्त्रतः।
वाक्चक्षुर्नासिकोपस्थपायुश्रोत्राणि वारिणा।।12।।

637. पशोः प्रक्षालयेत्पत्नी तस्याः पार्श्वे प्रदक्षिणे।
अन्तर्धाय पवित्रे द्वे कृत्स्नं स्वधितिना वपाम्।।13।।

638. उद्धरेत्वामितोत्कृत्य ततो यज्ञियशाखिनः।
उपशाखान्विताशाखामुभाभ्यां परिगृह्यताम्।।14।।

639. श्रपयेद्यजमानोऽग्नौ वपाया श्रपणाद्यदा।
प्रस्नवेद्धारि तत्काले कृत्वा विशसनं तयोः।।15।।

640. शमिताद्धृदया जिह्वां वक्षोभ्यां यत्कृतावपि ।
पक्षद्वयाच्च सव्याच्च बाह्वोः पार्श्वद्वयोरपि।।16।।

641. माँसानि कृत्य तच्छ्रोण्या दक्षिणस्यां गुदादपि।
गोधिकस्य प्रमाणानि तानि कुम्भ्यान्निधाय च।।17।।

642. सव्यं सक्थि समुद्धृत्य कुर्यात्पात्रान्तरे ततः।
स्विष्टकृद्धदुपस्तीर्य यजमानस्ततः स्रुचि।।18।।

643. कृत्स्नापि या विधायाज्यं तत्र द्विरभिघार्य च।
हुत्वाष्टकायै स्वाहेति चरुं तूष्णीं निरूप्य च।।19।।

644. मेक्षणाभ्यां पशोरङ्गैः सहाग्नौ श्रपयेत्पृथक्।
अभिघार्योदगुद्वास्य द्वयं प्रत्यभिघार्य च।।20।।

645. आसाद्यैकादशप्लक्षशाखास्तत्रैव बर्हिषि।
कंसपात्रं च कुम्भस्थं रसं कंसेऽवनीय च।।21।।

646. शाखास्वेकादशाङ्गानि हुत्वा तेभ्यश्चरोरपि।
मध्यतः पुरतश्चापि प्रत्येकमवदाय च।।22।।

647. पञ्चावत्ती तु पश्चाच्च कंसे तानि निधाय च।
विदध्यादाज्यभागान्ते परिषेकादिकं ततः।।23।।

648. अन्नमिश्रावदातानामष्टौ चत्वारि वा स्रुचम्।
अनुपस्तीर्य गृह्णीयादकृत्वा चाभिघारितम्।।24।।

649. मन्त्रेण जुहुयादग्नावग्निरित्यादि मन्त्रतः।
अन्नमिश्रावदानाभ्यां द्वाभ्यां द्वाभ्यां षडाहुतीः।।25।।

650. एकैकयर्चो कुर्वीत षड्भिरौलूखला इति।
अवशिष्टावदानानि प्रागुदीच्यां हुताशने।।26।।

651. जुहुयात्स्विष्टकृत्स्थाने त्वन्विमन्न इति ब्रुवन्।
कृत्वोपरितनं तन्त्रं दत्वा च चरुदक्षिणाम्।।27।।

652. आलब्धगोसदृशाङ्गां प्रयच्छेद्ब्रह्मणे ततः।
पित्र्ये पशौ वपाहोममन्त्रेण वहवपामिति।।28।।

653. जातवेदस्य इत्येष मन्त्रादेव पशोर्भवेत्।
पश्वालम्भ न कुर्वन्तु निरुप्यामन्त्रकं चरुम्।।29।।

654. उक्त्वाष्टकायै स्वाहेति जुहुयाच्चरुतन्त्रतः।
अष्टमीष्वष्टकाः कृत्वा कर्मान्वष्टक्य संज्ञकाम्।।30।।

इति चतुश्चत्वारिंशत् खण्डः।।44।।

***

45. अन्वष्टक्यकारिका

655. नवमीष्वपराह्नेषु कुर्वीत दशमीपि वा।
तत्र प्राग्दक्षिणे वेश्मभागे परिवृतेऽनलम्।।1।।

656. उत्तरार्धे मथित्वाथ विधाय स्थण्डिलादिकम्।
निदध्यान्मथितं वह्निं प्राचीनावीति संयुतम्।।2।।

657. पश्चात्तत्रोपविश्याग्नेर्दिशं प्राग्दक्षिणं प्रति।
व्रीहीन्सकृद्गृहीत्वा तान्सकृदेवावहत्य च।।3।।

658. सकृत् फलीकृतान् कृत्वा चरुस्थाल्यां निधाय च।
सकृत्प्रक्षाल्य तत्राग्नौ मेक्षणेनाप्रदक्षिणम्।।4।।

659. मिश्रीकृत्वा हविश्रावं श्रपयित्वाभिघार्य च।
उद्वास्य दक्षिणेनाग्निं न तत्प्रत्यभिघारयेत्।।5।।

660. अष्टकायां गवालम्भनिहितं सव्यसक्थि चेत्।
शकलीकृत्य तत्स्थाल्यां विन्यस्य चरुणा सह।।6।।

661. मेक्षणान्तरतः कुर्यात्तस्यापि श्रवणादिकम्।
तिस्रश्शुद्धेन काष्ठेन कर्षूरुदगुपक्रमात्।।7।।

662. खनेद्दक्षिणतः तिर्यगधश्च चतुरङ्गुलाः।
यज्ञोपवीत्यपस्पृष्ट्वा तत्रासित्वैव पूर्ववत्।।8।।

663. मध्यमायाः पुरोदेशे कर्ष्वा हित्वा पदद्वयम्।
विधाय स्थण्डिलं कृत्स्नं मथित्वाग्निं प्रणीय च।।9।।

664. समूह्य भूजपं कुर्यान्नेह ब्रह्मोपवेशनम्।
प्रागग्रदर्भानास्तीर्य पार्श्वे वह्नेस्तु पश्चिमे।।10।।

665. दक्षिणाग्रासु कर्षूषु प्राचीनावीति संयुतः।
स्वस्तरं दक्षिणाग्रैस्तु दक्षिणाप्रवणं तृणैः।।11।।

666. प्रादेशमात्रं हित्वाग्नेः पश्चादास्तीर्य तत्र च।
ब्रसीन्यस्योदपात्राणि दर्भेषूदगुपक्रमम्।।12।।

667. एकैकं सादयेत्कंसपात्रे दर्भाङ्कुरत्रयम्।
अञ्जनं तैलगन्धांश्च वस्त्रतन्तूँश्च सादयेत्।।13।।

668. यज्ञोपवीत्यपस्पृष्ट्वा वामदेव्यजपावधि।
दर्भेष्वासनमारभ्य स्थालीपाकवदाचरेत्।।14।।

669. आज्यभागाहुती नोपस्तरणं नाभिघारणम्।
न कुर्यात्स्विष्टकृच्छेषं प्रदानं प्राशनानि च।।15।।

670. बर्हिष्यासादने प्राप्ते कंसपात्रं च सादयेत्।
चरोः कंसेऽवदायान्नं मांसमप्यस्त्रिचेद्यपि।।16।।

671. मिश्रीकृत्य गृहीत्वा तु मेक्षणेन सकृत्सकृत्।
स्वाहोक्त्यनन्तरं स्वाहा सोमायेत्यादिमन्त्रतः।।17।।

672. हुत्वैव जुहुयात्स्वाहाग्नय इत्यादिनापि च।
वामदेव्यस्य गानान्ते प्राचीनावीति संयुतः।।18।।

673. तस्मादुल्मुकमादाय वह्नेः सव्येन पाणिना।
दक्षिणेन च कर्षूर्निधायापहता इति।।19।।

674. पूर्वखातामुपक्रम्य कर्षूषु तिसृषु क्रमात्।
पित्रादीनेत पितर इत्यावाह्यावनेजनम्।।20।।

675. पिण्डदानादिकं चापि तेष्वन्तात्स्वाचरेत्क्रमात्।
गृहीत्वा पूर्वनिहितां सलिलं जलपात्रतः।।21

676. संबुध्या तु पितुर्नाम निर्दिश्य पितरित्यपि।
उदीर्य चावनेनिंक्ष्वेत्यादिकं पितृतीर्थतः।।22।।

677. अवनीय पितुः कर्ष्वां जलपात्रमवाङ्मुखम्।
उक्त्वा दक्षिणतः पात्रान् गृहीत्वा वार्यनन्तरान्।।23।।

678. पितामहादिकर्ष्वान्तं तन्नामोक्तिपुरस्सरम्।
अवनीय यथापूर्वं त्यक्त्वा पात्रमवाङ्मुखम्।।24।।

679. जलं तृतीयपात्रस्थं प्रपितामह उद्दिशन्।
तस्यां कर्ष्वां निनीयैवं पात्रं संत्यज्य पूर्ववत्।।25।।

680. स्थाल्याः कंसे गृहीत्वान्नं मिश्रीकृत्य तिलादिभिः।
मांसेनाप्यस्य सद्भावे कुक्कुटाण्डप्रमाणकान्।।26।।

681. त्रीन् पिण्डान् तेन कृत्वा तान् निदध्यात्पूर्ववत् क्रमात्।
अवने निंक्ष्व शब्दस्य स्थाने भुंक्ष्वेति निर्दिशेत्।।27।।

682. दद्यात्तु पुत्रिकापुत्रो मात्रे मातामहाय च।
तत्पित्रे वाथवा मातामहादि त्रय उद्दिशन्।।28।।

683. पिण्डदाता ततो नास्ति पुत्रे जनयितुर्यदि।
पित्रादिद्वयमेकैकं पिण्डे द्विपितृको वदेत्।।29।।

684. न जीवपितृका पित्र्या युक्तकर्म समाचरेत्।
मोहात्तदथवा कुर्याद्दद्यात्तेभ्यः पिता तथा।।30।।

685. तेभ्यो दद्यात्पितुश्चापि जीवत्येव पिता यदि।
तेभ्यः पितामहस्तद्वत्प्रपितामहजीवने।।31।।

686. मृतेऽपि पितृजीवंश्चेत्तत्पिता तस्य वा पिता।
मृतमेवोद्दिश्य कुर्याज्जीवन्तं वा सहाशयेत्।।32।।

687. न तस्मै पिण्डदानादि पिण्डदानादनन्तरम्।
समुदीर्यात्र पितर इत्यादि व्याहृतीरपि।।33।।

688. सावित्रीं साम तस्यां च यद्वेत्याद्यां च संहिताम्।
उदङ्मुखः करं सव्यं संहृत्यान्नं प्रसारयन्।।34।।

689. अप्रदक्षिणमावृत्य प्राणानायम्य शक्तितः।
ध्यायन्नात्मेप्सितान् पिण्डान्प्रत्यावृत्याभिवीक्षयेत्।।35।।

690. जपेदमीमदन्त्वेति ततो दर्भाङ्कुरत्रयम्।
निघृष्याञ्जनपात्रे ते एकैकां कुरुतोञ्जनम्।।36।।

691. निधाय पूर्ववत्तन्त्रं नामोदीरणपूर्वकम्।
तथैव तैलगन्धांश्च निदध्यादञ्जनादिषु।।37।।

692. अंक्ष्वाभ्यंक्ष्वानुलिम्पेति मन्त्रसन्नमयेत्क्रमात्।
अञ्जनादेश्च पात्राणि निदध्याज्जलपात्रवत्।।38।।

693. आद्यायाः पश्चिमे देशे कर्ष्वास्सव्येतरं करम्।
तस्य प्रागग्रमुत्तानं तस्योपरि करान्तरम्।।39।।

694. निधायावाङ्मुखस्तद्वत् छूषायेत्यन्तसंयुतम्।
जपेन्नमोव इत्यादि मध्यमायाश्च पश्चिमे।।40।।

695. पूर्ववत्सव्यमुत्तानं पाणिमन्यमावाङ्मुखम्।
निधाय नम इत्यादि रसायेत्यन्तमीरयेत्।।41।।

696. प्रथमायादिवान्यायाः कर्ष्वाः पश्चात्करद्वयम्।
न्यस्य मन्यव इत्यन्तं नम इत्यादिकं जपेत्।।42।।

697. नमस्काराञ्जलिं कुर्वन्नमो व इति मन्त्रतः।
उपस्थाय पितृन्वासोदशां कर्षूषु पूर्ववत्।।43।।

698. एतद्वः पितरो वास इति दद्याद्यथाक्रमम्।
पितामहादि शब्दन्तु तत्कर्षोस्समुदीरयन्।।44।।

699. कंसपात्रे जलं शीतमवनीय तिलान्वितम्।
आरभ्य दक्षिणं पार्श्वं कर्षूस्तेनाप्रदक्षिणम्।।45।।

700. त्रिः पर्युक्ष्य सलेपेन कंसपात्रमवाङ्मुखम्।
निधाय दक्षिणे पार्श्वे ऊर्जमित्यादि मन्त्रतः।।46।।

701. कर्षूस्था अनुमन्त्र्यापः पत्नीपिण्डन्तु मध्यमम्।
प्राशयेत्पुत्रलाभार्थं आधत्तेत्याद्युदीरयन्।।47।।

702. अभून्नो दूत इत्यग्नावुल्मुकं प्रक्षिपेत्पुनः।
अभ्युक्ष्य कृत्वोत्तानानि पात्राणि परिचारकाः।।48।।

703. हरेयुर्द्वन्द्वभूतानि पिण्डं गामथवा द्विजम्।
प्राशयेत्प्रक्षिपेदप्सु ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः।।49।।

इति पञ्चचत्वारिंशत् खण्डः।।45।।

46. पिण्डपितृयज्ञकारिका

704. एवमेव चरेत्पिण्डपितृयज्ञक्रियादपि।
अमावास्यापराह्ने च निर्मन्थ्य श्रपयेच्चरुम्।।1।।

705. गृह्याग्नेरेकदेशन्तु होमार्थं प्रणयेत्ततः।
एकैककर्षूपित्रादिकृत्यं तस्याः समाचरेत्।।2।।

706. स्वस्तरं स्तरणं नात्र न चेदासादयेद्ब्रसीम्।
नान्यस्येत्पाणि तद्देशे ब्रह्मा तद्दक्षिणापि च।।3।।

707. विद्यते न हविश्शेषं देयं दर्भास्तृणानिह।
प्रकर्षेद्दक्षिणेनाग्निं प्राचीं प्रत्युत्तरेण तु।।4।।

708. पौर्णमास्यां यथा चैत्री तस्यां चैत्री समाचरेत्।
इन्द्राण्यै त्वेति मन्त्रेण निरूप्य चरुतन्त्रतः।।5।।

709. एकाष्टकेति मन्त्रेण प्रधानाहुतिमाचरेत्।।

इति षड्चत्वारिंशत् खण्डः।।46।।

47. अपरकारिका

आहिताग्नेर्मृतस्यास्य संस्कारक्रम उच्यते।

710. अग्नीनजस्रान्पुत्रादिः कुर्यात्तस्मिन्मुमूर्षति।।1।।
तस्य चेन्मरणं शङ्का भवेत्पक्षे सितेतरे।

711. पक्षशेषास्थितान् सायं प्रातर्होमान्स्तदेव तु।।2।।
जुहुयात्प्रतिसंख्याकदर्शेष्टिं च समाचरेत्।

712. इष्टिं कर्तुमशक्तस्ताः प्रधानं देवतामपि।।3।।
जुहुयाच्चतुर्गृहीत्वाज्यमनुवाकं पुरस्तनीम्।

713. अनूच्या याज्यया होमं कुर्यादिष्टेरुपक्रमे।।4।।
मृतश्चेत्प्राध्घविः क्लृप्तेः प्रधाना देवताः प्रति।

714. प्राग्वच्चतुर्गृहीत्वाज्यं यजेत परतो यदि।।5।।
अवदाय प्रधानेभ्यस्सविता ताश्च देवताः।

715. चतुर्थ्यन्तेन शब्देन स्वाहान्तं मनसोद्दिशन्।।6।।
जुहुयादवशिष्टस्य लोप एव मृते परम्।

716. चातुर्मास्यादि मध्येऽपि मृतश्चेत्तत्समाचरेत्।।7।।

आहुतीष्ववशिष्टासु होमेष्टिषु मृते यदि।

717. स्रुवेण द्वादशावृत्या गृहीत्वाज्यं ततः स्रुचि।।8।।
होमं प्रजापतिं ध्यायन् योऽस्याग्निरिति मन्त्रतः।

718. हुताशने लौकिके तु कुर्यात् पक्षे सिते यदि।
रात्रौ मरणशङ्कास्यात्तदेव प्रातराहुतिम्।।9।।

719. कुर्यादनन्तरा वह्निविहारकरणे मृते।
विहृत्याग्नीन्समाप्यापि शेषं संस्कारमाचरेत्।।10।।

720. प्रकीर्य सिकतां देशे दक्षिणाग्नेः पुरस्तने।
दक्षिणाशिरसं तत्र दक्षिणाग्रकुशैरपि।।11।।

721. संवेश्य बोधसंयुक्तामेतानि श्रावयेत्क्रमात्।
ओग्नाईत्यादिमं वर्गमेषस्येत्यन्तिमं तथा।।12।।

722. आज्यदोहत्रयं चादित्प्रत्नस्येत्येवमादि च।
तत उद्वयमित्याद्या उन्नयामीति साम च।।13।।

723. ऊर्गित्यादि च मन्त्रन्तु केचिदाहुर्मनीषिणः।
तवश्यावीयसंज्ञानि श्रुतपूर्वाणि तेन चेत्।।14।।

724. तानि चास्य ततः कर्णे दक्षिणे मरणक्षणे।
अभिप्रघ्नाप्सुदक्षाश्च सेतुषाम च कीर्तयेत्।।15।।

725. हाउ शब्दं त्रिरभ्यस्य यत्सोमेमा इमा इति।
ततश्च प्राणनिर्याणे स्नापयित्वा मृतं ततः।।16।।

726. अलंकृत्य च वस्त्रस्य सदशाङ्गुष्ठबन्धनम्।
निधाय पाणिपादेषु दक्षिणा शिरसं मृतम्।।17।।

727. औदुम्बरमथासन्ध्यामारोप्याहतवाससा।
उदग्दशेन प्रच्छाद्य श्मशानं प्रतिबान्धवाः।।18।।

728. वहेयुः प्रेतकार्याणि प्राचीनावीतिनस्सदा।
आवृत्य दक्षिणाग्रत्वं कुर्वीरन् दक्षिणामुखाः।।19।।

729. प्रेतार्थानि च दानानि कुर्वीरन्पितृतीर्थतः।

मुक्तकेशो गृहीत्वाग्नीन् संस्कर्ता पुरतो व्रजेत्।।20।।

730. गृहीत्वान्ते दधिक्षीरमध्वाज्यतिलतण्डुलान्।
दर्भोदकुम्भपरशुपात्रारण्यादिकान्यपि।।21।।

731. पृषदाज्याह्वयाज्यं च प्रभूतं दधिमिश्रितम्।
तमन्वीयुः श्मशानं च प्राप्य स्नात्वा च दाहकाः।।22।।

732. प्राणानायम्य च प्रेतनामगोत्रविशेषतम्।
प्रेतशब्दं द्वितीयान्तमुपेतं तु तृतीयया।।23।।

733. तथा दहनकर्मेति संस्करिष्य इति ब्रुवन्।
संकल्प्य दक्षिणाप्रत्यक् प्रवणछिद्रवर्जितम्।।24।।

734. अभङ्गुरं च संस्कारे देशमूषरवर्जितम्।
प्रक्रमैः पञ्चदशभिः गच्छाग्रमिति मन्त्रतः।।25।।

735. अनया प्रागुदग्भागमारभ्य प्रत्यग्दक्षिणा।
उक्त्वापसर्पतेत्यादि पलाशस्याग्रशाखया।।26।।

736. कृत्वा तद्देशसम्मार्गं शाखां दक्षिणतस्त्यजेत्।
अवोक्ष्य वारिणा तिस्रः कर्षूरुदगुपक्रमात्।।27।।

737. यमायेत्यादि मन्त्रेण कालायेत्यादिनापि च।
तथा मृत्यव इत्युक्त्वा निर्वपेत्तिलतण्डुलान्।।28।।

738. अवशिष्टान् प्रकीर्याथ तत्र संस्कारभूतले।
हिरण्यं किञ्चिदाज्यं च मध्ये कर्ष्वां निधाय च।।29।।

739. कर्षूषु दक्षिणाग्रांश्च दर्भानास्तीर्य याज्ञिकैः।
काष्ठैस्तस्य चितिं चित्वा तस्य केशादिवापयेत्।।30।।

740. ततो वितस्तिमात्रं तु खात्वा दक्षिणतो वटम्।
केशादीन्यस्य तत्रापि स्पृष्ट्वा चितिमवोक्ष्य च।।31।।

741. मृतं चाथ समारोप्य दक्षिणाशिरसं चितौ।
परिस्तीर्य च तं दर्भैः यज्ञपात्राणि सन्ति चेत्।।32।।

742. तान्यग्निगार्हपत्यं च पश्चाद्दर्भेषु सादयेत्।

दक्षिणाग्निं शिरःपार्श्वे तस्य पार्श्वे पुरस्तने।।33।।

743. निधायाहवनीयाग्निं गृह्याग्निं च स चास्तिचेत्।
सभ्यावसथ्यौ सद्भावे तौ चास्ये चक्षुषोरपि।।34।।

744. हिरण्यशकलान् सप्तान्नासाश्रोत्रेरपि क्रमात्।
निदध्यादाज्यबिन्दून्वा ध्यायन् व्याहृतिसप्तकान्।।35

745. होमाद्यर्थं घृतं किञ्चित् कृत्वा पात्रान्तराश्रितम्।
मुखे तस्य निनीयाज्यं पादोपक्रममामुखात्।।36।।

746. निनीय सन्ततं शेषं पात्रं दक्षिणतस्त्यजेत्।
दधिमध्वपि चास्यादौ तथैव तिलतण्डुलान्।।37।।

747. निधायैवं मृतस्याङ्गेष्वथ पात्राणि योजयेत्।
इडापात्रं चरुस्थालीं कपालं न्यस्य मूर्धनि।।38।।

748. ललाटदेशप्राशित्रहरणं चापि योजयेत्।
स्रुचौ नासिकयोरास्ये हिरण्यमवधाय च।।39।।

749. मुखेऽग्निहोत्रहवणीं प्रागग्रासादयेत्ततः।
जुहूं च दक्षिणे पाणौ सव्ये चोपभृतं करे।।40।।

750. सपार्श्वे दक्षिणे न्यस्य धृष्टिन्यस्योरसि ध्रुवाम्।
उदरोपस्थयोर्न्यस्य पात्रा कृष्णाजिने क्रमात्।।41।।

751. दक्षिणं कटिदेशं च दक्षिणेनाप्युलूखलम्।
मुसलं दक्षिणे सक्थि देशे शूर्पं तु पादयोः।।42।।

752. शकटं चेतरत्सर्वं सक्थ्योर्मध्ये निवेशयेत्।
ततस्सपिण्डा स्त्रीपूर्वा कनिष्ठप्रथमा अपि।।43।।

753. आयङ्गौरिति यामस्य मनोहावुक्तिपूर्वकम्।
स्तोत्रीयां प्रथमामुक्त्वा पदस्तोभसमन्विताम्।।44।।

754. अगन्मज्योतिरित्येतद्गीत्वौहोवेत्युपक्रमम्।
प्रकीर्य सव्यतः केशान् दक्षिणोरुश्च पाणिभिः।।45।।

755. अवघ्नानानुमन्त्र्यैवं वातास्त इति मन्त्रतः।

वस्त्रान्तरेऽभिधून्वन्तस्तं परीयुः प्रदक्षिणम्।।46।।

756. ऊरुघ्नन् सव्यतः केशानितरत्र प्रकीर्य च।
सव्योरुनापि चाघ्नानास्तं परीत्य प्रदक्षिणम्।।47।।

757. यामस्य गीत्वा स्तोत्रीयां द्वितीयामपि पूर्वकम्।
प्रदक्षिणान्तं कुर्वीरन् मनोहावेत्युपक्रमम्।।48।।

758. तृतीयामपि गीत्वैवं कुर्युस्संस्कारकृत्ततः।
निधाय मूर्ध्नि दर्भेषु कुम्भं च जलपूरितम्।।49।।

759. मृतं प्रदक्षिणं कुर्यात् प्रथमे तत्र दक्षिणम्।
कृत्वा परशुना कुम्भे सुषिं तस्माद्विनिसृतः।।50।।

760. आपोनुमन्त्रयेतेमा आप इत्यादि मन्त्रतः।
मन्त्रेऽस्मिन्निति च ब्रूयुस्तं परीत्य प्रदक्षिणम्।।51।।

761. प्रदक्षिणे द्वितीयेऽपि प्रहृत्योपरितस्तुषेः।
मन्त्रेऽस्मिन्निति च स्थाने त्वन्तरिक्ष इति ब्रुवन्।।52।।

762. वीक्ष्य धारा यथापूर्वं तृतीयेऽपि ततःपरम्।
प्रहृत्य पूर्ववत्कुर्यात् वारिधारानुमन्त्रणम्।।53।।

763. अन्तरिक्षेति च स्थाने स्वर्गेत इति निर्दिशेत्।
निरस्य पृष्ठतः कुम्भं तत्कपालाश्रितं जलम्।।54।।

764. आप्यायस्वेत्यृचा तस्य निनयेच्चक्षुरादिषु।
प्रकीर्य तं तिलैः कृष्णैः छित्वा चाङ्गुष्ठबन्धनम्।।55।।

765. वदन् सुरभिरित्यादि पादौ तस्य पराङ्मुखः।
सर्पिषाभ्यज्य पाणिभ्यामाद्रौषधिवनस्पतीन्।।56।।

766. आलभ्योत्थाय पयसा पाणी प्रक्षाल्य भास्करम्।
वीक्ष्य द्विजोत्तमान् गां च स्वर्णमालभ्य पाणिना।।57

767. छादयित्वा कुशैः प्रेतमग्निं प्रज्वाल्य तेषु च।
आस्तीर्योलपराजीश्च युगपत्तेन सन्ततम्।।58।।

768. पूर्वमाहवनीयेन स्पृष्टां येश्च यमग्निना।

अथवा गार्हपत्येन यदि वा दक्षिणाग्निना।।59।।

769. ब्राह्म्यं दैवं तथा पित्र्यं लोकमभ्येत्यनुक्रमात्।
तस्मात्वमधिजातोऽसि त्वदयं जायतां पुनः।।60।।

770. इत्युदीर्य मृतस्योक्त्वा नाम संबुद्धिसंयुतम्।
अग्नीन् स्वर्गाय लोकाय स्वाहेत्यङ्गेषु योजयेत्।।61।।

771. ततोऽनेनैव मन्त्रेण विधाय च घृताहुतिम्।
आयमित्युपतिष्ठेत साम्ना धूमे च निर्गमे।।62।।

772. त्वेषस्त इत्यथाग्नाइ मृड इत्यग्ने मृडेति च।
ज्वलितेऽग्नावुपस्थाय अगन्म ज्योतिरित्यपि।।63।।

773. त्रिर्गीत्वैतानि गीत्वा च वामदेव्यं तृचे ततः।
जपेन्नमो व इत्यादि कुर्यात्तूष्णीं प्रदक्षिणम्।।64।।

774. अनाहिताग्निमप्येवं संस्कुर्याद्गृह्यवह्निना।
त्रेताग्निपात्रसंबन्धस्तदभावान्निवर्तते।।65।।

775. पत्नीं पूर्वमृतां चैवं संस्कुर्याद्वपनं विना।
सर्वत्र स्त्रीमृतौ मन्त्रान् ब्रूयात्स्त्रीलिङ्गसंयुतान्।।66।।

776. कपालतपनोत्थेन वह्निना ब्रह्मचारिणः।
अन्यानुत्तपनीयेन स्त्रियश्चाभर्तृका अपि।।67।।

777. कपालतपनाज्जातो दर्भमुष्टिमुपाश्रिताः।
पुनर्मुष्ट्यन्तरारूढो वह्निमुत्तपनाह्वयाः।।68।।

778. अपुत्रत्वादि नान्यश्चेत्संस्कर्ता रिक्थभागिनः।
तस्मै गां दक्षिणां दद्युः गच्छतस्सलिलं प्रति।।69।।

779. जातान् चावाङ्मुखान्राजपुरुषः सोदकोऽथवा।
सुहृद्वा कश्चिदादाय शाखां कण्टकिसंयुताम्।।70।।

780. तावन्निवारयेन्मावतरतेत्यथ तं प्रति।
कुर्वीरन्न पुनरवतरिष्याम इतीरणम्।।71।।

781. प्रकीर्य केशान् प्रक्षिप्य पांसूस्ते एकवाससः।

अवगाह्य सकृत्सर्वे सलिले दक्षिणामुखाः।।72।।

782. आचम्य प्रेत इत्युक्त्वा गोत्रनाम विशेषतम्।
एतद्वासोदकं प्राप्नोत्विति बालपुरस्सरम्।।73।।

783. पीडयित्वार्द्रवासांसि केशवस्त्रं सनादिकम्।
त्रिःकुर्युरिवमाचम्य तीरे खात्वा ततोऽवटम्।।74।।

784. तत्र दर्भान्निधायास्मत् पितृतीर्थादिकं सदा।
अविस्मरन्तः प्रेतस्य गोत्रनाम विशेषतम्।।75।।

785. प्रेतशब्दं चतुर्थ्यन्तं उदीर्येतत्तिलोदकम्।
ददामीत्यमुमावर्त्य मन्त्रं च त्रीन् जलाञ्जलीन्।।76।।

786. दद्युस्तिलान्वितान् दर्भे प्रत्येकं बालपूर्वकम्।
ग्रामं प्रविश्य खात्वा च गृहद्वारे ततोऽवटम्।।77।।

787. शरावमवटे न्यस्य तत्राश्मानं निधाय च।
दद्युर्वासोदकं तत्र पूर्ववत् स्त्रीपुरस्सरम्।।78।।

788. प्रदीपवत्सयोः पश्चात् प्रविश्यान्तर्गृहं ततः।
उपलिप्ते प्रदीपेन ज्वलिते मृतभूतले।।79।।

789. स्वस्त्यस्तु वो गृहाणांशे शिवं वोस्त्वित्युदीरणम्।
वाससः पीडनं तत्र पूर्वमेवास्थिसञ्चयात्।।80।।

790. कुर्वन्तो विकिरेयुस्ते दूर्वास्सोदकतण्डुलाः।
प्रवेशयेयुर्वत्सं च संस्कर्ताथ मृतं प्रति।।81।।

791. एकं ब्राह्मणमामन्त्र्य तं वासस्तण्डुलादिकैः।
नग्नप्रच्छादनार्थाय पूजयेद्विभवाहतः।।82।।

792. आमैस्सन्तर्प्य पिण्डं च दर्भेष्वस्य समीपतः।
जलप्रदानमन्त्रेण दद्यात्पिण्डमिति ब्रुवन्।।83।।

793. दद्यादेवं द्वितीयादि दिवसेषु नवस्वपि।
द्वितीयदिवसे दद्युः पूर्ववच्चतुरोऽञ्जलीन्।।84।।

794. तृतीये पञ्चषड्दद्युः चतुर्थे पञ्चसप्तमे।

दद्युरेकैकवृद्ध्यैवमुत्तरेषु दिनेष्वपि।।85।।

७९५. दद्यात्तावन्ति विप्रेभ्यो भोजनानि च दाहकः।

इति सप्तचत्वारिंशत् खण्डः।।47।।

48. रजस्वलासंस्कारकारिका

रजस्वला प्रसूता च मृता चेदुद्धृतैर्जलैः।

796. स्नापयित्वा मृतां पावमानीभिः स्नापयेत्पुनः।।1।।

आच्छाद्यान्येन वस्त्रेण कुर्याद्दाहादिकं ततः।

797. अनुपेतकुमारीणां मरणे तु अमन्त्रके।।2।।

सम्मार्गदहने कुर्यात् तूष्णीमन्यज्जलक्रियाम्।

798. मन्त्रेण यावदाशौचमस्थिसञ्चयनादिकम्।।3।।

चौलपूर्वं खनेत्प्रेतमन्यत्सर्वं निवर्तते।

799. एतान्युत्सर्गविच्छेद वैधव्ये सति चेन्मृता।।4।।

उद्धृत्यावोक्ष्य ते कृत्वा विहारं पृथिवीतले।

800. दक्षिणं हस्तमरणिं स्पृष्टं कृत्वा मृतस्य च।।5।।

मथित्वोदीरयन्यस्याग्न इत्येवमादिकम्।

801. गार्हपत्यं निधायाग्निमितरत्र प्रणीय च।।6।।

स्रुवेण द्वादशावृत्या गृहीत्वा च घृतं स्रुचि।

802. होममाहवनीयाग्नौ कुर्यात् ध्यायन्प्रजापतिम्।।7।।

एवमुत्तपनीयाग्नौ यद्वा तप्तकपालके।

803. हुत्वानाहितवह्निं च विच्छिन्नाग्न्यादिकं दहेत्।।8।।

स्वारोपिताग्निमरणे तदीयं दक्षिणे करम्।

804. निधायोपावरोहेति लौकिकेऽग्नौ निधाय च।।9।।

विभजेन्मरणे पत्न्याः स्वयमेवावरोपयेत्।

805. मृतश्चेदरणिस्थाग्निं पाणिं प्रेतस्य दक्षिणे।।10।।

अरण्या संयुतं कृत्वा मथित्वाग्न्यवरोहणम्।

806. कृत्वा दहेद्यथापूर्वं दम्पती चेन्मृतौ सह।।11।।

संस्कुर्यात्सह नष्टं चेत् शवं मन्त्राग्निसंस्कृतम्।

807. कृष्णाजिने पलाशस्य वृन्तैर्दर्भसमन्वितैः।। 12।।
मृतप्रतिकृतिं कृत्वा चत्वारिंशद्दलैश्शिरः।

808. कुर्वीत दशभिर्ग्रीवामुरश्च द्विगुणैर्दलैः।। 13।।
त्रिंशतोदरमेकैकं कुर्यात्पञ्चाशता करौ।

809. एकैकपत्रैस्तेष्वेव कुर्यात्प्रत्येकमङ्गुलीः।। 14।।
प्रत्येकं पाणि सप्तत्या पादौ पूर्ववदङ्गुलीः।

810. कुर्वीत शिश्नमष्टाभिरण्डं द्वादशभिर्दलैः।। 15।।
वेष्टयित्वा कुशैः प्रेतबुध्या पूर्वोक्तवद्दहेत्।

811. अध्वर्युर्यजमानं तु श्रुत्वा देशान्तरे मृतम्।। 16।।
कृत्वा प्रतिकृतिं इष्टिं तदर्धविहितानलान्।

812. धारयेन्मृतवत्सां गौर्यान्यवत्सेन दुह्यते।। 17।।
दोहयित्वा पयस्तस्याः प्राचीनावीति संयुतः।

813. दक्षिणे गार्हपत्यार्धेऽश्रितेधिश्रित्य भस्मनि।। 18।।
दक्षिणाग्नेः परिस्तीर्य दक्षिणाग्रस्य तत्सकृत्।

814. जुहुयात्सकलं तूष्णीं परिषेकादि वर्जयेत्।। 19।।
एवं नित्याहुतिं हुत्वा तैलद्रोणिगतं शवम्।

815. शकटेन श्मशानं तु नीत्वा पूर्वोक्तवद्दहेत्।। 20।।
आदध्याधारयेत्तत्र समिधं प्राशनं त्यजेत्।

816. गत्वा प्रेतसमीपं च तैलद्रोण्यां निधाय च।। 21।।
शकटेन श्मशानं तु नीत्वा पूर्वोक्तवद्दहेत्।

817. तत्रैवामन्त्रकं दग्ध्वा लौकिकेनैव वह्निना।। 22।।
भाजने मृण्मयं कुर्वन् ब्रह्मचर्यं समाचरेत्।

818. कृष्णाजिनेन सन्दह्य तदर्थानि समापये।। 23।।
नीत्वा तत्रैव तान्यस्थीस्तैरेव विधिवद्दहेत्।

819. दम्पत्योर्युगपत्स्याच्चेन्मरणे युगपद्दहेत्।। 24।।

सर्वोपासनभागेन आहिताग्निं दहेत्सुतः।

820. कपालतपनेनैव ततोत्तपनकेन च।।25।।
आज्यं द्वादश चादाय स्रुवेण जुहुयात्तयोः।

821. उपनीतं तु संस्कुर्यात् कपालतपनाग्निना।।26।।
स्त्रियमुत्तपनीयेनानुपनीतं कुमारिणा।

822. अमन्त्रकं भवेन्नित्यं दहनं याजनं तयोः।।27।।
अथवा तोयदानं च भवेदेकं तयोरपि।

823. न स्यादकृतचौलानामस्थिसञ्चयनादिकम्।।28।।
भद्रे त्रिपदि नक्षत्रे भृग्वङ्गारकयोर्दिने।

824. बृहस्पतेश्च मरणं दहनं वा भवेद्यदि।।29।।
तत्कर्म त्रिगुणं भावि तस्मादेतत्समाचरेत्।

825. प्रेत प्रतिकृतिं कृत्वा शालिपिष्टेन तं पुनः।।30।।
निधाय शूर्पसंस्कारं ब्राह्मणानामयं विधिः।

826. योस्याग्निरिति मन्त्रेण संस्कारं तत्र कारयेत्।।31।।
दग्ध्वा तत्रैव चास्थीनि बध्वा कृष्णाजिने व्रती।

827. दहेत्पूर्ववदानीय विप्राणामस्थिसञ्चितम्।।32।।
चतुर्थे दिवसे कुर्यात् स्नात्वा वासस्तिलोदकम्।

828. दत्वा शरावं साश्मानमुद्धृत्यापूर्यतावटम्।।33।।
पिण्डं दत्वा गृहीत्वाज्य शैवले तिलतण्डुलान्।

829. शाखा वापूपधानाश्च स्थालीवीरणकर्दमान्।।34।।
फलपुष्पतिलादींश्च श्मशानं प्राप्य चोल्मुकम्।

830. शवाग्नेर्दक्षिणावोह्य मथित्वानुगतो यदि।।35।।
प्रायश्चित्तं विधायापि प्राजापत्यान्तपञ्चकम्।

831. निरुप्य च यमायत्वा जुष्टमित्यादिना चरुम्।।36।।
श्रपयेच्चरुतन्त्रेण ततश्च जीवतण्डुलम्।

832. उद्वास्य दक्षिणेनाग्निं न चेत्प्रत्यभिघारणम्।।37।।

कुर्वीत नाज्यभागौ च नोपस्पृत्यभिघारणे।

833. प्रपदं न जपेन्नात्र स्विष्टकृद्धोममाचरेत्।।38।।

दर्व्या गृहीत्वा तु सकृच्चरोः स्वाहेत्युदीरयन्।

834. हुत्वाथ सोमाय पितृमत इत्यनुनिर्दिशेत्।।39।।

स्वाहाग्नये पितृमत इत्येवं जुहुयात्ततः।

835. एवमेव पुनः स्वाहाग्नये कव्याद इत्यपि।।40।।

ततः स्वाहाग्नये कव्यवाहनायेत्यनेन च।

836. एवं स्वाहा यमायेति हुत्वा स्वाहेत्यनन्तरम्।।41।।

यमीयमाभ्यामित्युक्त्वा तद्वत्स्वाहा विवस्वते।

837. इति हुत्वोर्ध्वतन्त्रं च कृत्वौदुम्बरशाखया।।42।।

अस्थीन्यार्द्राणि कुर्वीत क्षीराम्बुभिरवोक्षणात्।

838. मूर्ध्न्युरः पार्श्वहस्ते च पादयोरपि कृत्स्नशः।।43।।

अस्थीन्यादाय पालाशसन्दंशेनाप्रदक्षिणम्।

839. औदुम्बरेण वातानि पलाशस्य दले ततः।।44।।

तस्य दक्षिणतः कुम्भे वहेममिति मन्त्रतः।

840. प्रक्षिप्यास्थीनि तं सर्पिदधिक्षीरमधूदकैः।।45।।

पूरयित्वोपरि स्वर्णं कुम्भे न्यस्याथ भूतले।

841. प्राचीमुल्लिख्य रेखां च तत्र प्राग्वाहिनीं नदीम्।।46।।

बुध्या सरस्वती वारि निनीयात्सु च तं घटम्।

842. प्लावयित्वा खनित्वा च वृक्षमूले ततो घटम्।।47।।

कुम्भं सुरक्षितं तत्र निधायापूर्य चावटम्।

843. समूह्य छादयित्वा च भस्मकर्दमशैवलैः।।48।।

स्थापयेद्वीरणस्तम्भं तत्र मूलशिखान्वितम्।

844. प्रच्छाद्य पत्रपुष्पैश्च पुष्पैस्तत्र मृताकृतिम्।।49।।

कृत्वा भक्षादि दत्वा च यदन्नमवशेषितम्।

845. तत्प्रेतराजाय नमः प्रेतायेति प्रदाय च।।50।।

निनयेज्जलपात्रं च कर्तान्यश्चेत्सुतादिकम्।
846. तस्मै दद्यादनड्वाहं कंसवासश्च दक्षिणा।।51।।
जलप्रदानस्थानं तु तदहं प्रेतबान्धवाः।
847. न गच्छेयुश्चतुर्थेऽह्नि पञ्चमे नवमेऽपि च।।52।।
आमन्त्र्य विप्रमेकैकमेकोद्दिष्टप्रकारतः।
848. दद्याच्छक्त्यानुरोधेन संस्कर्ता भोजनादिकम्।।53।।
इति अष्टाचत्वारिंशत् खण्डः।।48।।

49. दशाहकारिका

केशादि वापयित्वाथ ज्ञातयो दशमेऽहनि।
849. स्नात्वोदकं प्रदायाग्न आयूँषीत्यादिना रविम्।।1।।
उपस्थाय जपेयुस्ते पश्येमेत्यादिकं सह।
850. ग्रामश्मशानयोर्मध्ये वृक्षमूलेऽथवाध्वनि।।2।।
आस्थाय दाहकोऽश्मानमासित्वानडुहत्वचि।
851. लौकिके घृततन्त्रेण वह्नौ सञ्चयनोदितैः।।3।।
कुर्यात्सप्ताहुतिः स्वाहा सोमायेत्यादि सप्तभिः।
852. न ब्रह्मेहास्ति पुण्याहं वाचयेद् ज्ञातयस्ततः।।4।।
ब्रूयुर्जीवन्तु शरदश्शतमित्यागता गृहम्।
853. वेश्मन्यामनुसंस्कर्ता प्रविश्य पयसा सह।।5।।
ब्राह्मणान्भोजयेदेकोद्दिष्टमेकादशेऽहनि।
854. कुर्यात्प्रकृतितस्तावत्पार्वणश्राद्ध उच्यते।।6।।
इति एकोनपञ्चाशत् खण्डः।।49।।

50. अमावास्यापार्वणश्राद्धकारिका

अमावास्यापराह्णे तत्कुर्यादारभ्य पञ्चमी।
855. पक्षे परस्मिन् तिथिषु कुर्याद्वा यासु कासुचित्।।1।।
विप्रानामन्त्र्य पूर्वेद्युः श्रुतवृत्तादिसंयुतान्।
856. पूर्वाह्णे प्राङ्मुखान्युग्मान् दैवार्थं तेषु कांश्चन।।2।।

उपवेश्याथ पित्रादेरेकैकस्या युजो वरान्।
857. उदङ्मुखाश्च तत्पार्श्वे दक्षिणे तूपवेशयेत्॥3॥
द्वौ वा देवे परत्र त्रीनेकैकमुभयत्र वा।
858. एवं मातामहादेश्च मातुलाद्या न सन्ति चेत्॥4॥
आहृत्य दक्षिणाग्रत्वं प्राचीनावीति संयुतः।
859. दक्षिणाशामुखो भूत्वा पित्र्याणि पितृतीर्थतः॥5॥
देवपूर्वं सदा कुर्यात् प्रश्नेष्वासीत सर्वदा।
860. तिलान्प्रकीर्य तद्देशे नावपेदोदनादिषु॥6॥
तिस्रः कर्षूरुदक्पूर्वं खनित्वा प्राङ्गणादिषु।
861. निधाय दर्भौ पूर्वस्यां दर्भमेकैकमन्ययोः॥7॥
आसनक्रमतस्तेषां कर्षूषु खननक्रमात्।
862. पादप्रक्षालनं कुर्यात् सलिलैस्तिलमिश्रितैः॥8॥
द्वौ दर्भावासनं दद्याद्दैवे द्विगुणखण्डितान्।
863. दर्भान्पित्र्ये ततस्तेषां पादप्रक्षालनं क्रमात्॥9॥
गृहीत्वा दक्षिणं पाणिमात्मदक्षिणपाणिना।
864. वृणीत पार्वणश्राद्ध इति तत्राग्रतो वदेत्॥10॥
ततो विश्वेभ्य इत्यादि पितृभ्यश्चेति च क्रमात्।
865. ब्रूयादन्ते च सर्वत्र क्षणः कर्तव्य इत्यपि॥11॥
ओं तथेति वृतो ब्रूयात्तं प्राप्नोतु भवानिति।
866. ब्रूयात्कर्ता प्रतिब्रूयात्प्राप्नुवानीति चेतरः॥12॥
तैलेनाभ्यज्य दद्याच्च ताम्बूलाद्यथ पूर्ववत्।
867. स्नातेषु पादान् प्रक्षाल्य वृत्वा दत्वासनानि च॥13॥
दैवार्थान्प्रत्यथ ब्रूयाद्विश्वान् देवानिति द्विजान्।
868. आवाहयिष्य इति तैरोमावाहयेति तु॥14॥
उक्ते देवानथावाह्य विश्वेदेवास इत्यृचा।
869. पित्राद्यावाहनानुज्ञां लब्ध्वान्ये पितृपूर्ववत्॥15॥

तानेत पितरस्सोम्यास इत्यावाह्य मन्त्रतः।

870. प्राप्ते प्रत्येकमेकस्मिन् निर्मितैर्यज्ञियैर्द्रुमैः।।16।।
सपवित्रे निनीयापः शन्नो देवीत्यृचं वदन्।

871. यवोसि धान्यराजानो वारुणो मधुसंयुतः।।17।।
निर्णोदः सर्वपापानां पवित्रमृषिभिः स्मृतम्।

872. इत्युक्त्वा तण्डुलान्दैवपात्रे प्रथममावपेत्।।18।।
पितृपात्रे तिलोसीति तिलान्पात्रान्तरेष्वपि।

873. स्वधानिनयनात् पूर्वं पात्राणि न विचालयेत्।।19।।
दत्वा भोजनपात्राणि तेभ्योऽन्नं वरणक्रमात्।

874. या दिव्या इत्यमु मन्त्रं प्रतिद्विजमुदीरयन्।।20।।
तत्तत्पात्राश्रितं दद्यात्सपवित्रेषु पाणिषु।

875. आद्यन्तयोर्जलं चान्यद्दैवमन्त्रस्य चान्ततः।।21।।
विश्वेदेवा इदं वोऽर्घ्यमित्युदीर्येतरत्र च।

876. नामान्युक्त्वा पितरिदं ते अर्घ्यमित्यादिकं वदेत्।।22
शिरस्सु निनयेयुस्ते विप्रा अस्त्वर्घ्यमित्यपि।

877. तेभ्यः पवित्राण्यादाय पात्रेषु प्रक्षिपेत्पुनः।।23।।
प्रदाय गन्धमाल्यानि धूपदीपान्तराणि च।

878. घृताक्तमन्नमुद्धृत्यताननुज्ञापयेद्द्विजान्।।24।।
अग्नौ करिष्य इत्येवं वदेयुः ते च कुर्विति।

879. मेक्षणेनोपवीत्यन्नं स्वाहेत्यौपासनाऽनले।।25।।
हुत्वाथ सोमाय पितृमत इत्यनुनिर्दिशेत्।

880. हुत्वा स्वाहाग्नये कव्यवाहनायेत्यनेन च।।26।।
शेषं प्रक्षिप्य पात्रेषु प्रभूतं पुनरोदनम्।

881. तेभ्यो भोजनपर्याप्तं प्रदाय व्यञ्जनान्वितम्।।27।।
पात्राण्यादाय पृथिवीत इत्यादि जपेत्क्रमात्।

882. उक्त्वेदं विष्णुरित्याद्या अङ्गुष्ठेनाग्रजन्मनाम्।।28।।

क्रमादन्नेऽवधायान्ते पित्रे कव्यमिति ब्रुवन्।

883. तूष्णीं दैवानि पात्राणि परिषिञ्चेत्प्रदक्षिणम्॥29॥
ततोऽप्रदक्षिणं पात्रान्तराण्यपहता इति।

884. अश्नत्सु व्याहृतीस्तिस्रः सावित्रीं च जपेत्क्रमात्॥30॥
गायत्रं च तथेदँ ह्य इति दैवीं च संहिताम्॥

***

885. यद्वा उ इति पित्र्यां तु व्याहृत्याद्युक्तपूर्विकाम्।
तृप्तान् ज्ञात्वा द्विजान् ब्रूयात्तृप्तास्वेति द्विजानपि॥1॥

886. तृप्तास्म इति तं ब्रूयुर्नमो व इति कर्मकृत्।
जपित्वा अन्नमादाय दैवोच्छिष्टसमीपतः॥2॥

887. असोमपाश्च ये देवा यज्ञभागविवर्जिताः।
तेषामन्नं प्रदास्यामि विकिरं वैश्वदैविकम्॥3॥

888. इति प्रकीर्य ये त्वग्निदग्धा इत्यादिना ततः।
समीपे पितृपात्रस्य प्रकीर्य ब्राह्मणाँस्ततः॥4॥

889. अन्नशेषैः किं क्रियतामिति पृच्छन् द्विजैस्ततः।
सहोपभुज्यमिष्टैरिति तैरपि चोदितम्॥5॥

890. तिस्रः कर्षूरुदक्पूर्वं खनित्वोच्छिष्टसन्निधौ।
उपर्यास्तीर्य दर्भांश्च तत्रान्वष्टक्यकर्मवत्॥6॥

891. कुर्याद्गन्धप्रदानान्तं उल्मुकासादनादिकम्।
आदाय त्वर्घ्यपात्रेभ्यः कर्षूषु निनयेदपः॥7॥

892. अन्नेन भुक्तशिष्टेन व्यञ्जनाद्यादिभिस्सह।
यद्यत्पिण्डान् पुनः कर्षूः खननादि यथोदितम्॥8॥

893. कुर्यान्मातामहाद्यश्च ततो निह्नवनादिकम्।
कुर्यान्नमो व इत्यादि मन्त्रैर्वगद्वयैः क्रमात्॥9॥

894. ऊर्जं वहन्तीरित्युक्त्वा कृते कर्ष्वनुमन्त्रणे।
आचान्तेषु तु विप्रेषु तेभ्यः पुष्पोदकाक्षतान्॥10॥

895. प्रदाय वाचयेद्विप्रान् सर्वानक्षय्यमस्त्विति।
अक्षय्यमस्त्वित्युक्त्वा तस्मै विप्रास्ततोऽक्षतान्।।11।।

896. पृच्छेत्स्वधां वाचयिष्य इति तैर्वाच्यतामिति।
उक्ते पितृभ्य इत्यादि वदेदस्तु स्वधेऽपि च।।12।।

897. प्रतिब्रूयुस्ततस्तत्तदर्घ्यपात्रस्थिता आपः।
ऊर्जं वहन्तीरित्युक्त्वा तत्तत्पिण्डस्य सन्निधौ।।13।।

898. क्रमादानीय तान् ब्रूयात् स्वधा सम्पद्यतामिति।
विप्राश्च तान् प्रतिब्रूयुरस्तु सम्पद्यतामिति।।14।।

899. ताम्बूलादि प्रदायाथ प्रयच्छेद्भुक्तदक्षिणाम्।
अन्नं च नो बहुभवेदतिथींश्च लभेमहि।।15।।

900. याचितारश्च नस्सन्तु मा च याचिष्म कञ्चन।
दातारो नोऽभिवर्धन्तां वेदास्सन्ततिरेव नः।।16।।

901. श्रद्धा च नो मा व्यगमद्बहुदेयं च नोऽस्त्विति।
विप्रान्प्रदक्षिणीकृत्य योषिद्बालपुरस्सरम्।।17।।

902. सर्वैः पुत्रादिभिस्सार्धं नमस्कुर्यात्ततः पितृन्।
उद्वास्य पश्चाद्देवाँश्च वाजे वाजे वदेत्यृचम्।।18।।

903. तेषां हस्तान् गृहीत्वा तान् गृहान्निर्गमयेद्बहिः।
ततः किञ्चिदनुव्रज्य प्रत्यावृत्य प्रदक्षिणम्।।19।।

904. गृहं प्रविश्य गीत्वा च वामदेव्यं ततस्तृचे।
तैर्भुक्तशिष्टमश्नीयादेकोद्दिष्टमथोच्यते।।20।।

इति पञ्चाशत् खण्डः।।50।।

51. एकोद्दिष्टकारिका

905. दशम्यामेकमामन्त्र्य रात्रौ विप्रं परेऽहनि।
एकां कर्षूं खनित्वादौ प्राचीनावीतिसंयुतम्।।1।।

906. निधाय दक्षिणाग्रांश्च दर्भास्तं प्राङ्मुखं द्विजम्।
उपवेश्य ततः पादौ प्रक्षाल्य सतिलैर्जलैः।।2।।

907. उपविश्योदगग्रेषु दर्भेषु तमुदङ्मुखम्।
गृहीत्वा दक्षिणं पाणिं तस्य दक्षिणपाणिना।।3।।

908. प्रेतशब्दं चतुर्थ्यन्तं गोत्रनामविशेषितम्।
उक्त्वैकोद्दिष्टशब्देन श्राद्धशब्दं विशेषयन्।।4।।

909. श्राद्धे क्षणः कार्य इति निर्दिशेदों तथेति तु।
भोक्ता पार्वणवच्चान्यत् ब्रूयातामितरेतरम्।।5।।

910. अभ्यज्य दद्यात् पूगादि स्नात्वा मध्याह्न आगते।
पादप्रक्षालनं कुर्यात् वरणादीनि पूर्ववत्।।6।।

911. पवित्रान्तर्हिते पात्रे सलिलं शन्न इत्यृचा।
गृहीत्वा गन्धसंयुक्तं तिलोऽसीत्यावपेत्तिलान्।।7।।

912. नास्मिन् श्राद्धे स्वधाशब्दो नमश्शब्दानुदीरयन्।
पितृशब्दस्य च स्थाने प्रेतशब्दं सदा वदेत्।।8।।

913. स्त्रीमृतौ स्त्रीविभक्त्यूहं सदा कुर्यादविस्मरन्।
भोजनार्थं प्रदायाथ पत्रं तस्मै जलान्तरम्।।9।।

914. निनीय दक्षिणे पाणौ पवित्रं त्वर्घ्यपात्रतः।
आदायान्यस्य तद्धस्ते या दिव्या इति मन्त्रतः।।10।।

915. अर्घ्यं प्रयच्छेन्मन्त्रान्ते प्रेतशब्दं सनामकम्।
उक्त्वा संबुद्धिसंयुक्तं एतत्तेऽर्घ्यमुदीरयेत्।।11।।

916. शिरस्यवनयेदर्घ्यं भोक्ताऽस्त्वर्घ्यमिति ब्रुवन्।
कर्ता जलान्तरं दत्वा पवित्रं पात्र आवपेत्।।12।।

917. गन्धपुष्पाम्बराण्यस्मै दत्वा क्षेत्रधनानि च।
सर्वव्यञ्जनसंयुक्तं अन्नं पात्रे निधाय च।।13।।

918. पात्रमालभ्य पृथवीत इत्यङ्गुष्ठमोदने।
निधाय भोक्ता वैष्णव्या विष्णो कव्यमिति ब्रुवन्।।14।।

919. प्रसव्यं परिषिच्याद्भिः उदीर्यापहता इति।
व्याहृत्यादि जपेत्पित्र्यवर्गं चाश्नत्यथ द्विजान्।।15।।

920. तृप्तोऽसीति वदेत्तृप्त तृप्तोऽस्मीति द्विजो वदेत्।
ते प्रेतेत्यादिकं मन्त्रं जपेत् प्रेतः पिता यदि।। 16।।

921. ये त्वग्निदग्धा इत्यन्नं प्रकीर्योच्छिष्टसन्निधौ।
अन्नशेषैः किं क्रियतामिति पृच्छेत् सचोत्तरम्।। 17।।

922. इष्टैस्सहेति भोक्ता च भुज्यतामिति वाचयेत्।
एकां कर्षूं खनित्वाथ तावत् कर्ष्वनुमन्त्रणम्।। 18।।

923. कुर्यात्पार्वणवत्पिण्डं चैकं दद्यान्मृतं प्रति।
न विस्मरेत्सदा मन्त्रेषूहमाचमने कृते।। 19।।

924. पुष्पाक्षतानि दत्वोपतिष्ठतामिति वाचयेत्।
भोक्ता दत्वाक्षतानीय प्रदाय भूरिदक्षिणाम्।। 20।।

925. ताम्बूलादि प्रदत्वा च नम इत्यादि कीर्तयेत्।
भोक्ता चोक्त्वा कनिष्ठस्त्रीपूर्वं कृत्वा प्रदक्षिणम्।। 21

926. छत्रोपानट् पवित्राणि जलपात्राञ्जनेऽपि च।
कुण्डले चाङ्गुलीयं च प्रदाय प्रणिपत्य च।। 22।।

927. उद्वास्य चाभिरमतामित्यनुव्रज्य तद्विजम्।
प्रदक्षिणं परावृत्य वामदेव्यं तृचे जपेत्।। 23।।

928. प्रक्षिप्य सलिले पिण्डमश्नीयाच्छेषमाप्लुतः।
नोच्छिष्टमार्जनं कुर्यात् यावदस्तमयं रवेः।। 24।।

929. पयोव्रतोऽवगाहेत समुद्रमथवा जपेत्।
सावित्रीं दशसाहस्रं पुण्याहं वाचयेत्ततः।। 25।।

930. एवमेव द्वितीयादि मासेष्वेकादशेष्वपि।
पक्षे तृतीये षष्ठे च मासे पूर्णे च वत्सरे।। 26।।

931. यस्यां तिथौ मृतस्तस्यामेकोद्दिष्टं समाचरेत्।
मृतमासे मृततिथौ कुर्याच्च प्रतिवत्सरम्।। 27।।

932. एकैकं प्रत्यहं विप्रं भोजयेदाद्यवत्सरे।।

इति एकपञ्चाशत् खण्डः।। 51।।

52. सपिण्डीकरणकारिका

पूर्णे संवत्सरे कुर्यात् सपिण्डीकरणक्रियाम्।
933. षष्ठे मासि चतुर्थे वा तृतीये द्वादशेऽह्नि वा।।1।।
कुर्याद्वा पञ्चदशेऽह्नि तत्राब्दा पूर्वमाचरेत्।
934. प्रतिकृष्याग्रतः कुर्यात् मासिकादीन्यपि क्रमात्।।2।।
अन्नं त्वहरहर्दद्यात् तस्मिन् पक्षे च सोदकम्।
935. द्वौ देवौ त्रींश्च पित्रादीन् त्रीन् प्रत्येकं मृतं प्रति।।3।।
एवमामन्त्र्य षड्विप्रान् पूर्वेद्युः पितृदैवते।
936. कुर्यात्पार्वणवच्छेषं एकोद्दिष्टवदाचरेत्।।4।।
प्रेतशब्दं चतुर्थ्यन्तं प्राचीनावीतिसंयुतः।
937. पितृतीर्थान्यपि स्मृत्य कुर्यात्पैत्रार्थमन्त्रतः।।5।।
दैवार्थं प्राङ्मुखौ विप्रौ तयोर्दक्षिणतो वरान्।
938. उदङ्मुखान् पुरोदेशे तेषां प्रत्यङ्मुखं द्विजम्।।6।।
प्रेतार्थमाशयेदेवं भोजयेदुपवेशनम्।
939. त्रीन् कुण्डानुदगारभ्य खात्वा दर्भे उदक्तने।।7।।
निधाय दर्भमेकैकं प्रक्षिप्येतरकुण्डयोः।
940. प्रक्षाल्योदक्तने कुण्डे पादान् दैवार्थविप्रयोः।।8।।
मध्यमे तिलमिश्राद्भिः पित्राद्यर्थद्विजन्मनाम्।
941. प्रेतार्थस्योत्तमे दर्भो इदं वेदतेतरत्रयम्।।9।।
दत्वा दर्भान् द्विधा भुग्नान् गोत्रनामविशेषतम्।
942. प्रेतशब्दं चतुर्थ्यन्तं उक्त्वा पार्वणवत्क्रमात्।।10।।
सपिण्डीकरणश्राद्धमिति श्राद्धं विशेषयन्।
943. वृणीत तद्वद्देवस्यादों तथेत्याद्युदीरणम्।।11।।
निमित्ते क्षण इत्येवं प्रेतार्थवरणं भवेत्।
944. तैलेनाभ्यज्य दद्याच्च ताम्बूलाद्यविधानतम्।।12।।

वरणासनदाने च कुर्यात्स्नानेषु पूर्ववत्।

945. दैवार्थौ ब्राह्मणौ विश्वान्देवानित्येवमादिना।। 13।।
अभ्यर्थ्यावाहनानुज्ञां ताभ्यामोमुक्तिपूर्ववत्।

946. आवाहयेत्यनुज्ञातो विश्वेदेवास इत्यृचा।। 14।।
देवानावाह्य पित्रादीन् विप्रानभ्यर्चयेत्ततः।

947. पितृनावाहयिष्येतमिति तैरपि पूर्ववत्।। 15।।
उक्ते सत्येतपितर इत्युक्त्वावाहयेत्पितॄन्।

948. निधाय पञ्चपात्राणि सपवित्रेषु तेषु च।। 16।।
एकस्मिन् निनयेद्वारि दैवार्थं शन्न इत्यृचा।

949. तथैव तेषु पात्रादेः प्रेतार्थं पञ्चमेऽपि च।। 17।।
प्रक्षिप्य तण्डुलान् तूष्णीं दैवपात्रे परेषु तु।

950. तिलोऽसीत्यादि मन्त्रेण तिलान् प्रत्येकमावपेत्।। 18
प्रेतार्थे च सदा(स्वधा) प्रेतशब्दावपि न विस्मरेत्।

951. ततो भोजनपात्राणां दानं वार्यतरस्य च।। 19।।
या दिव्या इति मन्त्रेण सपवित्रेषु पाणिषु।

952. अर्घ्यदानं च विप्राणामस्त्वर्घ्यमितिकीर्तनम्।। 20।।
शिरस्यभ्युक्षणादात्व पुनर्वार्यन्तरस्य च।

953. पवित्रावापनं दानं गन्धमाल्यादिकस्य च।। 21।।
सघृतान्नं गृहीत्वाग्नौ करिष्य इति कीर्तनम्।

954. कुर्वित्युदीरिते स्वाहेत्यादि सोमा इति द्वयम्।। 22।।
हुतशिष्टप्रदानं च व्यञ्जनाद्यादिभिस्सह।

955. पात्राण्यालभ्य पृथिवीत इत्यादेरुदीरणम्।। 23।।
अङ्गुष्ठमवधायान्न इदं विष्णु रितीरिणम्।

956. मन्त्रे च हव्यकव्योक्तिर्देवपित्र्यादिषु क्रमात्।। 24।।
तूष्णीं प्रदक्षिणं देव परत्रापहता इति।

957. प्रसव्य परिषेकश्च व्याहृत्यादिरपोशने।। 25।।

तथैवेदँह्य इत्यादेर्यद्धेत्यादेश्च कीर्तनम्।

958. तृप्तेषु तृप्तास्थेत्येव एवमेव द्विजान् प्रति।।26।।
तृप्तास्म इति तैरुक्ते नमो व इति कीर्तनम्।

959. दैवोच्छिष्टस्य पार्श्वेऽन्नप्रक्षेपासोमपा इति।।27।।
येत्वग्नीत्यादिनान्नस्य विधानमितरस्य च।

960. प्रश्नोऽन्नशेषैरित्यादिरिष्टैरित्यादि चोत्तरम्।।28।।
खात्वा कर्षूस्त्रयं दर्भैस्तरणस्य (तु)चोपरि।

961. उल्मुकासादनं पार्श्वे दक्षिणेऽपहता इति।।29।।
कर्षूष्वावाहनं चैत पितरित्यादिना क्रमात्।

962. गृहीत्वापोऽर्घ्यपात्रेभ्यस्तत्तन्नामोक्तिपूर्वकम्।।30।।
उदीर्य पितरित्यादि प्रतिकर्ष्ववने जलम्।

963. मन्त्रे भुङ्क्ष्वेति निर्दिश्य दानं पिण्डत्रयस्य च।।31।।
निमित्ते पिण्डमेकं च तत्पार्श्वे च निवेदयेत्।

964. जपित्वा चात्र पितर इति भूरादिकीर्तनम्।।32।।
उदग्भागे करं सव्यं समाहृत्य प्रसारणम्।

965. अप्रदक्षिणमावृत्तिः प्राणायामेप्सित स्मृतिः।।33।।
प्रत्यावृत्य जपश्चामी मदन्तेत्यथ पूर्ववत्।

966. कर्षूष्वञ्जनदानं च तैलं चन्दनयोरपि।।34।।
अंक्ष्वाभ्यंक्ष्वानुलिम्पेति मन्त्रोहस्तत्र तत्र च।

967. निधाय पूर्वखातायां कर्ष्वा पश्चात्करद्वयम्।।35।।
प्रागग्रं दक्षिणोत्तानं शूषायेत्यन्तकीर्तनम्।

968. सव्योत्तानं निधायैव मध्यमायास्तु पश्चिमे।।36।।
रसायेत्यन्तनिर्देश उत्तमायां च पश्चिमे।

969. निधाय दक्षिणोत्तानं मन इत्याद्युदीरणम्।।37।।
नमस्काराञ्जलिं कृत्वा नमो व इति कीर्तयेत्।

970. प्रदानं वस्त्रतन्तूनामेतद्व इति मन्त्रतः।।38।।

पिण्डां स्त्रिः परिषिच्योर्जमिति कर्ष्वनुमन्त्रणम्।
971. कार्याण्येतान्यविस्मृत्य पार्वणश्राद्धवत्क्रमात्॥39॥
कृत्वैकोद्दिष्टवत्कर्षूः खननादि मृतं प्रति।
972. जलं प्रेतार्घ्यपात्रस्थं कृते कर्ष्वनुमन्त्रणे॥40॥
ये समानास्समनस इति मन्त्रमुदीरयन्।
973. त्रिषु पात्रेषु पित्रादि निनयेद्विभजेत्त्रिधा॥41॥
पित्रादेस्त्रिषु पिण्डेषु प्रेतपिण्डं त्रिधा कृतम्।
974. ये सजातास्सजाताजी इति मन्त्रेण मिश्रयेत्॥42॥
सपिण्डीकरणे स्त्रीणां भर्तुः पित्रादिकं प्रति।
975. दत्वा पिण्डत्रयं तेषां स्त्रीभ्यो ह्येवं प्रदाय च॥43॥
प्रेतायै च प्रदायैकं तत्स्त्रीपिण्डेषु योजयेत्।
976. आचान्तेष्वविशेषेण सर्वैरक्षय्यवाचनम्॥44॥
स्वधाय वाचने प्रश्न उत्तरं वाच्यतामिति।
977. पितृभ्य इति मन्त्रोक्तिस्तं प्रत्यस्तु स्वधेति च॥45॥
प्रत्युक्तिरूर्जमित्यादि मन्त्रतः पिण्डसन्निधौ।
978. अस्त्वर्घ्यावसेचनं भूयः स्वधा संपद्यतामिति॥46॥
उक्त्वा प्रत्युत्तरे विप्रैरस्तुसम्पद्यतामिति।
979. ताम्बूलादिस्ततो भुक्तदक्षिणायाश्च भक्तितः॥47॥
शनं पित्र्यैषु नश्चान्नं त्वन्न इत्यादि वाचनम्।
980. प्रदक्षिणनमस्कारौ वाजे वाजे वदेत्यृचा॥48॥
उद्वास्य पितृपूर्वान्ताननुत्सृज्य प्रदक्षिणम्।
981. निवृत्य वामदेव्यस्य गानं शेषान्नभोजनम्॥49॥
इत्येतान्यवधानेन कुर्यात्पार्वणवत्क्रमात्।
982. एतत्सर्वमपुत्रस्य सपिण्डादि समाचरेत्॥50॥

इति द्विपञ्चाशत् खण्डः॥52॥

***

53. काम्यकर्मकारिका

आदितो वक्ष्यमाणेषु काम्येषु च दिनत्रयम्।
983. न भुञ्जीत त्रिकालं वा काम्ये नैमित्तिकात्मके।।1।।
गृह्ये च यजनीयोक्ता विहिते वेतदन्ततः।
984. कुर्यात्प्रागादि तेष्वन्त पुण्याहमपि वाचयेत्।।2।।
ब्रह्मवर्चस कामोग्र उपोष्य त्रिदिनादिकम्।
985. प्रागग्रेषु समासीनो दर्भेषु प्राङ्मुखो वने।।3।
अभ्यस्येत् प्रपदं कामं ध्यायन्नष्टोत्तरं शतम्।
986. उपविश्योदगग्रेषु पश्वर्थी गोष्ठमाश्रितः।।4।।
जपेदेनं पशूनां वा स्वस्मयं कामयेत्ततः।
987. सहस्रबाहुर्गौपत्यरिति स्वाहेति चाहुती।।5।।
व्रीहिभिर्यवसम्मिश्रैर्जुहुयान्नित्यहोमवत्।
988. य इच्छेत् केनचित्सख्यमौदुम्बरफलानि च।।6।।
जपित्वा संस्पृशन्कौतो मत इत्येवमादिकम्।
989. तस्मै प्रयच्छेत् पृथिवीपतित्वं कामयेत्ततः।।7।।
अर्धमासमुपोष्यासौ यद्यशक्तः क्वचिद्दिने।
990. पीत्वा क्षीरादि पूर्वार्धो पौर्णमास्यां तथा निशि।।8।।
अशोषह्रदमासाद्य नाभिमात्रोदके स्थितः।
991. नित्यहोमवदास्येन सलिलेऽक्षततण्डुलान्।।9।।
जुहुयाद्वृक्ष इत्यादिभिः समिधं विना।
992. जुहुयादन्नवृध्यर्थं तेन सोमाभिवीक्षितम्।।10।।
आदित्यमुपतिष्ठेत वृक्ष इत्यादिकं वदन्।
993. गजाश्वादि समृद्धिं च य इच्छेच्छततण्डुलान्।।11।।
परिवेषे सति रवेः ऋतं सत्येत्यृचाहुतिम्।
994. स्वाहेति चोत्तरां कुर्यान्नित्यहोमस्य तन्त्रतः।।12।।
इच्छन्नजाविकावृद्धिं चन्द्रस्य परिवेषणे।

995. अभिभाग इति स्वाहेत्युक्त्वा च तिलतण्डुलैः।।13।।
आहुती पूर्ववत्कुर्यानस्मिन्कर्मद्वयेऽपि च।

996. उपवासं च पूर्वोक्तमन्ते कुर्यादविस्मरन्।।14।।
महत्प्रयोजनं प्राप्तुमिच्छन्कोश इवेत्यृचा।

997. उपस्थाय रविं कुर्यादुद्योगं वास्य सिद्धये।।15।।
कृत्वा तदर्थमुद्योगमाकाशस्यैष इत्यृचा।

998. सवितारमुपस्थाय प्रविशेत्स्वगृहं प्रति।।16।।
यद्वा यं कामेतद्धि आकाशस्येत्यृचां रविम्।

999. उपस्थाय गृहं गत्वा यतेत फलसिद्धये।।17।।
नाकाले मरणं मे स्यादित्येवं कामयेत्ततः।

1000. मन्त्रं भूर्भुव इत्यादि नित्यमामरणाज्जपेत्।।18।।
अलक्ष्मीपरिहारार्थी प्रतिपद्याज्यतन्त्रतः।

1001. स्थालीपाके कृते षड्भिः मूर्ध्नोधीत्येवमादिभिः।।19।।
तृचेन वामदेव्यस्तु तिस्रश्च व्याहृतीर्वदन्।

1002. हुत्वा प्रजापते नत्वदेतानीत्यनयापि च।।20।।
त्रिरात्रादुपवासन्तु कुर्यात्प्रागुक्तमन्त्रतः।

1003. जपेदध्वन्यपेहि त्वमित्यादि क्षेमवर्जितम्।।21।।
सूर्य यशोहमित्युक्त्वा यशोर्थी भुवनत्रयम्।

1004. उपतिष्ठेत तन्मन्त्रं प्रातर्ब्रूयाद्यथाश्रुतम्।।22।।
मध्याह्नस्येति सायाह्नस्येति चेतरसन्ध्ययोः।

1005. आदित्यनावमारोहमिति मन्त्रेण सन्ध्ययोः।।23।।
नित्यं कुर्यादुपस्थानमुद्यन्तन्त्वेति चान्ततः।

1006. प्रातर्मन्त्रं वदन् सायं प्रतितिष्ठतमित्यपि।।24।।
सञ्चिते यावता द्रव्ये ब्रूयुरसञ्चितवानिति।

1007. तथापि तं य इच्छेत द्रव्यं शतगुणान्वितम्।।25।।
अर्धमासमुपोष्यासौ पीत्वा शक्तौ घृतादिकम्।

1008. कृष्णपक्षे प्रतिपदि व्रीह्यन्नं कांस्यभाजने॥26॥
भोजयेत् ब्राह्मणं सायं कालेष्वारभ्य तां तिथिम्।
1009. गृहीत्वा सकलं वह्निं तद्व्रीहीणां कणानपि॥27॥
प्रत्यग्रामाद्विनिर्गत्य विधाय स्थण्डिलादिकम्।
1010. निधायाग्निं भलायेति भल्लायेत्यपि चाहुतिम्॥28॥
स्वाहान्तं तैः कणैः कुर्यात् नित्यहोमस्य तन्त्रतः।
1011. हुत्वैवं पूर्वमागामि कृष्णप्रतिपदान्विकम्॥29॥
ब्राह्मणान्भोजयेत्तस्यां प्रतिपद्यपि पूर्ववत्।
1012. उपवासमुपक्रम्य यावत्कर्मसमापनम्॥30॥
ब्रह्मचारी भवेद्देशो वासयोग्योऽथ कीर्त्यते।
1013. श्वभ्राश्मकण्टकीक्षीरकरको विधिवर्जिते॥31॥
स्निग्धे वा नूषरे प्रत्यगुदङ्ङिनम्ने तृणान्विते।
1014. वैश्यस्य ब्रह्मवर्चस्यो देशो दर्भसमन्वितः॥32॥
बाल्या बृहत्तृणैर्युक्तः पशव्यो मृदभिस्तृणैः।
1015. तत्र धन्यं यशस्यं च प्राग्द्वारं निर्मितं गृहम्॥33॥
सर्वार्थं दक्षिणे द्वारमुदग्द्वारं पशुप्रदम्।
1016. पुत्रांश्च तद्बहिर्द्वारं यस्यां दिशि विवर्जितम्॥34॥
प्राग्द्वारानृजुदेशस्यादन्तर्द्वारं चतुर्द्दिशि॥

इति त्रिपञ्चाशत् खण्डः॥53॥

54. वास्तुबलिकारिका

1017. कुर्याद्वास्तुबलिं काले पूर्वप्रोष्ठपदान्विते।
कृत्वान्तर्गृहपर्याप्तं दर्भरज्जुचतुष्टयम्॥1॥
1018. मध्ये शंकुन्निधायाष्टदिक्ष्वपि प्रागुपक्रमम्।
शंकुन्निधाय रज्जूनां मध्यानाबध्य मध्यमे॥2॥
1019. शंकुर्ष्वाबध्य चान्तानि प्रागारभ्य प्रदक्षिणम्।
अग्नौ निधाय तान् शंकुस्तत्स्थानेषूपविश्य च॥3॥

1020. शमीपलाशश्रीपर्ण पत्रपुष्पाक्षतैर्गृहम्।
प्रकीर्य मध्यमे स्थाने उपलेपादिपूर्वकम्।।4।।

1021. कृत्स्नं निधाय गृह्याग्निं पायसं चरुतन्त्रतः।
श्रपयेन्निर्वपेद्वास्तोष्पतये त्वेति मन्त्रतः।।5।।

1022. आज्यभागौ न कुर्वीत नोपस्तृत्यभिघारणे।
न च स्विष्टकृतं शेषप्रदानप्राशने अपि।।6।।

1023. गृहीत्वा पायसं जुह्वा अष्टकृत्वो घृतान्वितम्।
साम गीत्वा ततो धानावन्त इत्येवमादिकम्।।7।।

1024. जुहुयात्पायसं वास्तोष्पत इत्यादि मन्त्रतः।
पुनः पुनः गृहीत्वैव हये राकेत्युपक्रमम्।।8।।

1025. चतस्रो वामदेव्यर्चस्तिस्रश्च व्याहृतीः क्रमात्।
प्रजापत्यामृचं चोक्त्वा कुर्यादेकादशाहुतीः।।9।।

1026. कृत्वोपरितनं तन्त्रं मध्ये प्रागादि दिक्ष्वपि।
उपलिप्तेष्वपः पूर्वं परिषिच्यान्ततोऽपि च।।10।।

1027. प्रजापतय इन्द्राय वायवे च यमाय च।
पितृभ्यो वरुणायापि महाराजाय च क्रमात्।।11।।

1028. सोमाय च महेन्द्रायेत्येतैः स्वाहान्तनामभिः।
बलीन्पलाशपत्रेषु दद्यादादाय पायसान्।।12।।

1029. तेषु पित्र्यबलेर्दाने प्राचीनावीत्यपःस्पृशेत्।
दद्याद्वासुकये स्वाहेत्यवनौ यत्र कुत्रचित्।।13।।

1030. ततो ब्रह्मण इत्युक्त्वा बलिमूर्ध्वं क्षिपेत्ततः।
पुण्याहं वाचयित्वाथ ब्राह्मणानपि भोजयेत्।।14।।

1031. एवं च त्रिषु मासेषु प्रत्यब्दं वा समाचरेत्।
श्राद्धं वा पायसेनैकां कृष्णां तत्रालभेत गाम्।।15।।

1032. यद्वा श्वेतमजं तत्र प्रयोगस्त्वष्टकोक्तितः।
वास्तोष्पते प्रतेत्यूहो मन्त्रे प्रोक्षणसंश्रिते।।16।।

1033. वपां तनोत्तरे तत्र नाङ्गहोमं समाचरेत्।
जुहुयात्पायसं मिश्रं अवदाय रसेन च।।17।।

1034. वशङ्गमावित्येतेन जुहुयात्पायसाहुतिम्।
इदं कश्चिद्वशीकर्तुं कुर्वीत घृततन्त्रतः।।18।।

1035. असावित्यत्र तन्नाम मन्त्रयोस्समुदीरयन्।
अर्धमासमुपोष्याथ चिकीर्षं कस्यचिद्वधम्।।19।।

1036. पौर्णमास्यां रजन्यां तं हन्यमान भया स्मरेत्।
आकूतिमित्युदीर्यर्चमायसैश्शतशङ्कुभिः।।20।।

1037. समित्तन्त्रेण जुहुयात् निवीती तु शताहुतीः।
आयुर्मे स्यादिति ध्यायन्नायुष्कामस्तु खादिरैः।।21।।

1038. जुहुयादुपवीत्येवं ग्रामार्थौ यमुपोषितम्।
प्राङ्वोदङ्वा बहिर्ग्रामात् निर्गत्य स्थण्डिलेऽनलम्।।22।।

1039. निधाय गोमयैश्शुष्कैः आरण्यैरग्निसन्निभैः।
गत्वा स्थण्डिलमङ्गारान् अपो ह्यास्येन भूतले।।23।।

1040. जुहुयात्प्राग्वतद्भूतभूतला ज्वलितेऽनले।
सिद्ध्येयुर्द्वादशग्रामाः त्रयं वा धूमनिर्गमे।।24।।

1041. य इच्छेद्द्विजवृत्तिस्यात् नक्षत्रं प्राप्नुयादिति।
आकूतिमित्यृचा शङ्खवलयैर्नित्यहोमवत्।।25।।

1042. स्वाहेति चाहुतिं कुर्यात् सायं प्रातश्च तत्र तु।
नित्याहुती न कुर्वीत यस्य द्रव्यस्य विक्रिया।।26।।

1043. कामयेदात्मना वृद्धिं तद्द्रव्यस्यैकदेशतः।
हुत्वेतमहमित्येव कुर्याद्द्रव्यस्य विक्रयम्।।27।।

1044. महार्घस्याद्यपेक्षं स्यात्तत्र गौरवलाघवम्।
परिचर्याज्यतन्त्रेण कुर्यात्स्वाहेति चाहुतिम्।।28।।

1045. प्रतिपद्याज्यतन्त्रेण पूर्णहोममिति ब्रुवन्।
यशोऽर्थी जुहुयादन्त उपवासं यथोदितम्।।29।।

1046. कुर्यादविस्मरन्निन्द्रमवदादित्यथाहुतिम्।
विदध्यादाज्यतन्त्रेण सहायं कामयेत्ततः।।30।।

1047. सर्वान्प्रत्याधिपत्येऽप्सु अष्टरात्रमुपोषितः।
गृहीत्वाज्यं स्रुवेध्माज्यपात्राण्यौदुम्बराण्यपि।।31।।

1048. ग्रामात्प्राचीमुदीचीं वा दिशं गत्वा चतुष्पथे।
स्थण्डिले च निधायाज्यं समिध्यौदुम्बरेन्धनैः।।32।।

1049. हुत्वान्नं वा इति श्रीर्वा इति चोक्त्वाज्यतन्त्रतः।
गृहीत्वा च विभूत्येवं तत्तन्त्रेणाहुतिद्वयम्।।33।।

1050. तृतीयमाहुतिं कुर्यादन्नस्येत्यादिमन्त्रतः।
तन्त्रं समाप्य पुण्याहं वाचयित्वाशयेद्विजान्।।34।।

1051. गोव्याधिपरिहारार्थी गोष्ठदेशेषु पायसम्।
श्रपयेच्चरुतन्त्रेण तूष्णीं निर्वापपूर्वकम्।।35।।

1052. नाज्यभागौ तु कुर्वीत नात्र स्विष्टकृदाहुतिम्।
त्रिधा कृत्वा चरुं मन्त्रैरन्नमित्यादिभिस्त्रिभिः।।36।।

1053. निश्शेषं जुहुयाद्गच्छन्नध्वनि क्षेमवर्जिते।
वासो दशासु कुर्वीत ग्रथीन्पूर्वोक्तमावितम्।।37।।

1054. सहस्रगणमिच्छन्तु क्षुधे स्वाहेति मन्त्रतः।
सहस्रमाहुतीः क्षुत्पिपासाभ्यामित्यनेन च।।38।।

1055. जुहुयात् घृततन्त्रेण ताभ्यां स्त्रीपुँसवत्सयोः।
सकृद्वा जुहुयादेवं पश्वर्थी नित्यहोमवत्।।39।।

1056. इच्छन्क्षुद्रपशूँस्तत्तन्मिथुनस्य पुरीषतः।
जुहुयादेवमिच्छेद्यो द्विजवृत्योपरिक्षयम्।।40।।

1057. आहुती पूर्वमन्त्राभ्यां सायंप्रातर्दिनेदिने।
नित्यहोमवदार्द्रेण गोमयेन समाचरेत्।।41।।

इति चतुःपञ्चाशत् खण्डः।।54।।

***

55. क्रिमिनाशककारिका

1058. अङ्गं सर्पादिना दष्टं माभैषीरिति मन्त्रतः।
अभ्युक्षेद्वारिणा दण्डं वैणवं स्नातको निशि।।1।।
1059. समीपे तुरगोपायेत्यादिनान्यस्य संविशेत्।
षड्भिर्हतस्त इत्याद्यैर्यदङ्गं क्रिमिदूषितम्।।2।।
1060. तदभ्युक्षेत् पशूनां चेच्चिकीर्षं क्रिमिनाशनम्।
सायाह्ने मृदमाहृत्य पूर्वेद्युः कृष्णदेशतः।।3।।
1061. अनाच्छादित देशे तान्यस्य मन्त्रैर्यथोदितैः।
अङ्गं तु पांसुना प्रातः प्रकिरेत्क्रिमिसंयुतान्।।4।।
इति पञ्चपञ्चाशत् खण्डः।।55।।

56. शतायुषकारिका

1062. शतायुषस्सहस्रेन्दुदर्शने चोत्तरायणे।
शतायुषस्तु कर्तव्यः पूर्वपक्षे शुभेऽहनि।।1।।
1063. हविष्याशी स पूर्वेद्युः निशि नक्षत्रदर्शने।
कृत्वोपलेपनं सूत्रैरावेष्ट्य कलशान्नवान्।।2।।
1064. आनो मित्रेत्यृचापूर्य सलिलैः कलशानपि।
उपलिप्ते यवां देशे प्रकीर्य यवमिश्रितान्।।3।।
1065. उदगग्रेषु दर्भेषु कलशं तत्र मध्यतः।
आनो मित्रेत्युदीर्याथ सोमँ राजानमित्यपि।।4।।
1066. नाके सुपर्णामिति च ब्रह्मजज्ञानमित्यपि।
ततो घृतवतीत्यग्निं दूतमित्यपि निर्दिशेत्।।5।।
1067. इन्द्रन्नरो नेमधितेत्यावो राजानमित्यपि।
प्रागादष्टसु दिक्ष्वेता ऋचस्सामानि च क्रमात्।।6।।
1068. उदीर्य कलशानष्टौ स्थापयित्वा प्रदक्षिणम्।
ये अप्स्वित्यादिमन्त्राभ्यामापो घोरानिरस्य च।।7।।

1069. मध्यमे नवरत्नानि निधायाथ विशेषतः।
गन्धपुष्पाक्षताश्वत्थपत्रकूर्चान्निधाय च।।8।।

1070. परिवेष्ट्याहतैर्वस्त्रैर्द्वाभ्यामप्स्वन्तरेति तान्।
सम्प्रोक्ष्य स्थापयेदापो हिष्ठेत्यस्याथ कौतुकम्।।9।।

1071. बध्नीयुः प्रातराप्यैवं स्नापयेत्कलशांस्ततः।
कलशस्थानतः पश्चात् आसित्वा घृततन्त्रतः।।10।।

1072. शतायुधायेत्याद्याभिर्हुत्वा चतसृभिस्ततः।
ब्रह्मजज्ञानमित्येतद्यर्चेदं विष्णुरित्यपि ।।11।।

1073. गायेदबोधियेत्यादि बृहच्चाथ रथन्तरम्।
देवव्रतं च सामोक्त्वा पुरुषव्रतमेव च।।12।।

1074. आज्यदोहानि चाचार्यः कलशैर्बन्धुभिर्युतम्।
अभिषिञ्चेतरं भ्रातृन् नित्यादितरहस्यतः।।13।।

1075. धृतान्यवस्त्रयुगलं तमाचान्तमलंकृतम्।
आरोप्य यानमाचार्यः शङ्खदुन्दुभिनिस्स्वनम्।।14।।

1076. कारयन्तेन विप्रैश्च सहितः स्वस्तिवाचकैः।
ग्रामं प्रदक्षिणीकृत्य कृत्वा पुण्याहवाचनम्।।15।।

1077. आशिषो वाचयित्वा च वामदेव्यं च शक्वरीम्।
श्रावयेदभिषेके च दद्यात् क्षेत्रधनानि च।।16।।

इति षड्पञ्चाशत् खण्डः।।56।।

57. वृषोत्सर्गकारिका

1078. वैशाख्याश्वयुजी कार्तिक्याषाढीफाल्गुनी तथा।
पौर्णमास्यां वृषोत्सर्गं तस्यां कस्याञ्चिदाचरेत्।।1।।

1079. गोमयेनोपलिप्यादौ गोष्ठेन गोचर्ममात्रकम्।
पायसं श्रपयेत्तत्र गृह्याग्नौ चरुतन्त्रतः।।2।।

1080. निर्वपे त्वग्निपूषेन्द्रेश्वरेभ्यश्चेति निर्दिशेत्।
एतैरेव चतुर्थ्यन्तैः शब्दैः स्वाहान्तसंयुतैः।।3।।

1081. प्रधानहोमान् कृत्वाज्यमग्निर्मूर्धेत्यृचा ततः।
चतुर्गृहीतं जुहुयात् सोमँ राजानमित्यपि।।4।।

1082. हुत्वेन्द्रापर्वतेत्यावो राजान इति च ब्रुवन्।
उपरिष्टात्तनं तन्त्रं कृत्वा गोमिथुनं ततः।।5।।

1083. ब्रह्मणे दक्षिणां दत्वा पार्श्वे वत्सस्य दक्षिणे।
त्रिशूलं चन्दनाद्यैस्तु मानस्तोक इति ब्रुवन्।।6।।

1084. लिखेद्धृषाह्य इत्युक्त्वा चक्रं पार्श्वतरे लिखन्।
तप्तेनाप्यायसेनैव तस्योपरि लिखेत्पुनः।।7।।

1085. कश्चित्कलशमापूर्य सलिलैः गन्धसंयुतैः।
ततश्चतसृभिर्वत्सतरीभिस्सह तं वृषम्।।8।।

1086. स्नापयेत्कलशस्थेन वारिणैकवृषं वदन्।
अलङ्कृत्याहतेनापि वाससा परिधाय तम्।।9।।

1087. बध्नीयात्सत्यमित्थेति वृषाहीत्यनयापि च।
प्रदक्षिणं परित्य त्रिः कर्णे कृत्वाथ दक्षिणे।।10।।

1088. गवां व्रते जपेद्देवव्रतानि त्रीणि च क्रमात्।
काम्यासीति जपित्वा च वामदेव्यमुदीर्य च।।11।।

1089. प्रागुदीच्यां दिशि वृषं यथेष्टं पर्यटेति तम्।
उत्सृजेत्पायसान्नं तु ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः।।12।।

इति सप्तपञ्चाशत् खण्डः।।57।।

58. ग्रहयज्ञकारिका

1090. रोगादिपरिहारार्थमायुरारोग्यवृद्धये।
ग्रहाणामर्चनं कुर्यात् जन्मर्क्षु विषुवादिषु।।1।।

1091. अरण्ये वृक्षमूले वा गृहे वापि मनोरमे।
चतुर्हस्तप्रमाणं तु गोमयेनोपलिप्य तु।।2।।

1092. तस्य मध्ये लिखेत्पद्मं कर्णिका केसरोज्ज्वलम्।
व्योमरेखासमायुक्तं चतुरस्रं तु बाह्यतः।।3।।

1093. धर्मं ज्ञानं च वैराग्यमैश्वर्यं च यथाक्रमम्।
आग्नेयादिषु कोणेषु पादुकान्विन्यसेद्बुधः।।4।।

1094. अधर्मादीनि पूर्वादिमहादिशि निवेशयेत्।
या ओषधीरिति द्वाभ्यां गन्धपुष्पैः प्रपूजयेत्।।5।।

1095. ग्रहानावाहयेत्तत्र वरदाभयपाणिकान्।
प्रसन्नवदनात् सौम्यान् भूर्भुवस्वरिति निर्दिशेत्।।6।।

1096. तत्र नाम चतुर्थ्यन्तं नमोन्तं चान्ततो वदेत्।
रक्तवर्णस्सहस्रांशुं कर्णिकायां दिवाकरम्।।7।।

1097. क्षीराभं प्राक्तने पात्रे बुधं पीतं तु दक्षिणे।
शङ्खाभं पश्चिमे शुक्रं स्वर्णाभं जीवमुत्तरे।।8।।

1098. आग्नेयाङ्गारकं कोणे रक्तं कृष्णं शनैश्चरम्।
नैर्ऋते वायवीये तु राहुं कृष्णाङ्गसंयुतम्।।9।।

1099. केतून्प्रागुत्तरे कृष्णान् सव्यमित्यादिभिस्त्रिभिः।
पाद्यं दत्वार्घ्यमन्नस्येत्यादिनाचमनोदकम्।।10।।

1100. याशोऽसीति प्रदायाथ यशसो यश इत्यतः।
मधुपर्कं प्रदायापो हिष्ठेति स्नापयेद्ग्रहान्।।11।।

1101. वस्त्राण्योमेति........ गन्धद्वार इति ब्रुवन्।
तत्तद्वर्णं च कुसुमं दत्वावाहनमन्त्रतः।।15।।

1102. ईडायिष्वेति धूपं च दीपं पावेति सामतः।
दत्वोत्तरेण साम्ना च वामदेव्य घृतादिकम्।।16।।

1103. निधाय दिशि गृह्याग्निं तदभावे तु लौकिकम्।
गृहस्य पश्चिमे भागे उपलेपादि पूर्वकम्।।17।।

1104. विधायेध्माङ्गहोमान्तमुपक्रम्य समूहनम्।
कृत्वाग्नावासनं स्मृत्वा पूर्वोक्तान् तत्र च ग्रहान्।।18।।

1105. स्थापयित्वार्चयित्वा च गन्धाद्यैरथ तान् प्रति।
अष्टाविंशतिमष्टौ वा समिधोऽष्टोत्तरं शतम्।।19।।

1106. यद्वा सहस्रमादध्यात् प्रत्येकमथवा युतम्।
तत्राहुतिबहुत्वे स्यात् फलस्यापि च गौरवम्।।20।।

1107. अर्क प्रत्यर्कसमिधः उदुत्यं जातमित्यृचा।
यद्वा उत्तममित्येत ऋचा हुत्वेन्दवे ततः।।21।।

1108. आप्यायस्वेति पालाशं ब्रह्म जज्ञानमित्यृचा।
अपामार्गसमिद्धोमं बुधं प्रति समाचरेत्।।22।।

1109. शुक्रायौदुम्बरीमस्य प्रत्नामित्याद्यया ततः।
शुक्रं त इति वा हुत्वा बृहस्पतय ओमिति।।23।।

1110. बृहस्पते परिदीयेत्यृचा वाश्वत्थसंभवैः।
खादिरैः जुहुयादग्निर्मूर्धेत्यङ्गारकं प्रति।।24।।

1111. शमीमयीस्तु जुहयात् सौरये शन्न इत्यृचा।
दूर्वा होमं तु कुर्वीत कया न इति राहवे।।25।।

1112. केतुभ्यो जुहुयात्केतुं कृण्वन्निति कुशैस्ततः।
काशैर्वा जुहुयादेव एताभ्योऽथ यथाक्रमम्।।26।।

1113. हविष्यं पायसं चाज्यमिश्रं केवलपायसम्।
घृतोदनं च दध्यन्नं गुडसम्मिश्रमोदनम्।।27।।

1114. तिलमाषयुतं मांसं सम्मिश्रं चित्रमोदनम्।
जुहुयादेवमाज्यं च विशिष्टैः कापिलं घृतम्।।28।।

1115. ग्रहाणामधिपेभ्योऽधि देवताभ्यश्च सर्पिषा।
आवाहनोक्तमन्त्रेण स्वाहान्तेन सकृत्सकृत्।।29।।

1116. जुहुयादग्निरापश्च भूमिर्विष्णुः सुरेश्वराः।
इन्द्राणी च प्रजापतिः सर्पा ब्रह्मापि चाधिपाः।।30।।

1117. ईश्वरः पार्वती चैव स्कन्दो नारायणस्तथा।
ब्रह्मा शक्रो यमः कालश्चित्रगुप्तस्तु देवताः।।31।।

1118. तन्त्रं समाप्य सामानि व्याहृतीनामुदीर्य च।
गायत्रं च ग्रहाणां च ऋचौ होम उदीरिताः।।32।।

1119. तासु गीतानि सामानि गायेत्तन्त्रेऽथ शुक्रयोः।
ऋक्षु केतुगुरूणां च गायेद्गायत्रसंज्ञकम्।।33।।

1120. गायेच्च वारवन्तीययज्ञायज्ञीयसामनी।
गौषूक्तं चाश्वसूक्तं च शुद्धाशुद्धीयसंज्ञिके।।34।।

1121. रथन्तरं बृहच्चाज्यदोहानि च यथाक्रमम्।
आशुश्शिशान इत्यादिवर्ग चाबोधियादिकम्।।35।।

1122. सूर्याय रक्तवर्णां गां दक्षिणां शंखमिन्दवे।
बुधाय कनकं दद्याद्रजतं भार्गवाय च।।36।।

1123. वस्त्रं जीवाय रक्ताङ्गां तानड्वाहं कुजाय च।
कृष्णां गां सूर्यपुत्राय दद्याच्छागं तु राहवे।।37।।

1124. केतुभ्यः कुञ्जरं दद्यात्सर्वेभ्यः काञ्चनानि च।
आवाहनोक्तमन्त्रेण कुर्यादेषां विसर्जनम्।।38।।

इति अष्टपञ्चाशत्खण्डः।।58।।

59. उपरिष्टात्तन्त्रकारिका

1125. उपरिष्टात्प्रयोगस्तु प्राजापत्यान्तपञ्चकम्।
प्रहृत्यग्नावनूयाजां कुर्यात्पाहि त्रयोदश।।1।।

1126. आदौ व्याहृतयस्तिस्रस्ततः पाहीति सप्तकम्।
पश्चाद्व्याहृतयस्तिस्र इति पाहि त्रयोदश।।2।।

1127. तिस्रो व्याहृतयस्तिस्रस्समस्ताभिस्सकृत् सकृत्।
दशमा व्याहृतीर्हुत्वा दशर्चं जुहुयात्ततः।।3 ।।

1128. आज्ञाप्रजासदसः ऋचं साम पुनर्द्वयम्।
उदुत्तमं यत इन्द्र विष्णुस्सावित्रि वै दश।।4 ।।

1129. समस्ता व्याहृतीस्तिस्रो यत्कुसीदमतः परम्।
दर्भानादाय गृह्योक्तं विष्णोश्चैकं तृणाहुतिः।।5 ।।

1130. शबल्याभ्युक्षणं चैव दक्षिणोद्वासनक्रियाः।।

इति एकोनपञ्चाशत् खण्डः।।59।।

60. अङ्कुरार्पणकारिका

अथांकुरार्पणविधिं वक्ष्यामोऽथ यथाविधि।
1131. दिवाकार्ये दिवाकुर्यान्निशाकार्ये निशा तथा।।1।।
आधाने गर्भसंस्कारे जातकर्मणि नाम्नि च।
1132. हित्वांकुरार्पणं कार्यमन्यत्र शुभकर्मसु।। 2।।
देवकार्ये तु संप्राप्ते तत्पूर्वं नवमेऽहनि।
1133. पञ्चमेऽह्नि मनुष्याणां तुरीये तद्दिनेऽपि च।।3।।
गार्भवर्जोत्सवात्पूर्वमयुग्मे चांकुरार्पणम्।
1134. प्रदोषे वाथ सायाह्ने गुणाधिक्येऽह्नि चेष्यति।। 4।।
ओषधीनां तु सर्वेषां चन्द्रप्रोक्तोऽधि दैवतः।
1135. नैव प्रीणाति भगवान् अंकुरार्पणमह्नि चेत्।।5।।
वल्मीका मृत्तिका मञ्जगोमयं च तथैव च।
1136. एतानि प्रक्षिपत्तासु पालिकासु यथाक्रमम्।।6।।
दूर्वामश्वत्थपर्णं च शिरीषं बिल्वपत्रकम्।
1137. तासां मूले तु बध्नीयात् श्वेतसूत्रेण संयुतः।।7।।
हिरण्यरजतेनापि ताम्रिकाः कांस्य एव वा।
1138. मृण्मयावापि गृह्णीयात् पालिकास्वस्य शक्तितः।।8।।
इन्द्रादि ब्रह्मपर्यन्तमथवा ब्रह्मपूर्वकम्।
1139. इन्द्रमावाहयेत्प्राच्यां इन्द्रन्नर इतीरितः।।9।।
नाके सुपर्णमिति च दक्षिण्यां यममावहेत्।
1140. प्रतीच्यां वरुणं विद्यात् घृतवत्या ऋचस्ततः।।10।।
उदीत्यां सोममावाह्य सोमँ राजानमित्यृचा।
1141. ब्रह्मजज्ञानमन्त्रेण मध्ये ब्रह्माणमावहेत्।।11।।
एतैर्मन्त्रैरासनादि नैवेद्यान्तं यथाविधि।
1142. ब्रह्मा चतुर्मुखो मध्ये हिरण्यगर्भः प्रजापतिः।।12।।
इन्द्रश्शचीपतिर्वज्री पुरस्ताच्च शतक्रतुः।

1143. याम्ये वैवस्वतः पितृपतिः धर्मराजो यमः।। 13।।
प्रचेता वरुणः पश्चात् सुरुपिणमयां पतिः।

1144. शशी निशाकरश्चन्द्रः सोम इत्युत्तरे क्रमात्।।14।।
पुण्याहं वाचयेत्पश्चात् प्रोक्षयेद्धिजपालिकाः।

1145. तान् बीजान् संस्पृशन् जप्त्वा सूक्तमोषधिकं ततः।। 15।।
त्वमिमा ओषधीस्सोम ततोषधि च मन्त्रतः।

1146. त्वं वरुणस्ततः पश्चात् वषट् च इति मन्त्रतः।। 16।।
अस्य प्रेष्यतिभिस्तिस्रो ऋचो जप्त्वा ततः परम्।

1147. या ओषधीस्सोमराज्ञीर्द्वयं पश्चाज्जपेत्ततः।। 17।।
तान् बीजान्प्रक्षिपेत्पश्चात् पालिकासु यथाक्रमम्।। 18।।

1148. खादिरान् सम्यगालोच्य वामनेन मया कृतम्।
पद्यभूतां कृतिं प्राज्ञः परिगृह्णन्तु निर्ममाः।। 19।।

इति षष्ठिखण्डः।। 60।।

इति वामनकारिका।।

***

2. शाट्यायनकारिका

1.विवाहकारिका

1. अर्पनान्दी च रक्षा च सङ्कल्पवरणाप्लवम्।
पुण्याहोदकसेकाग्निब्रह्मकुम्भनिवेशनम्।।1।।
2. वस्त्रोत्तरीयमाङ्गल्यधारणं सोमवाचकम्।
प्रमे प्रास्येति जपतो भर्तुर्दक्षनिवेशनम्।।2।।
3. समस्तान्तचतुर्होमस्त्वग्निरेत्विति षट् पुनः।
व्यस्ताहुतित्रयोत्थानमश्मारोहमतः परम्।।3।।
4. भ्रातुर्लाजप्रदानञ्च इयन्नारीति चाहुतिः।
कन्यलेति च दम्पत्योस्तयोरग्निप्रदक्षिणम्।।4।।
5. पुनर्दृषत्क्रमार्यम्णः स्वाहान्तेऽपि प्रदक्षिणम्।
भूयोऽपि दृषदुत्क्रामः पूषहोमप्रदक्षिणम्।।5।।
6. तत एकमिषेत्यादि सप्तप्रपदसंक्रमः।
सुमङ्गलीरिति जपः समञ्जन्त्विति सेचनम्।।6।।
7. गुभ्णामितेति षण्मन्त्रैः वध्वा दृढकरग्रहः।
तूष्णीं प्रदक्षिणं चैव दम्पत्योः पूर्ववत्तथा।।7।।
8. यथा पुरानिवासश्च तन्त्रशेषसमापनम्।।

2.पुनर्विवाहकारिका

लेखाहोमात्पुरा वह्नेर्विनाशे पुनरेव तु।
9. लेखाद्यनुगते सद्यः प्राजापत्यान्तपञ्चकम्।।1।।
श्राद्धं प्रतिसरं चैव वरणं च प्रतिग्रहः।
10. वाससः परिधानं च कर्माण्येतानि वर्जयेत्।।2।।

3.लेखाहोमकारिका

उद्वाहानन्तरं सायम् अजिनासनपूर्वकम्।
11. ब्रह्मान्ते तत्र नक्षत्रप्रकाशे स्तरणाद्यपि।।1।।
समस्तान्ताहुतिर्लेखा षट्सु शेषाज्यधारणम्।
12. बहिर्ध्रुवावलोकश्च भर्तृगोत्रप्रदानतः।।2।।
स्वनाम्नैवाभिवादश्च गुरूणाञ्च यथाक्रमम्।
13. तन्त्रान्ते मधुपर्कश्च ह्य[1]न्नेति कबलार्पणम्।।3।।

1. टिप्पणीः- अत्र अन्नेति प्रातिपादिकं स्वीकुर्यात्

4.चतुर्थीहोमकारिका

त्रिरात्रादूर्ध्वहोमे तु समस्तान्ताहुतेः परम्।
14. प्रायश्चित्ताहुतीनां तु पञ्चानां कुम्भवारिणि।।1।।
स्रुवशेषं पातयेद्वध्वाः तज्जलैरभिषेचनम्।
15. तन्त्रशेषसमाप्ते तु सा योग्या सर्वकर्मसु।।2।।

5.फलदानकारिका

फलदानादिकं दद्यात् पश्चात्ताम्बूलदानतः।
16. ताम्बूलचर्वणारम्भः आशीर्वादं तु कारयेत्।।1।।
उपवासमहः कुर्यात् सायमाहुत्युपक्रमम्।।

6.ऋतुशान्तिकारिका

17. ऋतुशान्तिजपश्चैव प्रोक्षण स्नानमेव च।
प्राशनं पञ्चगव्यस्य नान्दी पुण्याहमेव च।।1।।
18. स्थण्डिलादि ततः कुर्यात् मुखान्तं होममाचरेत्।
अग्नयेत्यादिभिर्मन्त्रैराज्याहुत्येकविंशतिः।।2।।
19. लाजहोमं च कुर्वीत सम्पातं च षडाहुतिः।
ततो होमसमाप्ते तु गर्भं धेहीति भक्षणम्।।3।।

20. क्षीराज्यप्राशनं चैव घृतसूक्तोक्तमन्त्रतः।
ग्रहयज्ञं ततः कुर्यात् यथाशास्त्रमतन्द्रितः।।4।।
21. रात्रौ शय्याप्रवेशञ्च कामस्थानं समालभेत्।
दक्षिणेन तु हस्तेन विष्णुर्योनिं च वै जपेत्।।5।।
22. ततो मुहूर्तं सम्यक् चेत् सुपुत्रं लभते पुमान्।।

7.ग्रहयज्ञकारिका

सङ्कल्पश्चैव पुण्याहं ग्रहाराधनमेव च।
23. तत्पश्चिमे तु होमः स्यात् मुखान्तं च यथाक्रमम्।।1।।
अग्निमध्यगतेत्यादि प्रार्थना ह्यर्चनं ततः।
24. उपविश्य ततः पश्चात्समिदन्नाज्यमेव च।।2।।
अष्टादश च धान्यानि होमतन्त्रं समापयेत्।
25. होमशेषनिवेदश्च ताम्बूलानि समर्पयेत्।।3।।
ग्रहसामानि वै गायेत् यथोक्तोक्तविशेषतः।
26. प्रदक्षिणं नमस्कारम् आशीर्वादं च कारयेत्।।4।।
धेन्वादिदक्षिणां दद्यात् पश्चाद्ब्राह्मणभोजनम्।।

8.पुंसवनकारिका

27. नान्दी कौतुक सङ्कल्प पुण्याहोऽग्निमुखात्परम्।
व्यस्ताहुत्युदरस्पर्शः तन्त्रान्ते शुङ्गपेषणम्।।1।।
28. सिञ्चेच्छुङ्गारसं घ्राणे भर्तुः स्यात् प्राङ्मुखस्थितिः।।

9.सीमन्तकारिका

होमान्तं पूर्ववच्छाखाशललीचरुसादनम्।
29. विकल्पः पश्चिमस्थानस्थितिरत्रापि तत्र च।।1।।
अयमूर्जादि राकादिमन्त्रौ शाखाशलल्ययोः।
30. किं पश्यसीति तत्प्रश्नं प्रजामित्युत्तरं स्त्रियाः।।2।।

ईक्षमाणे मुखाच्छायामुत्तरं तन्त्रपूरणम्।
31. ग्रहयज्ञं ततः कुर्यात् तां वधूं प्राशयेच्चरुम्।।3।।

10.कालातिक्रमप्रायश्चित्तकारिका

जननात् कर्मणः पूर्वं प्रायश्चित्तमतिक्रमे।
32. कर्मणां स्वस्वकालस्य प्राजापत्यान्तपञ्चकम्।।1।।
जातकर्मादिसंस्काराः स्वकालेष्वकृता यदि।
33. कालातिक्रमदोषस्य कुर्यात् पाहि त्रयोदश।।2।।
उत्तरोत्तरकर्मभ्यः पूर्वं कृत्वाऽऽज्यतन्त्रतः।
34. ततः क्रमागतं कुर्याद्विदध्यादुत्तरोत्तरम्।।3।।
तत्राप्यकरणे कृत्वा प्रायश्चित्तं यथोदितम्।
35. विदध्यादुपनीतेः प्राक् न चेत्तत्रापि ते कृताः।।4।।
लोप एव सुते जाते यस्मिन् पक्षे ततः परम्।।

11. सोष्यन्तीहोमकारिका

36. जाते पुरस्तात्तन्त्रं च यातिराज्याहुतिद्वयम्।
उपरिष्टात्ततो हुत्वा त्वन्ते पुण्याहमेव च।।1।।

12.जातकर्मकारिका

37. जाते कुमारे स्नात्वाऽथ बीजदानं हिरण्यकम्।
सङ्कल्पः प्राशयेत्पिष्टम् इयमाज्ञेति मन्त्रतः।।1।।
38. मेधां त इति सर्पिश्च हिरण्यसहितं ततः।
कुमारं प्राशयित्वाऽथ ह्यन्ते पुण्याहमाचरेत्।।2।।

13.नामकरणकारिका

39. नान्दी व्यस्तान्तहोमाः स्युः कोऽसीत्यादि ऋचां जपः।
नेत्रश्रवणनासानां रन्ध्रस्पर्शः शिशोस्तथा।।1।।
40. असौ स्थाने च नामोक्तिः तन्त्रान्ते पुण्यवाचनम्।।

14.चन्द्रदर्शनकारिका

तृतीये मासि चन्द्रस्य तृतीयायां तु दर्शनम्।
41. यत्ते स्वादिरुपस्थानं यददेनोदकाञ्जलिः।।1।।

15.अन्नप्राशनकारिका

नान्दी कौतुकसङ्कल्पपुण्याहप्राशनानि च।
42. तूष्णीं जलं प्राशयित्वा ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः।।1।।

16.चौलकारिका

चौलकर्मणि सम्प्राप्ते पाकं कृसरतण्डुलैः।
43. कृत्वा तल्लौकिके वह्नौ माणिभद्राय निक्षिपेत्।।1।।
अर्पाभ्युदकरत्राणं पुण्याहं वाचयेत्ततः।
44. सङ्कल्प्य स्थण्डिलं कृत्वा ततो ब्रह्मासनं क्रमात्।।2।।
कूर्चोष्णोदक आदर्श ओषधीक्षुरसादनम्।
45. उदक् शकृंद्धथापक्वमातॄणां चैव सादनम्।।3।।
इध्माङ्गान्तसमस्तान्तहोमो वप्तृनिरीक्षणम्।
46. तत्राशु द्युमणिध्यानं वापयेदनिलस्मृतिः।।4।।
उष्णोत्युष्णोदकालोक आप इत्यथ सेचनम्।
47. कांस्यक्षुरे विष्णुमन्त्रमोषधेत्योषधेर्मनुः।।5।।
स्वधितेति क्षुरादानं त्रिः प्रोहेद्येन मन्त्रतः।
48. दक्षिणे केशदर्भाग्रच्छेदो गोमयनिक्षिपः।।6।।
पश्चादुत्तरतश्चापि यथापूर्वोक्तमन्त्रतः।
49. त्र्यायुषाभिमन्त्रान्ते तन्त्रशेषसमापनम्।।7।।

***

17.उपनयनकारिका

अर्पागूर्वपनं नान्दी रक्षा पुण्याहभोजनम्।
50. अग्निब्रह्मोपवेशश्च मन्त्रवान् ब्राह्मणस्ततः।।1।।
धारयेदहतं वास उपवीताजिने अपि।
51. प्रतिमुच्य विना मन्त्रं शिष्यमाचमयेत्ततः।।2।।
स्तरणाद्यङ्गहोमान्ते समस्तान्ताग्निपञ्च च।
52. होमस्तस्मादुदग्भागे वटोः प्रत्यङ्मुखस्थितिः।।3।।
अञ्जलेरुर्ध्वगं तस्य गुरोरञ्जलिपूरणम्।
53. गुरोर्जपश्चागन्त्रेति ब्रह्मचर्यं वटोर्जपः।।4।।
को नामेति गुरोरुक्तिः स्वनामोक्तिः शिशोः पुनः।
54. तस्मै तज्जलदानं च देवस्येत्यञ्जलिग्रहः।।5।।
असौ स्थाने तु सम्बुद्धिः सूर्यस्येति प्रदक्षिणम्।
55. प्राणानामिति मन्त्रेण तस्य नाभ्यभिमर्शनम्।।6।।
अन्तकेत्युदरस्पर्शस्त्वहुरेत्युरसोऽपि च।
56. कृशनेति च कण्ठस्य स्पर्शनादि यथाक्रमम्।।7।।
ततः प्रजापतये त्वेति दक्षिणांसाभिमर्शनम्।
57. देवाय त्वेति सव्यांसस्पर्शनं सव्यपाणिना।।8।।
त्वं ब्रह्मचार्यसीत्युक्ते बाढमित्युत्तरं वदेत्।
58. समिद्धोमप्रभृतिभिः चतुर्भिः प्रेषणं ततः।।9।।
सर्वेषामुत्तरं चापि बाढमेव न संशयः।
59. मौञ्जीबन्धनमन्त्रश्च गुर्वग्न्योर्मध्यनिर्गमः।।10।।
गुरोर्दक्षिणसंवेशः सावित्रीप्रार्थना वटोः।
60. ततस्तन्त्रसमाप्तिश्च उपदेशस्ततो यथा।।11।।
दण्डस्य धारणं चैव सुश्रवेति च मन्त्रतः।
61. समिद्धोमश्च मार्ताण्ड उपस्थानमतः परम्।।12।।

ततो भैक्षं च विधिवत् ब्राह्मणानां च सत्क्रिया।
62. गुरूणां पूज्यबन्धूनां विशेषः प्रतिपत्तिभिः।।13।।

***

होमानात्मार्थपत्न्यर्थान् कृत्स्ने त्वौपासनानले।
63. परार्थानेकदेशाग्नौ स चान्ते लौकिको भवेत्।।1।।
परार्थानि च कर्माणि सोष्यन्ती नामचोलकम्।
64. उपनीतव्रताद्यष्टौ कर्मान्ते लौकिको भवेत्।।2।।

18. औपासनाग्नौ कर्तव्यकर्माण्याह

लेख्या चतुर्थी स्थालीप पुंसीकाम्याद्युपक्रमः।
65. अष्टकात्रितयं चैव ह्याश्वयुज्याग्रहायणी।।1।।
तथाग्रयणवास्तूनि पार्वणं गृह्यपावके।।

19. एकदेशाग्नौ कर्तव्यकर्माणि

66. सोष्यन्ती नाम चौलोपसविसर्गव्रतानि च।
गृह्यैकदेशे कार्याणि कर्मान्ते लौकिकानि वै।।1।।

20. लौकिकाग्नौ कर्तव्यकर्माण्याह

67. विवाहाभ्युदयश्राद्धं वैश्वदेवं दशाहनि।
वृषोत्सर्ग ऋतुस्नानं लौकिकाग्नौ विधीयते।।1।।

21. अग्नौ होमाभावकर्माण्याह

68. गर्भजातकविप्रोष्य चन्द्रप्राशनमेव च।
स्नानं चोत्सर्जनं चैव सप्तैते होमवर्जिताः।।1।।

22. पुण्याहवाचनस्य कालमाह

69. पुण्याहकालं वक्ष्यामि पुंसि सङ्कल्पनात्परम्।
जातकर्मसमाप्तौ तु समाप्ते नामकर्मणि।।1।।

70. सङ्कल्पानन्तरं प्राशे तच्चौले कौतुकात्परम्।
नयने चौलवत्कुर्यात् ग्राहे पिष्टाहुतेः परम्।।2।।

71. चन्द्रस्य दर्शनस्यान्ते अर्पणे प्रोक्षणं ततः।
अंकुरे ग्रहयज्ञे च आदौ पुण्याहमाचरेत्।।3।।

72. वास्तुहोमाद्यनुक्तानाम् अन्ते पुण्याहमाचरेत्।
जाताभिधानयोश्चैव चन्द्रोपस्थानकर्मणि।।4।।

73. उत्सर्जने तथा स्नाने पुण्याहविधिरन्ततः।
आशीर्वादस्तु विप्राणां कर्तारं सं पुनाति हि।।5।।

23. कर्मसु अग्निनामानि

74. पावको लौकिकाग्निः स्याद्विवाहे योजकस्तथा।
मारुतो गर्भपूतौ स्यान्नाम्नि पार्थिव उच्यते।।1।।

75. चौले सभ्यस्तूपनये समुद्भव इतीर्यते।
गोदानस्योपकरणे विसर्गे सूर्य एव हि।।2।।

76. इतरेषां व्रतानां तु समुद्भव इतीर्यते।
सापिण्ड्ये कव्यवाहस्तु हव्यवाहस्तु दैविके।।3।।

77. सञ्चये दहनाग्निः स्यात्सोष्यन्त्यां शुचिरुच्यते।
प्रायश्चित्तौ विचित्तिः स्यात्पार्वणे कव्यवाहनम्।।4।।

78. पावको वैश्वदेवाग्निः पाके पाचक उच्यते।
उपाकर्मणि शोभनमित्यग्नेर्नाम भेदतः।।5।।

24. कर्मणां प्रधानाहुतिसंख्यामाह

79. पुंसि नाम्नि तथा तिस्रो द्वे जाते पाणि षोडश।
चतुर्थ्यां नव लेखासु दश सम्पातमेव च।।1।।

80. चौले कल्पे चतस्रस्तु नवोपनयनव्रते।
एकादश च नीये च श्रावणे चैकविंशतिः।।2।।

81. शतद्विसप्ततिश्चैवोपाकर्मणि च निश्चयः।
सप्त पाके नवे रुद्रः त्रयोदश वृषे तथा।।3।।
82. अन्वष्टक्ये पार्वणे च पञ्चाहुतय ईरिताः।
सन्धाने षष्टिनिर्दिष्टं प्रमाणं गृह्यसंग्रहम्।।4।।
83. वास्तुहोमे मनुः प्राहुः पञ्चान्वष्टक्य एव च।
उपाकर्मणि चत्वारि वैश्वदेवे षडाहुतिः।।5।।
84. सञ्चये चाहुतिः सप्त पार्वणे पञ्चकं तथा।।

25. अभ्युदयश्राद्धविहितकर्माण्याह

पुंसीनामान्नचौलोपस्नानपाणिग्रहेषु च।
85. अग्न्याधेये तथा सोमे दशस्वभ्युदयं स्मृतम्।।1।।

26. अंकुरवर्ज्यकर्माण्याह

स्यात्पुंसवनसीमन्तजातकाख्याशनेषु च।
86. उपनिष्क्रामणे तद्वत् व्रतकर्मणि नाङ्कुरम्।।1।।
आधाने गर्भसंस्कारे जातकर्मणि नाम्नि च।
87. हित्वाऽन्यत्र विधातव्यं मङ्गलाङ्कुरवापनम्।।2।।
व्रतोपनयने चौले नाङ्कुरं न च कौतुकम्।
88. न च नान्दीमुखं कुर्यात् पुण्याहं न च कारयेत्।।3।।
अङ्कुरं वृद्धिसूत्रं च पुण्याहं भोजनं तथा।
89. मुण्डनं नववस्त्रं च गोदानादिषु वर्जयेत्।।4।।

27. अंकुरविहितकर्माण्याह

चौलोपनयने चैव स्नानपाणिग्रहेषु च।
90. अग्न्याधेये च यज्ञे च ह्यङ्कुरार्पणमाचरेत्।।1।।

28. स्त्रीपुंसयोरुभयोरपि अंकुरप्रतिसरविहितकर्माण्याह

आधाने च विवाहे च दम्पत्योरुभयोरपि।
91. स्यात्पुंसवनसीमन्ते स्त्रिया एव तु कौतुकम्।।1।।
नामादि नान्दीकरणँ पुण्याहं द्विजभोजनम्।
92. रक्षाबन्धनमन्नादि चौलाद्यंकुरमेव च।।2।।
गार्ह्येषु क्रियमाणेषु बहूनामथवा द्वयोः।
93. रक्षांकुरौ सकृत्कुर्यात् नान्दीहोमान्पृथक्पृथक्।।3।।
द्विमुण्डने तु सम्प्राप्ते कथं मुण्डं विधीयते।
94. पूर्वं दिग्वपनं कृत्वा पश्चात् क्षौरं समाचरेत्।।4।।
मुण्डनानां तु बहुले पूर्वस्मिन् क्षौरमेव च।
95. उपानयस्य विध्युक्तं गतस्यैव तु मन्त्रवत्।।5।।
गणशः क्रियमाणानामनेकशुभकर्मणाम्।
96. वृद्ध्यङ्कुरप्रतिसरान् सकृदेव समाचरेत्।।6।।
इध्ममष्टादशमिति प्रवदन्ति मनीषिणः।
97. दर्शे च पौर्णमासे च क्रियास्वन्यासु षोडश।।7।।
पञ्चाशद्भिः कुशैर्ब्रह्मकूर्चं कुर्यात् सपुच्छकम्।
98. तदर्धैरासनं कुर्यात् शाण्डिल्यादिमुनीरितम्।।8।।
अग्नेरुत्तरतोऽङ्गारान् निरुह्याज्यमधिश्रितः।
99. परिस्तृतात् बहिः कुर्यात् न परिस्तरणादधः।।9।।
गो दासि कन्यकाश्चैव तिष्ठन्नेव प्रतिग्रहः।
100. पुच्छे केशे च हस्ते च न्यस्तहस्ते जलं क्षिपेत्।।10।।

इति शाट्यायनकारिका समाप्ता।।

*****

3. वैनतेयकारिका

1.पार्वणप्रयोगः

1. शङ्खचक्रगदापद्मविभूषितचतुर्भुजम्।
नमामि श्रीधराश्लिष्टपार्श्वं रङ्गेश्वरं हरिम्।।1।।

2. अथ जैमिनिगृह्यस्य प्रयोगः कथ्यते स्फुटम्।
विनतानन्दनो नाम मया बालहितैषिणा।।2।।

3. पूर्णपात्रं समिद्दर्भचरुस्रुवजलेन्धनम्।
सिकता गन्धकुसुमं प्रणीताज्याज्यपात्रकम्।।3।।

4. कल्पयेदप्रमादेन गृही पर्वणि पर्वणि।
आचान्तः सोत्तरीयोऽसौ स्नातश्शुक्लाम्बरश्शुचिः।।4।।

5. आसीनः प्राङ्मुखो भूमिमुद्धृत्य त्रिरवोक्ष्य च।
सरेखं स्थण्डिलं (कृत्वा)प्रतिष्ठाप्य च पावकम्।।5।।

6. पूर्णपात्रस्रुवौ न्यस्य प्रोक्ष्य स्पृष्ट्वा वसुन्धराम्।
ऋग्भिः परिसमूह्याथ गृहीत्वा प्रस्तरं कृतम्।।6।।

7. अथ दर्भैः परिस्तीर्य प्रादेशारत्निसन्निभैः।
छित्वा पवित्रे चोन्मृज्य घृतमासिच्य पावके।।7।।

8. तदधिश्रित्य वह्नौ तदवद्योत्य तृणैरथ।
दर्भौ प्रत्यस्य कृत्वाऽऽथ पर्यग्निकरणं ततः।।8।।

9. घृतभाजनमुद्वास्य हृत्वाऽङ्गारांस्तृणानि च।
उत्पूयाऽऽज्यं हविश्चैव प्रणीताश्च स्रुवं ततः।।9।।

10. स्थापयित्वा प्रणीताश्च निधाय प्रस्तरं ततः।
जपित्वा च विरूपाक्षं कृत्वा संस्पर्शनं त्वपाम्।।10।।

11. रक्षः पित्र्याभिचारं च दैत्यमन्त्रोक्तिकालतः।
आत्माभिमर्शनेऽप्यम्बु स्पृशेदित्येषु निर्णयः।।11।।

12. अनन्तरं प्रणीताप्सु नीत्वा स्रुवगतं जलम्।
निष्टप्य दर्भैस्सम्मृज्य तान्प्रोक्ष्याग्नौ निधाय च।।12।।

13. घृतशुद्धिं निरीक्ष्याथ परिधीन्परिधाय च।
पुष्पैरलंकृतिं कृत्वा कार्यं च परिषेचनम्।।13।।

14. पर्युक्ष्य पञ्चदशकमादाय समिधामथ।
अभिघार्य व्याहृतिभिः हुत्वाऽऽधाय च ताः सह।।14।।

15. आघारावपि हुत्वाऽऽज्यभागौ च व्याहृतीरपि।
स्रुवे सकृदुपस्तीर्य चरोर्द्धिरवदाय च।। 15।।

16. अभिघारो भार्गवाणामत्र द्विरभिघारयेत्।
भार्गवाणां हि भेदोऽस्ति प्रधाने स्विष्टकृत्यपि।। 16।।

17. प्रदेशिन्योः प्रस्तरणमभिघारणमाचरेत्।
तथा मध्यमयाऽङ्गुल्याऽप्यङ्गुष्ठेनावदीयते।। 17।।

18. आहुती चरुणा हुत्वा कृत्वा स्विष्टकृदाहुतिम्।
स्पृष्ट्वाऽम्बु प्रस्तरदानं स्रुवादिष्वञ्जने कृते।। 18।।

19. तस्मात्तृणं निरस्यैकं प्रहृत्य प्रस्तरं ततः।
तृणं प्रहृत्य च जलं स्पृष्ट्वाऽऽधाय समित्त्रयम्।। 19।।

20. भूमिं प्राणांश्च शीर्षण्यान् स्पृष्ट्वा चाम्बु यथाक्रमम्।
मन्त्रैर्द्वादशभिर्हुत्वा प्रायश्चित्ताहुतीरपि।। 20।।

21. दर्भानादाय चास्तीर्णान् स्रुवेणापूर्य पात्रकम्।
अपो दिक्षु समुत्सृज्य निनीयोन्मृज्य चक्षुषी।। 21।।

22. अग्नावाधाय दर्भांश्च परिधीनपि दीयते।
शान्त्यर्थं वामदेव्यं च गीत्वाऽथ परिषिच्य च।। 22।।

23. पर्युक्ष्य चरुणा सार्धं प्रणमेज्जातवेदसम्।
गुरवे दक्षिणां दद्यात्पार्वणक्रम ईरितः।। 23।।

24. एष क्रमः स्यात्सर्वत्र वर्जयित्वाऽऽहुतिद्वयम्।
यत्सर्वं सर्वहोमानामप्रमादेन कल्पयेत्।। 24।।

2.स्वस्तिवाचनप्रयोगः

25. कूर्चादकुम्भसुरभिपुष्पाण्यक्षतदक्षिणाः।
ब्रीहिञ्च सर्षपञ्चैव कल्पयेत्स्वस्तिवाचनम्।।1।।

26. अपो गन्धञ्च पुष्पाण्यन्वाहार्याक्षतदक्षिणाः।
दत्वा द्विजेभ्यः शुद्धेभ्यो ब्रीहिसर्षपपुष्पकैः।।2।।

27. उदकुम्भं समादाय प्राङ्मुखो वाऽप्युदङ्मुखः।
मन इत्यादिवाक्यानि वदन्प्रणवपूर्वकम्।।3।।

28. यथावाक्यं प्रतिप्रोक्तैः द्विजैः स्वस्तीति वाचयेत्।
गायन्तो वामदेवाख्यं साम कुम्भस्थवारिणा।।4।।

29. कुर्वीरन्मार्जनं दारपुत्रादीनां यथाक्रमम्।
पर्णयागे व्रतारम्भे तदन्ते दाहकर्मणि।।5।।

30. स्थालीपाके कुमारेष्ट्यां नेष्यते स्वस्तिवाचनम्।
ग्रहशान्तिनवश्राद्धचतुर्थीनामकर्मणाम्।।6।।

31. स्वस्तिवाचनमन्ते स्यात् आदावितरकर्मणः।

3.औपासनाग्निसन्धानप्रयोगः

औपासनाग्निसन्धानक्रमः सम्प्रति कथ्यते।

32. आवृताऽग्निं प्रतिष्ठाप्य प्रोक्ष्य स्पृष्ट्वा भुवं ततः।।1।।
अग्निं परिसमूह्याथ परिस्तीर्याऽऽयतैः कुशैः।

33. तूष्णीमाज्यसंस्कारं कृत्वोत्पूय घृतं स्रुवम्।।2।।
पवित्रमग्नावाधाय विधिवत्स्रुवसंस्कृतिः।

34. पुष्पैरलंकृतं वह्निं परिषिच्य समन्त्रकम्।।3।।
पर्युक्ष्याऽऽधाय समिधमेकामग्नौ सुदीपिते।

35. हुत्वा द्वादशभिर्मन्त्रैः प्रायश्चित्ताहुतीरपि।।4।।
परिषिच्याथ पर्युक्ष्य कुर्यात्कर्म समीहितम्।

36. त्यक्त्वा कुमारसंस्कारान् कलापस्सर्वकर्मणाम्।।5।।
औपासनाग्नौ कर्तव्यः तदंशे कर्म पैतृकम्।

4.पुंसवनप्रयोगः

37. दधिमाषौ यवं शुङ्गं वटस्य सघृतं हविः।
शुक्लरक्ते च सूत्रे द्वे दद्यात्पुंसवने सति॥1॥

38. स्वस्तिवाच्य पुरस्तन्त्रे कृते स्पृष्टः स जायया।
अर्धर्चशो वदन्त्सूक्तं कृत्वा च हविराहुतीः॥2॥

39. वधूकरे कृतं लिङ्गं माषाभ्यां च यवेन च।
दध्ना मिश्रं प्राशयेत्तां कुमारोत्पत्तिहेतवे॥3॥

40. धारयित्वा शुङ्गयुतं सूत्रं स्विष्टकृदाहुतिम्।
विधाय चोत्तरं तन्त्रं वासो दद्याच्च दक्षिणाम्॥4॥

5.नान्दीमुखकौतुकबन्धनप्रयोगः

41. दध्यक्षतञ्च गन्धञ्च पुष्पञ्च सिकता अपि।
सर्षपञ्च यवव्रीहिबर्हिः कांस्यादिभाजनम्॥1॥

42. द्विजा नान्दीमुखे दद्यात् कुम्भञ्च जलपूरितम्।
सीमन्तचौलोपनयनगोदानस्नान उद्वहे॥2॥

43. पूर्वेद्युः कर्मणां षण्णां नान्दीमुखविधिर्मतः।
देवार्थे द्वे च पित्रर्थे चतुरः शक्तितोऽथवा॥3॥

44. स्नातान्त्सङ्कल्प्य पार्श्वस्थान् आचान्तानसगोत्रजान्।
द्विजानद्भिर्गन्धपुष्पैः समच्चर्य प्राङ्मुखः स्वयम्॥4॥

45.ताननुज्ञाप्य कृत्वाऽथ स्थण्डिलं सिकतायुतम्।
दर्भानास्तीर्य दध्याद्यैः अष्टौ हुत्वा बलीन् सितान्॥5॥

46. भोजयित्वा व्रीहिपुष्पयवसर्षपपाणिभिः।
तैस्सहादाय कुम्भञ्च नान्दीमुक्त्वा च वाचयेत्॥6॥

47. तेभ्यश्च दक्षिणां दद्यात् नान्दीमुखविधिः क्रमः।
प्रदोषकाले राक्षोघ्नसामानि ब्राह्मणैस्सह॥7॥

48. गीत्वा कौतुकमाबध्यात् नार्या वा पुरुषस्य वा।

6.सीमन्तोन्नयनप्रयोगः

सीमन्ते शलली दध्यादहतं वास एरकाम्।
49. हेमाम्बुसहितं कांस्यं स्रजो मुद्गतिलोदनम्।।1।।
पूर्वतन्त्रे कृते हुत्वा चरुणा पञ्च आहुतीः।
50. वस्त्रोत्तरैरकायां तामुपवेश्योत्थितः स्वयम्।।2।।
प्रत्यङ्ङ्तिष्ठन्पुरस्तस्याः कृत्वा सीमक्रियामथ।
51. दक्षिणोत्तरयोः पार्श्वकेशयोर्न्यस्य च स्रजम्।।3।।
दर्शयित्वा वधूं कांस्ये वाचयित्वोपविश्य च।
52. कृत्वा स्विष्टकृतं तन्त्रं उत्तरं च यथाविधि।।4।।
वासो वा हेम वा दद्यात् आचार्याय च दक्षिणाम्।

7.जातकर्मप्रयोगः

53. जाते पुत्रे पिता स्नात्वा सचेलः प्रागुदग्गतः।
घृष्ट्वा हेम व्रीहियवौ मधुन्यम्भसि वा ततः।।1।।
54. पिता प्रत्यङ्मुखो भूत्वा तत्र प्राङ्मुखमर्भकम्।
कल्कं दत्वा च पुत्रास्ये पाणिना चाभिमन्त्रणम्।।2।।
55. परिदानं च कृत्वाऽथ कोऽसीत्यादि गिरां वचः।
प्रविशेत्यत्र निर्दिश्य नक्षत्रन्नामशास्त्रवत्।।3।।
56. वेदोऽसीत्येतदुक्त्वा च गुह्यं नामेति कीर्तितम्।
आजिघ्रेत्पुत्रमूर्धानं क्रमोऽयं जातकर्मणः।।4।।
57. सूतिकासद्मनिकटे लौकिकाग्नौ प्रतिष्ठिते।
सायं प्रातश्च जुहुयात् विधिवत्पुत्रकर्मणि।।5।।
58. जातकर्मादि यत्कृत्यं पुत्राणां जनकश्चरेत्।
आचार्य एव तत्सर्वं विदध्यात्तदसम्भवे।।6।।

8.नामकरणप्रयोगः

59. द्वादशे नामकरणं शुक्ले पुण्यदिनेऽपि वा।
पुरस्तन्त्रोत्तरे पुत्रं धृत्वा स्वाङ्कस्थवाससा।।1।।

60. प्रोच्य नारायणोऽसीति कर्णे हरिरसीति च।
इष्ट्वाऽस्य जन्मनक्षत्रं तद्दैवतमथो तिथिम्।।2।।

61. उद्दिश्य देवताः चाष्टौ सप्त हुत्वा तदाहुतिम्।
विधाय चोत्तरं तन्त्रं अथ स्यात्स्वस्तिवाचनम्।।3।।

62. अस्मै हस्ताय हरये स्वस्तीत्युक्त्वा च वाचयेत्।
नाम्नाऽपि नैवं प्रत्यक्षं अब्दपूर्तेरियं क्रिया।।4।।

63. कुमार्या नामधेये तु होमः कार्यो न जन्मनि।

9.अन्नप्राशनप्रयोगः

षष्ठेऽन्नप्राशनं मासि विदध्यात्स्वस्तिवाच्य च।

64. कारयित्वोपनिष्क्रान्तिं भोजयित्वा द्विजान्द्विजैः।।1।।
स्वस्तिशब्दे कृते शेषं घृतेन प्राशयेच्छिशुम्।

65. प्राङ्मुखं विष्टरासीनं ऋचो नावृत्तिरिष्यते।।2।।

10. अंकुरार्पणप्रयोगः

अंकुरार्पणकर्माद्य वक्ष्यते कर्मणां पुरा।

66. सप्तमे पञ्चमे वाऽपि तृतीये दिवसेऽथवा।।1।।
सद्यश्च कालविद्भिस्तु कालः प्रोक्तोऽस्य कर्मणः।

67. शालीश्यामाकांस्यतिलमुद्गनिष्पावसर्षपाः।।2।।
सहकल्लाढकीमाषैर्द्रव्याण्याहुर्दशांकुरे।

68. एतानि क्षीरनीराभ्यां मिश्रीकृत्योपकल्प्य च।।3।।
गोमयेनोपलिप्तायां धरायां पञ्चपालिकाः।

69. मध्ये दिक्षु च निक्षिप्य शुक्लेनावेष्ट्य वाससा।।4।।

वामदेव्येन सम्प्रोक्ष्य मन्त्रैरब्लिङ्गकैरपि।

70. आदाय शुक्लपुष्पं च चन्दनाक्षतसंयुतम्॥5॥

मध्ये ब्रह्माणमावाह्य ब्रह्मजज्ञानमित्यृचा।

71. शक्रं पूर्वे यतइन्द्रं नाकेस्विति ततो यमम्॥6॥

उदुत्तममितीशानमम्भसां सोममुत्तरे।

72. आप्यायस्वेत्यथान्तेषु नाम्नां नम इतीरयेत्॥7॥

अभ्यर्च्य गन्धपुष्पैस्तान् देवान्त्सायुधवाहनान्।

73. आवपेन्मध्यमारभ्य बीजान्यासूत्तरावधि॥8॥

सन्ध्ययोरद्भिरासिच्य रक्षेदाकर्मसंस्थितेः।

74. भार्गवस्योत्सवात् पूर्वमयुगेऽह्यङ्कुरार्पणम्॥9॥

दिवा चेदुत्सवः कार्यो दिवा तन्निशि चेन्निशि।

75. विवाहे तु पृथक्कार्ये द्वयोरभ्युदयाङ्कुरे॥10॥

उत्सवः कार्यवशतो यदि सद्योऽङ्कुरार्पणम्।

76. पूर्वेद्युरेवाभ्युदयश्राद्धं कुर्याद्यथाविधि॥11॥

कन्यायाः प्रथमं कार्यं अपरेण वरस्य तु।

11.चौलप्रयोगः

77. कृत्वा नान्दीमुखं बध्वा कौतुकं स्वस्तिवाच्य च।

दर्पणं कोष्णमुदकं दर्भस्तम्बं क्षुरं शकृत्॥1॥

78. व्रीहिंस्तिलान्माषयवानाहरेच्चौलकर्मणि।

व्याहृत्या पूर्वतन्त्रान्ते विरूपाक्षेण चाहुतीः॥2॥

79. क्षुरमादाय तोयेन सिक्त्वा पार्श्वं च दक्षिणम्।

उपधायाथ पिञ्जूलीरादर्शस्पर्शने कृते॥3॥

80. छित्वा केशांश्च दर्भाग्रैः निदध्याद्गोमयोपरि।

सर्वं कार्यं क्षुरादानात् ऋते पश्चात्तथोत्तरे॥4॥

81. क्षुरं दद्यान्नापिताय शिशौ स्नाते समागते।

तस्याऽऽलभ्य च मूर्धानं प्रायश्चित्ते कृते व्रती॥5॥

82. शेषं समाप्य गुरवे दक्षिणा गौश्च दीयते।
मन्त्रवर्ज्यं स्त्रियाः कुर्यात् क्षुरादानादिकां क्रियाम्।।6।।

83. समन्त्रश्चेदार्चतायामविरूपाक्षमाहुतिम्।
केशांश्च पूर्णपात्राणि हरेतां भृत्यनापितौ।।7।।

12.उपनयनप्रयोगः

84. अथोपनयनेऽपि स्यात् अंकुरादि च पूर्ववत्।
वस्त्रोपवीतदण्डांश्च समिधो दण्डमेखलाम्।।1।।

85. भिक्षासम्पातपात्रे च दृषदं कल्पयेत्त्वचम्।
स्वस्तिशब्दात्परं कृत्वा वपनं स्नातमर्भकम्।।2।।

86. स्वमग्निमन्तरेणाग्नेः पश्चाद्दक्षिणतो नयेत्।
प्रोक्षणादि पुरस्तन्त्रं कृत्वोत्थाप्य कुमारकम्।।3।।

87. मन्त्रमुक्त्वा गुरुर्वस्त्रमहतं परिधाप्य च।
उपवीतिनमाचान्तं कृत्वोत्थाप्य गुरुः स्वयम्।।4।।

88. शुक्रं मन्त्रं वदन्नेनमधिष्ठाप्य शिलामथ।
गुरोर्दक्षिणतः पश्चादग्नेरासीत बालकः।।5।।

89. सम्पातान्त्सप्त हुत्वाऽग्नौ तेनास्ये चाहुतित्रयम्।
ऋचान्तं वादिनं मन्त्रं परीत्याग्निमवस्थितम्।।6।।

90. शिष्यः प्रत्यङ्मुखो ब्रूयात् वाक्यमष्टाक्षरं गुरुः।
विष्णो नारायणायेति शिष्यो गुर्वात्मनामनी।।7।।

91. उक्त्वा च प्राङ्मुखशिश्यः गुरुः प्रत्यङ्मुखस्थितः।
अञ्जलिद्वयमापूर्य भूमौ निस्त्राव्य तज्जलम्।।8।।

92. शिष्योक्तायां च षट्पद्यां कोनामासि गुरोर्वचः।
गुरुणा समिदाधानात् वक्ता मन्त्रगणस्य च।।9।।

93. गृहीत्वा दक्षिणं हस्तं नाभिं स्पृष्ट्वांऽसमर्शनम्।
स्पृष्ट्वा वक्षश्च शिष्यस्य परिदानं च शासनम्।।10।।

94. आसित्वा पूर्ववदुभौ घृताक्ताः समिधश्च षट्।
वटुरादाय बध्नीयान्मन्त्रमुक्त्वा च मेखलाम्।।11।।
95. मौञ्जीमारभ्य चोलानमाजलाचमनाद्वटोः।
निक्षिप्याजिनमस्यांसे गुरुर्मन्त्रमुदीरयन्।।12।।
96. तथैव दत्वा दण्डं च पालाशं नासिकामितम्।
शिष्येण पात्रमादाय मातृपूर्वं च भिक्षिते।।13।।
97. उपविश्य वटुर्मन्त्रमुक्त्वाऽऽचमनमाचरेत्।
अथ भिक्षितमन्नं तदुपनीयान्तिके गुरोः।।14।।
98. उप सन्न्यस्य च वटोः सावित्रीं विधिवद्गुरुः।
उपविश्य च वेदादावों पूर्वं साम गापयेत्।।15।।
99. चतस्रः समिधः क्षिप्त्वा घृताक्ताः शासनं वटोः।
षट्क्रतुप्रेष्यमन्त्रेऽस्मिन् भवेतिपदमामनेत्।।16।।
100. समाप्य चोत्तरं तन्त्रं बालकं भोजयेद्गुरुः।

13.सन्ध्योपासनपालाशयागप्रयोगः

सायंसन्ध्यासमारम्भो रवेरस्तमयात्पुरा।
101. तथा प्रातश्च ताराणामिति स्मृतिविदो विदुः।।1।।
सव्याहृतिं सप्रणवां गायत्रीं शिरसा सह।
102. त्रिः पठेदायतप्राणः प्राणायामः स उच्यते।।2।।
विशिष्टा गुरवोऽस्माकं आचारेष्वप्रमादिनः।
103. यथापूर्वं च कुर्वन्ति नित्यकर्म समाचरेत्।।3।।
इति नोच्यते सन्ध्यायां औपासनविधिः क्रमः।
104. अक्षारलवणाशी स्याद्बालकस्तु दिनत्रयम्।।4।।
सायं घृताक्ताः समिधः षडादध्यादसौ सदा।
105. प्राच्यामुदीच्यां वा पर्णं सशिष्यो वनमेत्य च।।5।।
आज्याभ्यक्ते च तन्मूले सम्मृष्टे गोमयेन च।
106. आदायादाय हस्तेन हुत्वा व्याहृतिभिश्चरुम्।।6।।

पूर्वं परस्तात्कर्तव्यं अमन्त्रं परिषेचनम्।

107. उत्सृज्य दण्डं पृथिव्यां प्रयच्छेदपरं वटोः॥7॥
दत्वा गां गुरवे शिष्यः तत्कुले नियतो वसेत्।

14.गौदानिकादिप्रयोगः

108. व्रतारम्भस्ततः कार्यः काले पश्चादुपाकृतिः।
ततः परं च वेदस्य प्रशस्तेऽहन्युपक्रमः॥1॥

109. तत्र प्रतिव्रतारम्भामुपवीतादयो नवाः।
अग्निं प्रणीय शिष्येण कृते परिसमूहने॥2॥

110. अग्न्यलङ्करणं कृत्वा स्थितं शिष्यं गुरुस्ततः।
यथोपनयने वासः परिधाप्योपवीतिनम्॥3॥

111. मौञ्जीत्वग्दण्डसहितं कृत्वा तमुपवेशयेत्।
शिष्योऽग्निं परिषिच्याथ चतस्त्रः समिधः क्षिपेत्॥4॥

112. पर्युक्ष्य चैवमन्तेऽपि विना वस्त्रादिभिर्विधिः।
तत्राचारिषमित्यादि स्यान्मन्त्राणामियं भिदा॥5॥

113. गौदानिकव्रातिकाख्यं आदित्यव्रातिकं तथा।
तथोपनिषदं पश्चान्महानाम्निकमेव च॥6॥

114. एकैकवर्षसाध्यानि व्रतान्येतानि पञ्च च।
आधानं समिधां सायं स्नानं सन्ध्याद्वयेऽपि च॥7॥

115. केशधारणमेकैकव्रतान्ते वपनं तथा।
कालयोर्भैक्ष्यचरणं सर्वथा गुर्वधीनता॥8॥

116. भोजनं सन्ध्ययोः स्नात्वा समिदाहरणं वनात्।
कार्याण्येतानि सर्वेषु व्रतेष्वास्नानवासरात्॥9॥

117. विशेषतस्तृतीयेऽन्ये व्रते विहितमाचरेत्।
छन्दः पाठमधीयीत प्रथमं व्रतमाचरन्॥10॥

118. व्रतपर्वाथ श्रृणुयाद् व्रातिकास्ते गुरोर्मुखात्।

आदित्यव्रातिकस्यान्ते श्रृणुयाच्छुक्रियाणि च।।11।।

119. चतुर्थे चोपनिषदं ज्येष्ठसामादिकाः स्मृताः।
बृहच्छिशुगणाख्यातं पाठो वा ब्राह्मणं ततः।।12।।

15.उपाकर्मप्रयोगः

120. श्रावणे च नभस्ये च पर्वणोर्हस्तयोर्द्वयोः।
स्यादुपाकर्मणः कालः पर्वर्क्षासम्भवेऽन्यतः।।1।।

121. कूर्चाः पत्राणि कुसुममर्कस्य सिकता अपि।
लाजा दधि च शिष्यैश्च क्लृप्तानि गुरुगेहतः।।2।।

122. ऋष्यादीनुत्तरे भागे जैमिन्यादींश्च पूर्वतः।
वंशस्थान्दक्षिणे शिष्यान्परितः कल्पयेद्गुरुम्।।3।।

123. अग्निं प्रणीय सम्प्रोक्ष्य त्रिराचम्य प्रभञ्जनात्।
गुरुः शिष्यैः सहाऽचम्य स्यादुपांशुजपस्ततः।।4।।

124. स्पर्शादिपूर्ववद्भूमेर्धानोत्पूतौ तु विक्रिया।
आचार्यः पूर्वतन्त्रान्ते सावित्रीं विधिवत्क्रिया।।5।।

125. सामरुपां च तां सोमं राजेत्यत्र च साम च।
आदावाग्नेयपाठः स्यात्तथेन्द्रपवमानयोः।।6।।

126. एकैकसाम्ना प्रवदेत् पूर्वां पूर्वामृचं गुरुः।
तथा शिष्या अनुब्रूयुः एतत्सर्वं गुरुदितम्।।7।।

127. हुत्वा नवाऽऽहुतीर्लाजैः आवत्तैर्दधिमिश्रितैः।
स्विष्टकृत्स्यादर्कपुष्पैः आदावृष्यादिपूजनम्।।8।।

128. जैमिनिप्रमुखाः पूज्याः वंशस्थमपि पूजयेत्।
एषां पूजा चतुर्थ्या स्यात्तर्पणं च द्वितीयया।।9।।

129. धाना निवेदयेच्छिष्यास्तर्पयेयुर्जलैरथ।
तन्त्रशेषं समाप्य स्याल्लाजशेषाभिमर्शनम्।।10।।

130. तच्च शिष्यैः सह प्राश्य गृह्णीयाद्भोजनानि च।

विधिवद्व्रतिनामेषां वेदारम्भः शुभेऽहनि।।11।।

131. उक्ताश्च दक्षिणा देयाः शिष्यैः पाठसमाप्तिषु।
कर्तव्यं गरुणैकेन श्राद्धादीनां च वर्जनम्।।12।।

16.उत्सर्गप्रयोगः

132. उत्सर्गो मासि तैषे स्यात्पूर्णायां हस्तभेऽथवा।
तत्रोपाकर्मवत्कार्यं समन्त्रं वेदमुत्सृजेत्।।1।।

133. उपाकृत्याप्यथोत्सृज्य नाधीयीरन्दिनत्रयम्।
उपाकर्मणि चोत्सर्गे पूजा इति महर्षयः।।2।।

17.महानाम्निकव्रतप्रयोगः

134. महानाम्निकमप्यब्दं पिता चेच्चरितव्रतः।
अहोरात्रं व्रतस्यान्ते वने शिष्य उपोषितः।।1।।

135. तत्र गत्वा गुरुः प्रातः गृहीत्वा चाहताम्बरम्।
कांस्यं सशैवलजलं धृत्वाऽऽसीनं निमीलितम्।।2।।

136. ऋक्पूर्वं संस्पृशन्नीत्वा पुरीषसहिताः सिमाः।
उत्थाय वस्त्रं संवेष्ट्य वाससा च प्रदक्षिणम्।।3।।

137. एनमादाय च गुरुः प्रविशेन्निशि मन्दिरम्।
मौनी तिष्ठेदहः शिष्यः आसीनो जागृयान्निशि।।4।।

138. साग्निवत्सो गुरुः प्रातः सशिष्यो वनमेत्य च।
दर्शयित्वा जलं भानुं वह्निं वत्सं क्रमादपः।।5।।

139. प्रसिच्य वस्त्रमुद्वेष्य गृहं गत्वा श्रुते चरौ।
गुरुस्तु पूर्वतन्त्रान्ते तेन हुत्वाऽऽहुतिद्वयम्।।6।।

140. क्षेप्त्वा व्रतान्ते समिध अथ स्विष्टकृदाहुतिः।
होमं समापयेदस्मै वत्सकांस्यपटैस्सह।।7।।

141. दत्वा गां रसवन्मिष्टं भोजयेद्व्रानुगं गुरुम्।

18.गोदानकरणप्रयोगः

अथ गोदानकरणं कथ्यते ब्रह्मचारिणः।
142. समिधोऽष्टौ स्रजं गन्धं कल्कं क्षीरद्रुमत्वचम्।।1।।
चौलोपकरणान्यस्मिन् गुरुः कर्मणि कल्पयेत्।
143. समाप्तौ पूर्वतन्त्रस्य प्रधानाहुतिपञ्चकम्।।2।।
व्रतान्ते समिधः शिष्यः क्षिपेच्च गुरुरुत्थितः।
144. क्षुरदानादिकं कुर्यात् अथ सर्वाङ्गवापनम्।।3।।
स्नात्वा त्वचाऽङ्गमालिप्य स्नात्वा गन्धस्रजोर्ग्रहः।
145. दर्पणे वीक्षमाणस्य माल्यं व्यपनयेद्गुरुः।।4।।
व्रतारम्भसमित्क्षेपः शेषं कृत्वा च चौलवत्।
146. पूर्ववत्केशखननमत्र गौर्गुरुदक्षिणा।।5।।

19.समावर्तनप्रयोगः

वस्त्राण्युपानहौ शुक्ले शैत्योष्णं स्वर्णयुग्जलम्।
147. एरका वैणवो दण्डः त्रिवृच्च मणिरञ्जनम्।।1।।
एतानि स्युश्च गोदानसम्भाराः स्नानकर्मणि।
148. परस्तात्पूर्वतन्त्रस्य व्रतान्तसमिदिष्यते।।2।।
आचार्य एरकां शिष्यं नीत्वोदग्दशवाससम्।
149. दण्डं क्षिप्त्वाऽप्सु विस्रस्य मौञ्जीं तामप्सु निक्षिपेत्।।3
प्रधानहोमं चौलस्य कर्माखिलमथाऽऽचरेत्।
150. कृतसर्वाङ्गवपनं केशानुद्धृत्य च स्वयम्।।4।।
निखायाश्वत्थमूले च शिष्यः स्नात्वा गृहं विशेत्।
151. समन्त्रञ्च गुरोः स्नानमथ स्नानीयलेपनम्।।5।।
स्नात्वैरकायामासीनो गन्धवान्माल्यवानपि।
152. वाससा परिधाप्यैनं पृथक्मन्त्रवचोऽञ्जनम्।।6।।
दर्पणं चोर्ध्ववासश्च त्रिवृण्मणिरनन्तरम्।
153. दण्डादानं च मन्त्रेण स्यादादानमुपानहोः।।7।।

अमन्त्रं प्रतिमोक्तव्ये व्रतप्रैषवचस्ततः।

154. उपानहावथाव्त्र स्नानीयादौ क्रियागणे।।8।।
मन्त्राणां वाचकः शिष्यो विना मन्त्रेण वाससः।

155. समापयेत्परन्तन्त्रं चौलवत्सह दक्षिणा।।9।।

20.मधुपर्कप्रयोगः

पाद्यार्घ्यार्थजलं बर्हिः कूर्चो दधियुतं मधु।

156. गौराचमनपात्रं च मधुपर्के प्रकल्पयेत्।।1।।
शिष्येण मधुपर्कार्थं बोधितस्तङ्गुरुर्हरेत्।

157. शिष्यः प्राङ्मुख आसीत गुरुणा दत्त आसने।।2।।
उक्त्वोक्त्वा स्वस्य नामस्य प्रयच्छेदासनादिषु।

158. पादप्रक्षालने मन्त्रः सकृत् सकृदिहेष्यते।।3।।
प्रतिगृह्य कराभ्यां तं भूमिं नीत्वाऽवधृष्य च।

159. त्रिः प्राश्नीयात्सकृन्मन्त्रमुक्त्वाऽथाऽऽचमने कृते।।4।।
दत्वा विप्राय तच्छेषं अथवा निखनेत्क्वचित्।

160. दत्तां गामुत्सृजेच्छिष्यः गौर्धेनुरिति मन्त्रतः।।5।।
अस्त्वित्यन्तमुपांशूच्चैः प्रणवादिकमुच्चरेत्।

161. स्नातकस्य गुरोः सख्युः श्रोत्रियस्य निजर्त्विजः।।6।।
अभिषिक्तस्य राज्ञश्च मधुपर्कं प्रकल्पयेत्।

21.विवाहप्रयोगः

162. पूर्णकुम्भैरकाश्मानं शूर्पसम्पातभाजनम्।
शमीदलयुताँल्लाजान् वस्त्रे चोद्वाहकर्मणि।।1।।

163. अलंकृतो वरः स्वस्तिवाच्य कन्यागृहं गतः।
गृहीत्वा मधुपर्कं च कृत्वा दूतानुमन्त्रणम्।।2।।

164. उपविश्याऽऽसने वह्निमायान्तमनुमन्त्र्य च।
प्रतिष्ठितं प्रदीप्तं तं उपस्थाय समुत्थितः।।3।।

165. सम्भारान्प्रोक्ष्य दत्वाऽथ कुमार्यै चाम्बरद्वयम्।
अग्न्यात्मनोश्च मध्येन नीत्वा दक्षिणतः स्त्रियम्।।4।।

166. मङ्गल्यसूत्रं बध्वा च सूक्तं समा वदन्गुरुः।
सङ्कीर्त्य कन्यावरयोः पिताऽस्या गोत्रनामनी।।5।।

167. द्वितीयया चतुर्थ्या च दद्यात्तां जलपूर्वकम्।
दक्षिणे च वरः कन्यां पार्श्वे समुपवेशयेत्।।6।।

168. उदकुम्भं वहन्विप्रः प्रागग्नेर्वाग्यतः स्थितः।
शूर्पं लाजयुतं माता दधत्यासीत दक्षिणे।।7।।

169. भूस्पर्शाद्यत्र लाजानाम् उत्पावो व इति स्मृतः।
अग्नेः पुरस्तात्तन्त्रस्य प्रसार्य विधिनैरकाम्।।8।।

170. अथ मन्त्रौ जपित्वा तावारभेतामुभावपि।
अन्वारब्धः तया हुत्वा चतस्रो व्याहृतीरपि।।9।।

171. सप्तान्या अपि सम्पातमृचस्त्वर्धर्चशो वदन्।
पात्रेण सम्पातघृतं वधूशिरसि निक्षिपेत्।।10।।

172. ऋचा प्रत्यङ्मुखस्तिष्ठन् राधयामसि संस्थया।
कुमार्या दक्षिणं पाणिं गृहीत्वा तेन पाणिना।।11।।

173. दृषदं समधिष्ठाप्य प्रागत्वा वीक्षितस्तया।
भवेति कथ्यते बध्वा सम्बुध्या नाम निर्दिशेत्।।12।।

174. पुनर्नाम गृहीत्वाऽग्निं परिक्रम्य स्थितौ ततः।
द्विरुप्तान् स्वाञ्जलौ भ्रात्रा लाजानाज्याभिघारितान्।।13

175. कुमारी जुहुयाद्भर्त्रा चोपस्तीर्णाभिघारितान्।
हुत्वा लाजाहुतेर्मन्त्रमपरं च जपेद्वरः।।14।।

176. नामपूर्वं परिक्रम्य पूर्ववज्जुहुयादथ।
पुनः प्रदक्षिणं कृत्वा हुत्वा मन्त्रजपे कृते।।15।।

177. शूर्पेण माता तच्छेषं शुभेन मनसा क्षिपेत्।
त्रिः कृत्वा जपितं मन्त्रं सङ्ख्यापूर्त्यर्थमामनेत्।।16।।

178. अग्नेः प्रागुत्तरे सप्त पदान्विक्रमयेद्वधूम्।
तत्र स्थितां प्राग्वदनां मार्जयीरन्घटाम्भसा।। 17।।
179. भर्तृ लाजप्रदः कुम्भधरश्चैते त्रयः क्रमात्।
प्रत्येत्य वाऽत्र वा प्रेक्ष्य वनिताः पुरतः स्थिताः।। 18।।
180. समाप्य चोत्तरं तन्त्रं ध्रुवादीनां च दर्शनम्।
ध्रुवस्योपस्थितौ मन्त्रस्यान्त ईशस्य पार्वती ।। 19।।
181. तथाऽरुन्धत्युपस्थाने हरिणा श्रीरिति क्रमात्।
भर्तृस्वनामनी ब्रूयादशक्ता चेत्स्वयं वदेत्।। 20।।
182. एवं दृष्ट्वा ततस्तूष्णीं सप्तर्षीणामुपस्थितिः।
प्रस्थितामनुमन्त्रैनां वरो गच्छेत्तया सह ।। 21।।
183. तत्रावरोपयेयुस्ताः स्त्रिय एनां सुमङ्गलीः।

22.वधूगृहप्रवेशप्रयोगः

चर्म चानडुहो बालं फलं किमपि कल्पयेत्।
184. गृहं प्रविश्य तत्राग्निं प्रणीय विधिपूर्वकम्।। 1।।
अन्ते तु पूर्वतन्त्रस्य तां चर्मण्युपवेश्य च।
185. कृत्वाऽङ्कस्थं च सफलमुत्थाप्य च कुमारकम्।। 2।।
अष्टौ हुत्वेह धृत्यादिमन्त्रैः स्पृष्टस्तयाऽऽहुतीः।
186. समाप्य होमं त्रिदिनमाचरेतामुभौ व्रतम्।। 3।।

23.चतुर्थीहोमप्रयोगः

सायंकाले कृतस्नानौ चतुर्थेऽहनि दम्पती ।
187. चरुं सम्पातपात्रं च निशायां कल्पयेद्वरः।। 1।।
वैवाहिकं प्रतिष्ठाप्य वह्निं पूर्वक्रियोपरि।
188. सम्पातं सर्पिषा पञ्च द्वे हुत्वा चरुणा ततः।। 2।।
तत्सम्पातं च दत्वाऽस्यै वधूभिः कारतेऽञ्जने।
189. स्विष्टकृच्चास्य परतस्तन्त्रोक्तैः स्वस्तिवाचनम्।। 3।।

मूलाञ्जनमिहोद्दिष्टं घृतपात्रे चरावपि।
190. आवाभ्यामित्यसौ ब्रूयाद्युवाभ्यामिति च द्विजाः।।4।।
संवेशनं भवेदर्धरात्रौ पश्चादृतावृतौ।
191. एतत्कर्मत्रयार्थं च गौर्देया गुरुदक्षिणा।।5।।

24.औपासनप्रयोगः

अधुनौपासनारम्भो व्रीहिभिर्यदि वा यवैः।
192. आरम्भो वैश्वदेवस्याप्यादानीय्यान्नभागतः।।1।।
अग्निं परिसमूह्याथ परिस्तीर्याऽऽयतैः कुशैः।
193. परिषिच्याथ पर्युक्ष्य सायमग्निं प्रजापतिम्।।2।।
सूर्यं प्रजापतिं प्रातश्चतुर्थेष्वा च नित्यशः।
194. परिषिच्याथ पर्युक्षेदवासापूर्विकक्रमः।।3।।
सूतिकासद्महोमे च समिदाधानकर्मणि।
195. व्रतानामादितश्चान्ते वैश्वदेवेऽप्ययं क्रमः।।4।।

25.वैश्वदेवप्रयोगः

पात्रस्थमन्नं हस्तेन खण्डीकृत्य द्विधा ततः।
196. सप्त हुत्वा च पूर्वेण भागेन स्याद्बलित्रयम्।।1।।
पश्चादर्धेन च बलीन् हृत्वा स्थानेषु सप्तसु।
197. प्रदक्षिणं प्रतिस्थानं कृत्वा शेषं क्वचित्क्षिपेत्।।2।।
प्रागुत्तरे च दिग्भागे धन्वन्तरिबलिं क्षिपेत्।
198. आरभ्यते पौर्णमास्यां स्थालीपाकोऽत्र पावके।।3।।

26.नवयागप्रयोगः

एकं हविः पुराणानां व्रीहीणां शरदागमे।
199. नवानां त्रीणि वैकं वा नवेष्ट्यां कल्पयेद्गृही।।1।।
अग्निधन्वन्तरीत्यादिमन्त्रैः पूर्वक्रियोपरि।
200. पुराणहविषा पूर्वं जुहुयात्तिस्र आहुतीः।।2।।

ऐन्द्राग्नाद्यभिधानास्स्युः नूतनाश्चरवस्त्रयः।
201. अवदाय त्रिभिर्मन्त्रैर्जुहुयात्तिस्र आहुतीः॥3॥
एकश्चरुर्यदि भवेत्तदा स्यादाहुतित्रयम्।
202. चरुद्वयाच्चतुर्भ्यो वा चरुभ्यः प्रतिपात्रकम्॥4॥
अवदाय यथागोत्रं होमः स्विष्टकृतो भवेत्।
203. प्राशनेऽप्यवदानं त्विष्ट्वा स्यात्तन्त्रमुत्तरम्॥5॥
पृथिव्यामिति मन्त्रस्य नावृत्तिर्हविरञ्जने।
204. एवं वसन्ते च यवैश्श्यामाकैः प्रावृडागमे॥6॥
त्रयः प्राशनमन्त्रास्स्युः त्रिषु कालेषु च क्रमात्।
205. नवयागमकृत्वा चेदद्यादन्नं नवं गृही॥7॥
जुहुयादग्नये वैश्वानरायेतीष्टिकृद्भवेत्।

इति पूर्वप्रयोगकारिका॥

***

अथ अपरप्रयोगकारिका

27.औपासनाग्निसंस्कारप्रयोगः

206. अनवेक्ष्येव गृह्योक्तिं व्याख्यातृवचनक्रमात्।
अनुष्ठानानुरोधेन वक्ष्यते पैतृकी क्रिया॥1॥
207. सर्पिरेका समिद्धेमशकलं स्रुक्स्रुवौ घटः।
पात्रं वह्निस्तथा काष्ठमहतं वास एव च॥2॥
208. दर्भाश्चौदुम्बरी शाखा भवेयुर्दाहकर्मणि।
धृताहताम्बरं प्रेतं स्नापितं च द्विजन्मभिः॥3॥
209. मार्गमध्येऽवरोप्यैनं हरेयुर्विपरीतवत्।
नीत्वा श्मशानं संस्कर्ता स्नातस्सन् पितृवीतिवान्॥4॥

210. औदुम्बर्या शाखया च भूमिसम्मार्जने कृते।
अग्निं प्रणीय विधिवत्तथा परिसमूह्य च॥5॥

211. परिस्तीर्य च संस्कारं कृत्वाऽऽज्यस्य ततः परम्।
उत्पूयाऽऽज्यस्त्रुक्स्त्रुवौ तु पवित्रं पावके क्षिपेत्॥6॥

212. निष्टप्य स्रुक्स्रुवौ दर्भैः सम्मृज्य प्रोक्ष्य तान्क्षिपेत्।
परिषिच्याथ पर्युक्ष्य सव्यहस्तगतस्रुचि॥7॥

213. यथागोत्रं गृहीत्वाऽऽज्यं स्रुवेण समिदाहुतिः।
अन्वारब्धे शवे होमोऽयं वै त्वमिति मन्त्रतः॥8॥

214. परिषेकादिकं कृत्वा कारयित्वा चितां द्विजैः।
प्रोक्ष्याऽऽरोप्य शवं हित्वा चाऽऽसन्दीमस्य चोपरि॥9

215. पर्यस्येद्दिशि वारुण्यां स्रुवं नासापुटं नयेत्।
निधाय च स्रुचं हस्ते दक्षिणे घृतसेचनम्॥10॥

216. आस्ये हिरण्यशकलं आधाय व्रीहिभिः सह।
वहन्कुम्भं परिक्रामेत् त्रिःप्रसव्यं क्रमात्कृतैः॥11॥

217. त्रिभिश्छिद्रैस्स्रवत्तोयं भिद्याच्छवशिरोऽन्तिके।
तत्कपालैकदेशस्थं जलं सिञ्चेत्तदानने॥12॥

218. संस्कर्ता पितृवीती सन् अथ प्राग्दक्षिणाननः।
संस्तीर्योपरि काष्ठानि प्रोह्य वह्निमुपस्थितम्॥13॥

219. आयामयेति साम्ना च त्वेषास्त इति सामतः।
धूमोद्गमेऽथ संस्पृष्टे साम्नाग्नाइ मृडेति च॥14॥

28. आहिताग्निसंस्कारप्रयोगः

220. क्रमेऽस्मिन्नाहिताग्नीनां विशषः कथ्यते विधिः।
सम्पादितं दक्षिणाग्नावादाय च तमुल्मुकम्॥1॥

221. अग्निद्वयं च पात्राणि क्षुरं नखनिकृन्तनम्।
नीत्वा श्मशानं तत्राग्नीन् विहृत्य च यथापुरम्॥2॥

222. खात्वाऽवटं च नैर्ऋत्यां दिशि केशादिवापनम्।
निखाय स्नापयित्वा च पूर्वाग्नेः परतः शवम्।।3।।

223. निधाय दक्षिणमुखं परिस्तीर्य च पावकान्।
पश्चिमे वाऽऽज्यसंस्कारो वह्नौ स्रुक्स्रुवमार्जनम्।।4।।

224. प्रागग्नावाहुतिः कार्या दक्षिणाग्नेरुदक्चिता।
आरोप्यैनं तदुपरि पात्राणि निदधाति च।।5।।

225. भित्वा प्राशित्रहरणं शूर्पं च मुसलं तथा।
स्रुवं नासिकयोर्हस्ते दक्षिणे च जुहूमथ।।6।।

226. सव्ये चोपभृतं पात्रं ध्रुवां वक्षस्स्थलेऽपि च।
मुखेऽग्निहोत्रहवणीं चमसम्ये च मूर्धनि।।7।।

227. प्राशित्रहरणे कर्णे द्वितीये च विनिक्षिपेत्।
निक्षिपेदुदरे पात्रीं सा न चेच्छूर्पमेव तत्।।8।।

228. अण्डद्वये शिले शिश्ने शम्यामङ्गेऽजिनं क्षिपेत्।
पृष्ठे स्फ्यं पार्श्वयोः शूर्पे मुसले च विनिक्षिपेत्।।9।।

229. उलूखलं पदद्वन्द्वे शिष्टान्यपि चितोपरि।
निधातव्यानि चैतेषामुत्तानमुखता स्मृता।। 10।।

230. आज्येन पूरयित्वाऽस्य मुखं पात्राणि तानि च।
विप्रेभ्यो गोमयं दद्यात् मृण्मयान्यप्सु निक्षिपेत्।।11।।

231. शेषावृत्पूर्ववत्कार्या संस्कर्ताऽवहितात्मनि।
अस्य पत्नी प्राङ्मृता चेत्यत्रैव वपनाहुती ।।12।।

232. एनां सहाग्निभिः पात्रैर्दहेद्दाहावृतोक्तया।

29. असाध्वीसंस्कारप्रयोगः

त्रेताग्नितप्तलोष्टस्थान् वह्नीन्नीत्वैकतान्ततः।

233. दहेत साध्वीं वनितामावृता तान्ययोषिताम्।। 1।।
अरणीजन्मनैकेन वह्निना वा दहेदिमाम्।

234. उत्सृज्य चाग्नीन्पात्राणि जायावानादधीत च।।2।।

कृत्वा विवाहमितरमादधीताचिरेण च।

30. प्रेताधानप्रयोगः

235. विच्छिन्नाग्नौ प्रमीते च प्रेताधानं विधीयते।
स्नात्वाऽथ पितृवीती सन्संस्कर्ता किञ्चिदस्पृशन्॥1॥
236. अश्वत्थादिति योऽश्वत्थ इति यत्वोसमित्यतः।
अरणिं परिगृह्याथ गत्वा प्रेतसमीपतः॥2॥
237. तस्यैव दक्षिणे पाणौ स्पृष्टं कृत्वाऽरणिद्वयम्।
जपन्नास्येऽग्नय इति मथित्वा वह्निमेतयोः॥3॥
238. त्रिधा कृत्वा परिस्तीर्य घृतं संस्कृत्य पश्चिमे।
सम्मृज्य स्रुक्स्रुवौ तत्र त्रीनग्नीन्परिषिच्य च॥4॥
239. स्रुचि द्वादशकृत्वस्तद्गृहीत्वाऽऽज्यं स्रुवेण च।
उक्त्वा पुरुषसूक्तं च जुहुयात्पूर्वकेऽनले॥5॥
240. तथा गृहीत्वा हुत्वा च पश्चिमे त्वथ दक्षिणे।
परिषिच्य च संस्कारं कुर्याद्दाहावृतोक्तया॥6॥
241. एकेऽपि शिष्टाः कुर्वन्ति कर्मेदमुपवीतिनः।
नष्टपात्रारणेरस्य कृत्वा पात्राण्यशेषकः॥7॥
242. प्रेताधानं च कृत्वा तं आहिताग्न्यावृता दहेत्।
आहिताग्निरभार्यः सन्मृतश्चेत्स्रुक्स्रुवौ नवौ॥8॥
243. प्रेताधानक्रमेणैव मथित्वाऽग्निं ततो दहेत्।

31.संस्कारयोग्यतापादनप्रयोगः

कृत्वा पक्षेऽथवा रात्रावथवा दक्षिणायने।
244. आहिताग्निः प्रमीतश्चेत् ता सूर्याचन्द्रमसेत्यतः॥1॥
षडाहुतीः पृथग्घुत्वा परतः पूर्ववद्दहेत्।
245. सायं हुताग्निः प्रेतश्चेत्प्रातर्हुत्वा दहेदमुम्॥2॥
अनिष्ट्वा दर्शमेतस्य मरणं सम्भवेद्यदि।
246. कृत्वा पूर्णाहुतिमथो दाहकल्पेन तं दहेत्॥3॥

32. प्रायश्चित्तप्रयोगः

प्रमीतस्याऽऽहिताग्नेस्तु पत्नी यदि रजस्वला।
247. जातवेदो मनोज्योतिर्महाव्याहृतिभिस्तथा॥1॥
अप पाप्मानमित्याभ्यां ऋग्भ्यां हुत्वाऽऽहुतीरपि।
248. अशेषं कर्म परतः पैतृमेधिकमाचरेत्॥2॥
श्रोत्रियस्यापि संस्कारं आमनन्त्याहिताग्निवत्।

33. अनुमरणप्रयोगः

249. पत्नी परेतं भर्तारं अनुगन्तुं यदीच्छति।
तस्य संस्कार एव स्यादस्याः संस्कार एव च॥1॥
250. भर्तृपूर्वं पृथक्पिण्डमुदकं श्राद्धमाचरेत्।
सापिण्ड्यं भर्तृपिण्डेन सहास्या इति निर्णयः॥2॥
251. एकगर्ते जलं दद्यात् पिण्डञ्चैकोदने द्वयोः।
सहास्थीनि च संसिच्य श्राद्धं कुर्यात्पृथक् पृथक्॥3॥

34.अनग्निमत्संस्कारप्रयोगः

252. अनौपासनिके प्रेते मृतायामस्य च स्त्रियम्।
आनीय श्रोत्रियगृहादग्निं सन्धाय चावृता॥1॥
253. दाहकल्पेन तु दहेत् विधाय च नवस्रुचम्।
अनुपेतं च विधवां विधुरं ब्रह्मचारिणम्॥2॥
254. स्रुक्स्रुवौ तु नवौ कृत्वा दहेल्लौकिकवह्निना।

35.सूतिकोदक्याः संस्कारप्रयोगः

255. मृते चेत्सूतिकोदक्ये पञ्चगव्येन चाम्बुभिः।
प्रक्षाल्याभ्युक्ष्य चापो हिष्ठीयाभिस्तिसृभिस्ततः॥1॥
256. सम्प्रोक्ष्याब्लिङ्गकैर्मन्त्रैः पावमानादिभिर्द्विजैः।
यथाविधि दहेदेते परतः पूर्ववन्नयेत्॥2॥

36.गर्भिणीसंस्कारप्रयोगः

257. अन्तर्वत्न्याः प्रमीतायाः संस्कारविधिरुच्यते।

गत्वा श्मशाने दहनं प्रतिष्ठाप्य यथाविधि।।1।।
258. हिरण्यगर्भस्थमिति तत्कुक्षेस्सव्यभागतः।
उल्लिख्य जीवेद्गर्भश्चेत् क्षीराज्याम्बुभिराप्लवः।।2।।
259. स्पृष्ट्वा जीवेति दत्वाऽस्मै यस्ते स्तन इति स्तनम्।
प्रयासेति द्वादश च प्राणायेति चतुर्दश।।3।।
260. जपन्षड्विंशतिर्मन्त्रान् घृतेन जुहुयाद्व्रणे।
तदाज्यपूरितं सूतं कृत्वा तां पूर्ववद्दहेत्।।4।।
261. आशौचान्ते जातकर्म कार्यं पित्रेति निर्णयः।

37.प्रतिकृतिदहनसंस्कारप्रयोगः

परेतस्य विनाशे स्तां कुर्यात्प्रतिकृतिक्रियाम्।
262. पलाशपत्रनालानां षष्टिं च त्रिशतं हरेत्।।1।।
चत्वारिंशच्छिरो ग्रीवा दश बाहुयुगं शतम्।
263. तदङ्गुल्यो दश त्रिंशदुरः कुक्षिस्तु विंशतिः।।2।।
ऊरुद्वयं शतं लिङ्गं दश त्रिंशच्च जानुनी।
264. सजङ्घे चरणाङ्गुल्यो भवेयुः पञ्च पञ्च च ।।3।।
दर्भैः सन्धिषु सम्बद्धामावृतामजिनेन च।
265. प्रेतप्रतिकृतिं कृत्वा श्मशाने पूर्ववद्दहेत्।।4।।

38.उदकक्रियापिण्डदानप्रयोगः

दग्धे तस्मिंस्तु तं देशमनवेक्ष्यैव सङ्गताः।
266. गत्वा जलं कृतक्षौरा स्नाताश्च स्रवदम्बराः।।1।।
आचान्ता दर्भहस्ताश्च ज्ञातयः पितृवीतिनः।
267. तीरे कुर्युर्बालपूर्वं सपवित्रतिलेऽवटे।।2।।
एतत्त उदकं कृष्णेत्यतस्तोयाञ्जलिद्वयम्।
268. शर्मान्तमृषिनाम स्यात् स्त्री चेत्पद्माक्षि पार्वति।।3।।
जलक्रिया प्रशस्तैव स्मर्यते स्थावरे जले।

269. नदीषु चेद्यथासूत्रं कुर्युस्सर्वे जलक्रियाम्।।4।।
पुनस्नानं विधायास्मादुत्तीर्य च जलाशयात्।

270. वह्निं शमीं शिलां मन्त्रैः स्पृष्ट्वा तूष्णीं च गोमयम्।।5
दक्षिणामुखमासीनान् स्थितोऽन्यस्त्वाशिषो वदेत्।

271. ताः स्युश्शतायुषो भूयास्ताद्या एकादशाशिषः।।6।।
अस्तं यियासति रवौ सम्प्रविश्य गृहानथ।

272. नग्नप्रच्छादनं दत्वा पिण्डान्दद्याद्यथाविधि।।7।।
काष्ठोल्मुकं चामपात्रमञ्जनाभ्यञ्जने कुशान्।

273. तिलं चरुं गन्धपुष्पं पिण्डदानेषु कल्पयेत्।।8।।
संस्कर्ता पितृवीती सन्नथ प्राग्दक्षिणामुखः।

274. स्थापयित्वा शिलां तां तु गोमयेनोपलिप्य च।।9।।
दर्भान्त्संस्तीर्य चाचाम पितरीशेति मन्त्रतः।

275. कृत्वाऽऽचमनमेतत्ते पितरीश स्वधा नमः।।10।।
इति पिण्डं प्रदायात्र पितरो मेति सञ्जपन्।

276. आवृत्यो दर्भयुतः पुनरावृत्य च स्वयम्।।11।।
अमीमदन्तेति जपंस्त्वाचमय्य च पूर्ववत्।

277. नीवीं विस्रस्य च नमेत् पित्रे नम इति स्थितः।।12।।
एतद्वः पितरो वास इति दत्वा दशां पुनः।

278. अङ्क्ष्व नारायणेति स्यादभ्यङ्क्ष्व श्रीधरेति च।।13।।
अभ्यर्च्य गन्धपुष्पैस्ता नमो व इति चाऽऽनमेत्।

279. अथ प्रसिच्योर्जमिति मामेक्षेत्यनुमन्त्रणम्।।14।।
ये समाना इति वदन्कुर्यात्पिण्डं प्रदक्षिणम्।

280. निदध्यात्पिण्डयुगलं सायम्प्रातर्मनीषया।।15।।
मात्रादौ मातरित्यादि जाये पुत्रेति नो वदेत्।

281. दशरात्रे प्रवृत्ते तु दर्शो यद्यन्तराऽऽगतः।।16।।
सङ्ख्याय तोयपिण्डानां दिवसेऽस्मिन्त्समापयेत्।

282. दर्शानवेक्षणं पित्रोर्वदन्ति स्मृतिपारगाः॥17॥
दशाहकर्मण्यारब्धे संस्कारादौ कनीयसा।
283. ज्येष्ठो यद्यन्तराऽऽगच्छेत् स ददाति समाचरेत्॥18॥

39.अस्थिसञ्चयनप्रयोगः

द्वितीयेऽस्थीनि संसिच्य मृत्कोशस्थपयोम्भसा।
284. योषिदस्थीनि सङ्गृह्य निदध्युरितरत्समम्॥1॥
स्नापिताश्च परैस्तत्र मृदपामार्गगोमयैः।
285. शेषं निर्वर्तयेयुस्ते पुष्टास्सम्बन्धिबान्धवैः॥2॥
शिलोद्धृतिः स्याद्दशमे श्राद्धमेकादशेऽहनि।
286. अस्मिन्नहनि शुक्रस्य वारो यद्युत्तरत्रयम्॥3॥
रोहिणी वा पतेत्तत्तु द्वादशेऽह्नि विधीयते।

40.एकोद्दिष्टप्रयोगः

287. तिलदर्भाज्यकुसुमगन्धसव्यञ्जनोदनम्।
औदुम्बरीसमित्पात्रमूलच्छिन्नकुशासनम्॥1॥
288. कल्पयित्वा प्रातरेव स्नात्वोद्धृतजलश्शुचिः।
पितृवीती तिलैर्वास्तु विकीर्यान्ने च संस्कृते॥2॥
289. खात्वाऽवटं ब्राह्मणानां पादौ संक्षाल्य संयतः।
अभ्यक्तेभ्यश्च दत्वाऽथ स्नानीयं दन्तकाष्ठकम्॥3॥
290. स्नात्वाऽऽगतेभ्यः पाद्यं च दत्वाऽऽमेत्युपवेश्य च।
एतत्ते पितरित्युक्त्वा चासनं केशवेत्यपि॥4॥
291. दत्वाऽऽसनं करे सिञ्चेत्स्वधां दर्भतिलान्वितम्।
गन्धपुष्पार्चनं पाणिमालभ्य च कृते क्षणे॥5॥
292. अन्नमादाय पात्रस्थमनुज्ञाप्याऽऽज्यमिश्रितम्।
प्राग्दक्षिणामुखो वह्निं प्रणीय विधिपूर्वकम्॥6॥
293. उपवीती परिस्तीर्य त्रिरान्धून्वन्प्रदक्षिणम्।
तथैव पितृवीती सन् परिस्तीर्याप्रदक्षिणम्॥7॥

294. एवं पर्युक्षणं कृत्वा समिधः परिधीनपि।
पवित्रं संस्कृतं चान्नमुत्पूय च पवित्रकम्।।8।।
295. अग्नौ प्रास्याऽऽहुती कार्ये मेक्षणेनोदनेन च।
अग्नयेऽर्केति सोमायेत्युपवीती जलं स्पृशेत्।।9।।
296. यमाय मेक्षणं हुत्वा पितृवीत्यथ दैवते।
उपस्थायोपवीती सन् उपस्थाय यमेति तम्।।10।।
297. पर्युक्ष्य पूर्ववत्पात्रेष्वोदनं व्यञ्जनान्वितम्।
निक्षिप्याऽमास्विति घृतं सिक्त्वैतद्ध इति स्पृशन्।।11।।
298. जपित्वाऽग्रे विनिक्षिप्य चेषेत्यङ्गुष्ठमर्शनम्।
आदेशमन्त्रो युगपदाज्यमन्त्रं पृथक्पृथक्।।12।।
299. यन्मे प्रेत्यनुमन्त्र्याक्रानित्याश्वं साम गीयते।
भुक्ते सम्पन्नमित्युक्त्वा चाचमय्य जलैः स्वयम्।।13।।
300. अग्नेर्दक्षिणतः पिण्डं क्षिप्त्वा कृत्वा प्रदक्षिणम्।
उपवीत्यथ ताम्बूलं दत्वैषा भुक्तदक्षिणाम्।।14।।
301. वस्त्रादिभिश्च सन्तर्प्य पितृवीत्यभिरेति च।
उक्त्वा प्रदक्षिणं कृत्वा यन्मे रामेत्यनुव्रजेत्।।15।।
302. लब्ध्वाऽन्नशेषानुज्ञां च प्रत्येत्य स्वस्ति वाचयेत्।
भोजयित्वा द्विजान्त्स्नात्वा नित्यकर्म समाप्य च।।16।।
303. लोलुप्यारहितः कर्ता भुञ्जीत ज्ञातिभिस्सह।
एकोद्दिष्टे तु विप्रांस्त्रीन्वृणुयादेकमेव वा।।17।।
304. कल्पोऽयमेव श्राद्धानां षोडशानामपीष्यते।

41.पार्वणश्राद्धप्रयोगः

क्रमेऽस्मिन्पार्वणश्राद्धे विशेषविधिरुच्यते।
305. अमावास्यादिनात्पूर्वदिने नियमवान्द्विजः।।1।।
विश्वेदेवार्थपित्रर्थे द्वौ त्रीन्विप्रांश्च साधयेत्।
306. ये च त्वात्र त्विति ब्रूयादासनाचमनादिषु।।2।।

स्वधापात्रत्रयं चैषामासनानि च पूर्ववत्।
307. देवयोरुदगादि स्यात् पितॄणां पश्चिमादि च॥3॥
सम्भारान्कल्पयित्वा च भोजनानन्तरं द्विजान्।
308. अभ्यर्च्य गन्धपुष्पैस्तानुपवीत्यथ दक्षिणाम्॥4॥
दत्वा च पितृवीती सन्प्रदक्षिणविसर्जने।
309. कृत्वाऽनुगम्यानुमन्त्र्य शेषानुज्ञापने कृते॥5॥
अग्नेर्दक्षिणतः पिण्डत्रयं दद्याद्यथाविधि।

42.सपिण्डीकरणप्रयोगः

310. विप्रषट्कं चतुःपात्रं श्राद्धोपकरणानि च।
कल्पयेदप्रमादेन सपिण्डीकरणे बुधः॥1॥
311. द्वादशेऽह्नि यदि श्राद्धं सपिण्डीकरणं चरेत्।
द्वादशाहत्रिपक्षञ्च षाण्मासं मासिकानि च॥2॥
312. आब्दिकं युगपत्कृत्वा षष्ट्युत्तरशतत्रयम्।
विप्रेभ्यः सोदकुम्भानां भेजनानां प्रदाय च॥3॥
313. अमीमदन्तेत्यवधि श्राद्धं पार्वणवच्चरेत्।
इहैकोद्दिष्टवत्कार्या क्रिया प्रेतस्य पैतृकी॥4॥
314. पुनराचमनात्पूर्वं संसर्गस्तोयपिण्डयोः।
तोयं तोयेषु तत्पिण्डं पिण्डेषु त्रिषु निक्षिपेत्॥5॥
315. ये सजाता ये समाना इति मन्त्रद्वयेन च।
त्रिषु पिण्डेष्वधः पश्चाच्छेषं कुर्याद्यथाविधि॥6॥
316. एतत्सपिण्डीकरणं वत्सरात्परतो यदि।
श्राद्धं षोडशकं सोदकुम्भं ब्राह्मणभोजनम्॥7॥
317. सदक्षिणं यथाशास्त्रं काले काले समाचरेत्।
स्त्रीणां सापिण्ड्यमेकेन भर्ता तस्मिंस्तु जीवति॥8॥
318. श्वश्र्वादिभिस्तासु चैके योगमाहुः सहैकया।
दातव्यास्तत्र षट् पिण्डाः पित्रादीनां यथाक्रमम्॥9॥

319. पितामहाद्यैः पौत्राणां संयोगः पितरि स्थिते।

43.संस्कारादिनिर्णयप्रयोगः

प्रथमेऽब्दे द्वितीये वा प्रमीतो यदि बालकः।
320. निखनेदुदकाद्यस्य न कुर्यादौर्ध्वदेहिकम्॥1॥
तृतीये च चतुर्थे च दग्ध्वा चोदकपिण्डतः।
321. पञ्चमादित्रिवर्षे च श्राद्धान्तं पैतृमेधिकम्॥2॥
अष्टमादिचतुर्वर्षे सपिण्डीकरणादृते।
322. सर्वं कार्यं ततः पश्चात् सपिण्डीकरणं चरेत्॥3॥
कृते पुनश्च संस्कारे कृते वाऽप्यसगोत्रिणाम्।
323. दशाहोदकपिण्डानां समापनमहस्त्र्यहे॥4॥
कुर्याच्छ्राद्धं चतुर्थेऽह्नि यदि वैकादशेऽहनि।

44.कालनिर्णयः

324. एकादशञ्च द्वादशञ्च दिनं मृततिथिस्तथा।
त्रिपक्षेऽभ्युदयारम्भः शोणातकृतपोद्विजाः॥1॥
325. अमावास्या कृष्णपक्षस्तिस्रोऽष्टम्यश्च सङ्क्रमः।
तथोपराग इत्येष श्राद्धानां कालनिर्णयः॥2॥

45.पञ्चमीश्राद्धप्रयोगः

326. अपुत्रः पञ्चमीश्राद्धं कुर्यात्पुत्राप्तिहेतवे।
आरभ्य मार्गशीर्षस्य कृष्णपक्षस्य पञ्चमीम्॥1॥
327. श्राद्धं पार्वणवत्कृत्वा तथा पिण्डांश्च निक्षिपेत्।
पिण्डं च मध्यमं दद्यादाधत्तेति स्वयोषिति॥2॥
328. पितामहादीनुद्दिश्य कार्यं पितृमताऽपि तत्।

46.अष्टकाश्राद्धप्रयोगः

मार्गशीर्षस्य मासस्य पौर्णमास्याः परेषु याः।
329. अष्टम्यां कृष्णपक्षे तु तासु तिस्रोऽष्टकां क्रमात्॥1॥

त्रिषु क्रमेण मासेषु शाकमांसमपूपकम्।
330. कल्पयेच्चरुणा सार्धं श्राद्धोपकरणानि च॥2॥
औपासनाग्नौ विधिवत्पुरस्तन्त्रे कृते सति।
331. चतस्र आहुतीर्हुत्वा शाकादन्नात्पृथक्पृथक्॥3॥
उत्थाय चोपतिष्ठेत त्रिः समन्त्रं कृताञ्जलिः।
332. आसित्वा स्विष्टकृद्धोमः तन्त्रमुत्तरमाचरेत्॥4॥
अन्वष्टक्या भवेच्छ्राद्धमद्य श्वोभूत एव वा।
333. द्वौ षट् देवपित्रर्थं तत्र तु ब्राह्मणा मताः॥5॥
प्राग्दक्षिणापवर्गं च निधातव्याः षडग्नयः।
334. एषामुल्मुकमन्त्रस्य वचनं स्मर्यते पृथक्॥6॥
पावकानुत्तरेणैव प्रादेशायामिनोऽवटान्।
335. स्थलादेकाङ्गुलीनीचान्खात्वाऽत्यङ्गुलिविस्तृतान्॥7॥
गोमयेनोपलिप्यैतानेकैकं यजुषोल्लिखेत्।
336. प्रादेशमात्रानास्तीर्य दर्भानेतेषु षट्सु च॥8॥
पुरस्तात्पूर्ववत्कल्पः पितुश्च प्रथमोऽवटः।
337. द्वितीयस्त्ववटो मातुः पितृपित्रोस्तु मध्यमौ॥9॥
अवटः पञ्चमषष्ठः प्रपितामहयोर्मतौ।
338. मात्रादीनां च ये च त्वाऽत्रेति पुंवद्वदेद्यजुः॥10॥
पिण्डान्प्रदक्षिणीकृत्य प्राश्नीयाच्छेषमोदनम्।
339. एवं समाचरेत्काले मांसापूपाष्टकेऽपरे॥11॥
मांसप्रतिनिधिं चाहुरपूपमिह कर्मणि।
340. शिष्टास्तु चरमाष्टम्यामेकाह्नाऽह्नस्त्रयेण वा॥12॥
कुर्वन्ति यौगपद्येन श्राद्धानामष्टकामयम्।
341. लोपात्तु करणं साध्वित्यस्माकमपि तद्व्रतम्॥13॥
श्राद्धकार्येष्वनर्होऽपि पितृमांस्तु गृहाश्रमी।
342. श्राद्धं विनाऽष्टकाहोमं कृत्वा विप्रांश्च भोजयेत्॥14॥

पिण्डं प्रयच्छेद्भार्यायै तृतीयमिह कर्मणि।
343. वैश्वदेवं न तत्र स्याच्छ्राद्धं यस्मिन्दिने चरेत्।।15।।

47. गृहशान्तिप्रयोगः

अपामार्गादिशाखाश्च गन्धं पुष्पं सिताक्षतम्।
344. पञ्चगव्यं दर्भमुष्टिं गौरसर्षपमेव च।।1।।
संवत्सरे सकृदपि पुण्यर्क्षे कल्पयेद्गृही।
345. प्रातरेव गृहे सर्वं वास्तु परिसमूह्य च।।2।।
विशोध्य गोमयाम्भोभिरालिप्य तदनन्तरम्।
346. अपामार्गपलाशार्कशिरीषोदुम्बरानपि।।3।।
शशुपूलां (शतावरीं) च दूर्वां च शक्रवल्या प्रबध्य च।
347. एतैः सम्मृज्य सम्बद्धैः कुशाग्रसहितैरपि।।4।।
सम्प्रोक्ष्य पञ्चगव्येन दर्भमुष्ट्यग्रपातिना।
348. सगौरसर्षपैर्गन्धैः सितपुष्पैः सिताक्षतैः।।5।।
अलंकृत्य गृहं सर्वं तन्मध्ये च परिश्रिते।
349. अग्निं प्रणीय विधिवत्पुरस्तन्त्रे कृते सति।।6।।
कृत्वा च वास्तोष्पतये स्वाहेत्येकामथाहुतिम्।
350. सहस्रमाहुतीर्हुत्वा सावित्र्याऽऽज्येन संयुताः।।7।।
समाप्य चोत्तरं तन्त्रं अर्चितान्भोजयेद्द्विजान्।
351. पुण्याहं वाचयेदेषां गौर्वासो हेम दक्षिणा।।8।।
नित्यस्तु मध्यमे होमो गुरोः कोणेषु नारदः।

48.अनश्नत्संहिताध्ययनप्रयोगः

352. आम्नायोन्मृगरूहोयस्संहिता साऽथ कीर्त्यते।
न मध्येऽशनमेतस्या अनश्नत्संहितेति च।।1।।
353. अध्येष्यमाणो विप्रस्तु संहितां पापमोचनीम्।
सौपासनाग्निः प्राग्गच्छेदुदग्वा ग्रामतो बहिः।।2।।

354. शुचौ देशे जलान्ते वा गोमयेनोपलिप्य च।
अग्न्याधानाद्याज्यभागचरमं कर्म चर्यते।।3।।

355. विधायाग्नय इत्यादि मन्त्रैरष्टादशाऽऽहुतीः।
आसीनः प्राङ्मुखो भूत्वा प्रागग्रेषु कुशेषु च।।

356. बिभ्रद्दक्षिणहस्तेन प्रस्तरं मुष्टिसम्मितम्।
व्याहृतीरपि गायत्रीं व्रती प्रणवपूर्वकम्।।5।।

357. चतुरुक्त्वा सामपूर्वां सावित्रीं स्तोभसंहिताम्।
सोमँराजेति सामापि ब्रह्मजज्ञेति सामनी।।6।।

358. चत्वारि मनसा गीत्वा सकृत्सामानि संयतः।
मध्ये त्वोङ्कारमवदन् आरभेत च संहिताम्।।7।।

359. मध्यमस्वरयुक्तः सन् गायेत्पाठक्रमेण ताम्।
वचोविरामौ स्यातां चेदन्तराऽध्ययनस्य तु।।8।।

360. प्राणायामत्रयं कृत्वा विधायाऽऽचमनं ततः।
आरभ्य खण्डितान्त्साम्नः कुर्यादध्ययनं शुचिः।।9।।

361. अन्तरा चेत् प्रतिभागं तिष्ठेत्कालेन यावता।
तावन्तं कालमभ्यस्येदभीत्यक्रानिति द्वयम्।।10।।

362. यदासितुमशक्तोऽसौ तिष्ठेच्च तदशक्तितः।
कुर्याच्चाक्रमणन्तस्मिन्नशक्तश्चेच्छयीत वा।।11।।

363. वार्तावसानरहितं सदाऽध्ययनमाचरेत्।
अधीत्य संहितामेवमुत्तरं तन्त्रमाचरेत्।।12।।

364. कस्मैचिद्दक्षिणां दत्वा यथाशक्ति द्विजन्मने।
गृहं गत्वा प्रणीयाग्निं यवापुरमतन्द्रितः।।13।।

365. भुञ्जीत रसवद्भोज्यं ब्राह्मणैः सह बान्धवैः।

***

49.नवग्रहमखप्रयोगः

शुभं ददति सर्वेषामनुकूला यतो ग्रहाः।
366. शुभेप्सुनाऽपि तत्पूजा कार्या सर्वार्थसिद्धिदा।।1।।
प्रतिकूला इमे शक्रप्रमुखान्दिविषद्गणान्।
367. अनयन्त्संशयं यस्मात्तस्मात्पूज्याः सदा नरैः।।2।।
प्रत्यरे निधने चैव त्रिजन्मनि विपद्यथ।
368. सङ्क्रान्त्यामुपरागे च ग्रहाणां राशिसंक्रमे।।3।।
ग्रहावेशे ज्वरादौ च कर्तव्यं ग्रहपूजनम्।
369. फलप्रदा विशेषेण जन्मर्क्षे पूजिता ग्रहाः।।4।।
अत एव प्रवक्ष्यामि तद्बलिप्रक्रियामहम्।
370. व्ययाष्टमादिस्थानस्था ग्रहा अपि फलप्रदाः।।5।।
अर्कश्चन्द्रश्च भौमश्च बुधश्चाथ बृहस्पतिः।
371. शुक्रः शनैश्चरो राहुः केतवश्च नवग्रहाः।।6।।
एषां कलिङ्गदेशश्च यामुनो विन्ध्य एव च।
372. मध्यः सिन्धुः सुराष्ट्रश्च देशश्च मिथिलाह्वयाः।।7।।
पातालं शैल इति च ज्ञातव्या जन्मभूमयः।
373. वर्णो रक्तः सितो रक्तः पीतौ द्वौ श्वेत इत्यपि।।8।।
कृष्णास्त्रयश्च कथ्यन्ते क्रमादेते नवग्रहाः।
374. मध्यं वह्नियमेशेन्दुशक्राम्बुपतिरक्षसाम्।।9।।
वायोश्च दिश एतेषां स्थानानि च विनिर्दिशेत्।
375. वृत्तश्च चतुरश्रश्च त्रिकोणश्च शराकृतिम्।।10।।
यद्दीर्घचतुरश्रं च पञ्चकोणं शरासनम्।
376. शूर्पध्वजाकृतिं तेषां बिम्बानि स्वस्ववर्णतः।।11।।
हरो गौरी गुहो विष्णुः ब्रह्मा शक्रो यमस्तथा।
377. कालदूतश्चित्रगुप्तः इत्येषां देवताः स्मृताः।।12।।
अग्न्यम्बू विष्णुरिन्द्रः इन्द्राणी च प्रजापतिः।

378. सर्पो ब्रह्मेति चैतेषां निर्दिशेदधिदेवताः॥13॥
प्राच्यां रविः पश्चिमेन्दुर्भौमो दक्षिणतोमुखः।
379. सौम्यजीवावुत्तरतः शुक्रः प्राक् पश्चिमे शनिः॥14॥
राहुः केतुर्दक्षिणत इत्येषां चाऽऽननं स्मृतम्।
380. अर्कः पलाशः खदिरस्त्वपामार्गोऽथ पिप्पलः॥15॥
औदुम्बरश्शमी दूर्वाः कुशाश्च समिधः क्रमात्।
381. आसत्येनेत्यथाप्यायस्वाग्निर्मूर्द्धा दिवः ककुत्॥16॥
ब्रह्मजज्ञानमिति च स्याद्बृहस्पत इत्यपि।
382. अस्य प्रत्ना शन्नो देवी कयानश्चित्र इत्यपि॥17॥
केतुं कृण्वन्निति प्रोक्तः ग्रहमन्त्रग्रहः क्रमात्।
383. ओदनं गुडमिश्रं च घृतमिश्रं च पायसम्॥18॥
हविष्यं षाष्टिकं क्षीरमिश्रं पीतहविस्तथा।
384. दध्योदनं माषहविः तिलचूर्णयुतं तथा॥19॥
मांसमिश्रं हविश्चात्र पर्णोदनमतः परम्।
385. एवं हवींषि पात्रेषु पक्वानि स्युः पृथक्पृथक्॥20॥
धेनुश्शङ्खः तथाऽनड्वान् हेमवासस्तुरङ्गमः।
386. कृष्णगौरायसं नाग एतेषां दक्षिणा विदुः।
शिवं कर्मास्त्विति प्रोक्ते प्रीयन्तामिति च ग्रहाः॥21॥
387. इत्यादित्यपुरोगाश्च भगवन्त इतीरिताः।
वाक्यं प्रतिब्रुवाणैश्च विप्रैः स्वस्तिस्वने कृते॥22॥
388. आवृताऽग्निं प्रतिष्ठाप्य तस्य प्राङ्मण्डलानि च।
कृत्वाऽमुत्र पुरस्तन्त्रं उपवेश्य द्विजानथ॥23॥
389. आदाय कूर्चगन्धं च पुष्पाणि च तथाक्षतम्।
मण्डलेषु कृतेष्वेषु स्वस्वमन्त्रान्वदंस्तथा॥24॥
390. तिस्रश्च व्याहृतीर्हुत्वा प्रणवं ग्रहनाम च।
आवाहयामीति वदन् क्रमादावाहयेद्ग्रहान्॥25॥

391. पद्मे निषण्णो रक्षश्च पद्मोपेतद्विबाहुभाक्।
अस्थिरो रथमादित्यः सप्ताश्वं सप्तरज्जुकम्।।26।।

392. श्वेतः श्वेताम्बरधरः श्वेतभूषो गदाधरः।
वरदो द्विभुजश्चन्द्रः दशाश्वं रथमास्थितः।।27।।

393. करैश्चतुर्भिर्बिभ्राणः शक्तिं शूलं गदाम्बरम्।
रक्तमाल्याम्बरधरः मेषवाहो धरात्मजः।।28।।

394. हेमपीतः करे बिभ्रत् खड्गं चर्म गदां वरः।
पीतमाल्याम्बरधरः सौम्यः केसरिवाहनः।।29।।

395. देवदैत्यगुरु पीतश्वेतौ च निजबाहुभिः।
दण्डं वरं च दधतावक्षसूत्रं कमण्डलुम्।।30।।

396. मणिनीलकरैश्चापं शरं शूलवरं दधत्।
नीलाम्बरो नीलभूषो सावित्री गृध्रवाहनः।।31।।

397. करालवदनं खड्गचर्मशूलं परं दधत्।
नीलो नीलाम्बरधरो राहुर्नीलविभूषणः।।32।।

398. विकृताननवेषाश्च धूमधूमा द्विबाहवः।
वरदा नीलवसनाः केतवो गृध्रवाहनाः।।33।।

399. सर्वे किरीटिनो ध्येयाः ग्रहा लोकहितावहाः।
ध्यात्वैवं स्वस्ववर्णैश्च पुष्पैरभ्यर्च्य च ग्रहान्।।34।।

400. देवस्य त्वेति मन्त्रान्ते निर्वपामीति चोच्चरन्।
चतुरश्चतुरो मुष्टीन् निर्वपेत्काककालतः।।35।।

401. ज्वलितेऽग्नौ च समिधा हविषा च घृतेन च।
व्रती दिव्यं च जुहुयात् पृथगष्टोत्तरं शतम्।।36।।

402. अष्टाविंशतिसङ्ख्या वा होमः स्विष्टकृतो भवेत्।
अवदानक्रमेणैव होतव्यं नैव पाणिना।।37।।

403. समाप्य चोत्तरं तन्त्रं ग्रहाणां पुरतो बलीन्।
क्षिप्त्वा च हुतशेषेण गन्धपुष्पैः समर्च्य च।।38।।

404. भोजयित्वा च रसवद् द्विजान्ग्रहमनीषया।
एतेभ्यो दक्षिणां दत्वा मन्त्रैरुद्वासयेद्ग्रहान्।।39।।

405. प्राञ्जलिः प्रणतो भूत्वा कृताशीश्च द्विजन्मनि।
अतः परं यथास्थानं प्रीणयेज्जातवेदसम्।।40।।

406. केचित्कुर्वन्ति कर्मेदं प्रणीय नवधाऽनलम्।
एकाग्नावेव होतव्यमस्माभिः ग्रहदोषकैः।।41।।

407. इत्थं ग्रहाणां कथिता पूजा परमशोभना।
कुर्वन्नेव तेजसाऽसौ विवस्वान्
भूम्ना विष्णुः प्रज्ञया वाक्पतिश्च।
मार्कण्डेयश्चायुषा किं बहूक्त्या
सर्वैरंशैः शङ्करो जायते च।।

इति वैनतेयकारिका।।

***

4. तरुणाग्निहोत्रिकारिका

श्रीमते जैमिन्याचार्याय नमः।।

श्रीमते तलवकारगुरवे नमः।।

श्रीमान्मरकतश्यामो वेणुना भूषिताधरः।
चकास्तु हृदि गोविन्दो मदीये वल्लवीप्रियः।।
नगार्जुनग्राममहीशिरोमणिः
यस्सामदुग्धाम्बुधिमन्थमन्दरः।
प्राहुश्च यं वेङ्कटनाथदीक्षितं तं
यायजूकं गुरुमानतोऽस्म्यहम्।।
कावेरीतोयपानादसकृदपि सवे सोमपानाच्च सम्यक्।
श्रीरङ्गक्ष्मापतेर्यत्तिलकितवदनं तस्य सन्दर्शनाच्च।
अश्रान्तं शुद्धचेता गुरुपदकृतधीः ज्ञातशास्त्रार्थतत्वः।
श्रीमान् बालाग्निहोत्री विशदयति मुनेः जैमिनेर्गृह्यकर्म।।

1. पार्वणतन्त्रप्रयोगः।।

1. विनियोगो हि मन्त्राणां स्पष्टं गृह्ये प्रकाशते।
अथ क्रियाक्रमं वक्ष्ये मन्त्रादींश्च क्वचित्क्वचित्।।1।।
2. प्रथमं पाकयज्ञानां पार्वणः कथ्यतेऽधुना।
निषेकादि श्मशानान्तं चत्वारिंशत्क्रिया द्विजाः।।2।।
3. पाकयज्ञा हविर्यज्ञा सोमयज्ञाश्च ताः स्मृताः।
पार्वणाद्याः पाकयज्ञाः आधानाद्या हविस्मृताः।।3।।
4. अग्निष्टोमादयस्सप्त सोमयज्ञा इतीरिताः।
पर्वणि क्रियमाणत्वात् स्थालीपाकोऽत्र पार्वणः।।4।।
5. तद्वदग्नौ क्रियावत्वात् श्राद्धञ्च पार्वणं विदुः।
इध्मा बर्हिः प्रस्तराज्यं प्रणीताश्च चरुं स्रुवम्।।5।।
6. सैकतं पूर्णपात्रं च गन्धं कुसुममिन्धनम्।

गृहमेधी कल्पयित्वा करिष्यन् पार्वणक्रियाम्॥6॥

7. आचान्तः प्राणानायम्य सङ्कल्प्याथ स्पृशेदपः।
उद्धृत्य त्रिः क्षमां प्रोक्ष्य सर्वतोऽरत्निमात्रकम्॥7॥

8. चतुरस्रं सैकतेन स्थण्डिलं पञ्चरेखकम्।
कृत्वा प्रोक्ष्य प्रतिष्ठाप्य व्याहृत्या तत्र पावकम्॥8॥

9. देवस्य त्वेति संभारान् प्रोक्ष्याऽऽरभ्य वसुन्धराम्।
अग्निं परिसमुह्याथ गृहीत्वा प्रस्तरं कृतम्॥9॥

10. प्रादेशारत्निमात्रैश्च परिस्तीर्यानलं कुशैः।
पवित्रे प्रस्तराच्छित्वा सम्मृज्योर्ध्वं त्रिरम्बुभिः॥10॥

11. पात्रे पवित्रे धृत्वाऽऽज्यं मुक्त्वाङ्गारान् निरुह्य च।
तेष्वधिश्रित्य तत्पात्रं अवद्योत्य तृणाग्निना॥11॥

12. तस्मिन् क्षिप्त्वाऽऽर्द्रदर्भाग्रे पर्यग्निकरणं ततः।
उद्वास्य पात्रमङ्गारान् प्रत्यूह्येत तृणानि च॥12॥

13. आज्यं हविः प्रणीताश्च स्रुवश्च जलपूरितम्।
उदगग्रपवित्राभ्यामुत्पूय च यथाक्रमम्॥13॥

14. उदक्प्रणीताः संस्थाप्य ब्रह्माणं पूर्णभाजने।
परिस्तरणयोर्मध्ये निधाय प्रस्तरं कृतम्॥14॥

15. तस्मिन् पवित्रे चोद्गृह्य विरूपाक्षजपे कृते।
अपः स्पृष्ट्वा स्रुवस्याम्बु प्रणीतासु समुत्सृजेत्॥15॥

16. स्रुवं निष्टप्य सम्मृज्य दर्भैस्ताननले क्षिपेत्।
अन्वाच्य दक्षिणं जानु विशोध्याज्यं च निष्कृमि॥16॥

17. परिधीन्परिधायाग्निं समर्च्य परिषेचयेत्।
क्षिप्त्वैकां समिधं वह्नौ प्रणीतासु समित्त्रयम्॥17॥

18. अज्ञातदोषशुद्ध्यर्थं होमे व्याहृतिभिः कृते॥18॥
इध्ममाधास्य इत्युक्त्वाऽऽधत्स्वेति द्विजेरितः।

19. कराभ्यामुपगृह्येध्मं प्रक्षिपेज्जातवेदसि॥19॥

आघारावाज्यभागौ च जुहुयाद्व्याहृतीः क्रमात्।

20. एवं कुर्यात् पुरस्तन्त्रं इध्मप्रस्तरकर्मणि।।20।।

स्थालीपाकोऽतिपन्नश्चेत् यथागोत्रं हृताज्यतः।

21. अग्निं प्रथः कृतं यष्ट्वा ततस्तत्पार्वणाहुतीः।।21।।

उपस्तीर्य स्रुवे सर्वे हविर्द्धिरवदाय च।

22. अभिघार्य सकृत् तन्त्रं चरुं प्रत्यभिघार्य च।।22।।

प्रधानहोमः सर्वत्र सकृत् स्विष्टकृते हविः।

23. अवदायाभिघार्य द्विः न च प्रत्यञ्जनं चरोः।।23।।

अवदानाभिघारौ च प्रधाने स्विष्टकृत्यपि।

24. द्विर्द्विः कुर्यात् भार्गवाणां न भेदः कर्मणोर्द्वयोः।।24।।

प्रदेशिन्योः प्रस्तरणं अभिघारणमिष्यते।

25. अवदानं चरोः कुर्यात् अङ्गुष्ठाद्यङ्गुलीत्रयात्।।25।।

कृत्वा स्विष्टकृतं रौद्रं उपस्पर्शनमिष्यते।

26. रौद्रञ्च राक्षसं पित्र्यं आसुरञ्चाभिचारकम्।।26।।

उक्त्वा मन्त्रं स्पृशेदापः आरभ्यात्मानमेव च।

27. अथ प्रस्तरमादाय स्रुवाज्यहविरञ्जनम्।।27।।

तदग्रमध्यमूलैश्च कृत्वा कृष्य तृणं ततः।

28. प्रहृत्य प्रस्तरं वह्नौ प्रास्य तृणमपः स्पृशेत्।।28।।

प्रणीतोपरि विन्यस्तं घृतेनाक्तसमित्त्रयम्।

29. हुत्वाऽऽरभ्य क्षमां प्राणान् शीर्षन्यादीनुपस्पृशेत्।।29।।

अथेध्माधानमारभ्य मन्त्रलोपादिशान्तये।

30. प्रायश्चित्ताहुतीः कृत्वा केशवाद्यैश्च नामभिः।।30।।

दर्भानादाय चास्तीर्णान् प्रणीतां पूरयेज्जलैः।

31. दिक्षूत्सृज्य जलं भूम्यां नीत्वा सम्मृज्य चक्षुषी।।31।।

स्रुवं हित्वा क्षिपेद्वह्नौ दर्भांश्च परिधीनपि।

32. गायेच्छान्त्यै वामदेव्यं सहविष्कं प्रदक्षिणम्।।32।।

पर्युक्ष्याग्निमुपस्थाय प्रणमेज्जातवेदसम्।
33. दद्याद्गुरोः पूर्णपात्रं यथाश्रद्धं च दक्षिणाम्।।33।।
एवं पूर्वोत्तरं तन्त्रं विना पर्वाहुतिद्वयम्।
34. दारात्मकर्म नित्याग्नौ तदंशे पैतृकी क्रिया।।34।।
लौकिके जातकर्मादि सर्वाधानक्रिया विदुः।

इति प्रथमः खण्डः।।1।।

2.पुण्याहप्रयोगः

35. स्थालीपाककुमारेष्टिपर्णयागवृतैर्विना।
समस्तशुभकर्मादौ पुण्याहं वाचयेद्बुधः।।1।।
36. ग्रहशान्तौ शेषहोमे नामकर्मणि चान्ततः।
सपल्लवोदकं कुम्भं चन्दनं कुसुमाक्षतान्।।2।।
37. कल्पयेच्चतुरो विप्रान् व्रीहिसर्षपदक्षिणाः।
तेभ्यो जलं चन्दनं च पुष्पान्वाहार्यमक्षतान्।।3।।
38. दत्वा च दक्षिणां व्रीहिपुष्पसर्षपदक्षिणाः।
सहोदकुम्भमादाय सदर्भमुत्तराधरे।।4।।
39. तिष्ठन् वदेत् सप्रणवं मन इत्यादिकं वचः।
प्रत्युक्तश्च द्विजैः स्वस्ति स्थित्वाऽऽत्मानं सदारकम्।।5।।
40. मार्जयेत्कलशाम्भोभिः वामदेव्येन शान्तयेत्।।

इति द्वितीयः खण्डः।।2।।

3.अग्निसन्धानौपासनप्रयोगः

सैकतं स्रुवदर्भाज्यं समित्पुष्पेन्धनानि च।
41. कल्पयेदग्निसन्धाने व्रीहीनौपासनाय च।।1।।
आनीय श्रोत्रियागारात् प्रणीयाग्निं यथाविधि।
42. सम्भारान् प्रोक्ष्य हस्तेन समालभ्य वसुन्धराम्।।2।।
अग्निं परिसमूह्याथ परिस्तीर्यायतैः कुशैः।

छित्वोन्मृज्य जलैस्तूष्णीं पवित्रे न्यस्य भाजने॥3॥

43. आज्यमासिच्य चाङ्गारान् तेष्वधिश्रित्य भाजनम्।
अवद्योत्य तृणे क्षिप्त्वा पर्यग्निकरणे कृते॥4॥

44. उदगुद्वास्य तत्पात्रं हृत्वाङ्गारात् स्तृणानि च।
उत्पूयाज्यस्रुवौ तूष्णीं पवित्रेऽग्नौ निधाय च॥5॥

45. स्रुवन्निष्टप्य सम्मृज्य दर्भैस्तानानले क्षिपेत्।
पुष्पैरग्निं समभ्यर्च्य कृत्वा च परिषेचनम्॥6॥

46. स्वाहेति समिधं क्षिप्त्वा समिद्धे जातवेदसि।
प्रायश्चित्ताहुतीः कृत्वा केशवाद्यैश्च नामभिः॥7॥

47. हुत्वा किञ्चिदुपस्थाय पुनरौपासनाय च।
पूर्वेद्युः सायमित्येवं सङ्कल्प्याप उपस्पृशेत्॥8॥

48. यदा सन्धीयते वह्निः प्रायश्चित्तपुरस्सरम्।
तदा सायं विजानीयात् आहुतीनां चतुष्टयम्॥9॥

49. आपूर्विकविधानेन विधाय प्रोक्षणादिकम्।
अग्निं प्रजापतिं सायं प्रातस्सूर्यं प्रजापतिम्॥10॥

50. यष्ट्वा यवैर्व्रीहिभिर्वा ततोऽग्निमुपतिष्ठते।
गौषूक्तमाश्वसूक्तं च सायं प्रातः क्रमाद्वदेत्॥11॥

51. यावज्जीवमिदं कुर्यात् यावदाधानमेव वा।

इति तृतीयः खण्डः॥3॥

4.पुंसवनप्रयोगः

52. पत्न्याः पुंसवसीमन्तौ कुर्यादौपासनानले।
माषद्वयं यवं चैकं सर्पिषि श्रपितं चरुम्॥1॥

53. न्यग्रोधशुङ्गं सूत्रे द्वे शुक्लरक्ते घनं दधि।
कल्पयित्वा पुरस्तन्त्रं कृत्वाऽन्वारभ्य जायया॥2॥

54. अर्धर्चशो वदन्त्सूक्तं चरुणाऽऽहुतिसप्तकम्।
सदध्याज्येन वा कुर्यात् चरुवत्तस्य संस्तुतिः॥3॥

55. ततो वधूकरे माषौ यवं मध्ये निधाय तत्।
पुल्लिङ्गवत् स्थितं दध्ना प्रच्छाद्य प्राशयेदिमाम्।।4।।

56. सशुङ्गसूत्रं तत्कण्ठे धारयेत्पुत्रजन्मनि।
स्विष्टकृन्मखतन्त्रान्ते वासः स्याद्गुरुदक्षिणा।।5।।

इति चतुर्थः खण्डः।।4।।

5.नान्दीमुखप्रयोगः

57. कुर्यात्पूर्वदिने नान्दीमुखं सीमन्तकर्मणि।
चौलोपनयनगोदानस्नानपाणिगृहेषु च।।1।।

58. दध्यक्षतांश्च गन्धांश्च शुक्लपुष्पाणि सैकतम्।
श्रौत्रीयानसगोत्रांश्च षट् चतुर्वा द्विजोत्तमान्।।2।।

59. कल्पयेद्देवपित्रार्थं अथ शुक्लाम्बरः शुचिः।
स्नातेभ्यस्तेभ्यो विप्रेभ्यः दत्वाम्बु चन्दनं स्रजम्।।3।।

60. अग्न्यायतने भाविन्यास्तीर्य स्थण्डिले कुशान्।
बलीन् करिष्य इत्युक्त्वा हरेदष्टौ बलीन्पृथक्।।4।।

61. दध्यक्षतैश्च गन्धैश्च पुष्पैरपि यथाक्रमम्।
सिञ्चेज्जलेन चाद्यन्ते चतसृषु च पङ्क्तिषु।।5।।

62. भुक्तवत्सु च विप्रेषु दत्वाऽन्वाहार्यदक्षिणाः।
उदकुम्भं समादाय ब्रीहिपुष्पादिभिस्सह।।6।।

63. मन इत्यादिकं वाक्यमुक्त्वा प्रणवपूर्वकम्।
नान्दीमुखाश्च पितरः प्रीयन्तामिति तान्वदेत्।।7।।

64. प्रीयन्तामिति तैरुक्तो वामदेव्याम्बुमार्जनम्।।

इति पञ्चमः खण्डः।।5।।

6.रक्षाबन्धनप्रयोगः

नान्दीमुखदिने रात्रौ कुर्यात्प्रतिसरक्रियाम्।
65. ससूत्रे कुम्भे वरुणं आवाह्य ब्राह्मणैस्सह।।1।।

66. गीत्वा राक्षोघ्नसामानि सूत्रं त्विदमिति तृचम्।
पुरुषस्य करे स्त्री चेत् वामे बध्नीत शौक्तकः।।2।।
67. त्र्यम्बकमिति ग्रन्थौ धृत्वा भस्माम्बुमार्जनम्।
अग्ने रक्षेति राक्षोघ्नं अग्ने युङ्क्ष्वेति साम च।।3।।
68. अग्ने जरितरिति द्वे च नित्वामग्नेति सामनी।
हावो हावोहसानाद प्रत्याग्न इति साम च।।4।।
69. इळा इष्वेति हाबुश्रु यद्वा ऊ विश्पतिश्शितः।
श्रुधी हवेति तन्तेमत् एतोन्विन्द्रं स्तवाम च।।5।।
70. अग्निं होतारमित्यग्ने राक्षोघ्नद्वयमुत्तमम्।
अबोध्यग्निर्महित्रीणां द्वयं त्वावात इत्यपि।।6।।
71. इन्द्रन्नरोऽस्य निधने आयुष्ये त्यमूषुद्वयम्।
त्रातारमिन्द्रं सोमःपु सासून्वे विश्वतोद्वयम्।।7।।
72. कयानश्चीद्वयी गीत्या वामदेव्यम्बुमार्जनम्।

इति षष्ठः खण्डः।।6।।

7.सीमन्तप्रयोगः

एरकामहतं वस्त्रं त्रिशुक्लशलली स्त्रजम्।
73. सहेम सलिलं कांस्यं तिलमुद्गयुतं हविः।।1।।
कल्पयित्वा तु सीमन्ते पुरस्तन्त्रे कृते सति।
74. अन्वारभ्य वधूं कुर्यात् हविषाऽऽहुतिपञ्चकम्।।2।।
चतसृभिर्व्याहृतिभिः प्राजापत्यन्नृचाऽप्यथ।
75. वस्त्रोत्तरैरकां मध्ये संस्थाप्य प्राङ्मुखीं वधूम्।।3।।
स्वयं प्रत्यङ्मुखस्तिष्ठन् प्राणायत्वादिभिस्तृभिः।
76. शलल्यग्रेण शुक्लेन तस्याः सीमन्तमुन्नयेत्।।4।।
अथ नासाग्रमारभ्य मूर्द्धानं पर्यवस्यति।
77. कृष्णाग्रा यदि सा शुक्लमूलेनैव च तत्क्रिया।।5।।
स्त्रग्भिर्दक्षिणकेशान्तमलंकृत्य तथोत्तरम्।

78. अवेक्षयन् सहेमाम्बु पृच्छेत्तां साऽपि तं वदेत्।।6।।
समाप्य स्विष्टकृत्तन्त्रं वासो हेम गुरोर्दिशेत्।
इति सप्तमः खण्डः।।7।।

8.जातकर्मप्रयोगः

79. जातकर्म पिता कुर्यात् स्नात्वा पुत्रस्य जन्मनि।
यावन्न च्छिद्यते नालं तावन्नाप्नोति सूतकम्।।1।।
80. एकं व्रीहिं यवं चैकं ससुवर्णं शिलातले।
मधुन्यम्भसि वा धृष्ट्वा कृत्वा प्राङ्मुखमर्भकम्।।2।।
81. तत्कल्पमर्भकस्यास्ये दद्यादिदमिति स्थितः।
पाणिना चाभिमन्त्र्यैनं परिदायाहरादये।।3।।
82. वदेत् कोऽसीति सम्मासं प्रविशाश्वयुजेति च।
शिशोरसाविति स्थाने नक्षत्रं नाम निर्दिशेत्।।4।।
83. वेदोऽसीति श्रवस्युक्त्वा मूर्द्धानमुपजिघ्रति।
आपूर्विकविधानेन प्रतिष्ठाप्य च पावकम्।।5।।
84. सूतिकासदनाभ्याशे फलीकरणमिश्रितैः।
सर्षपैर्जुहुयात्सायं प्रातरप्याहुतिद्वयम्।।6।।
85. दशरात्रमिति स्त्री चेत् न कुर्यादाहुतिद्वयम्।
इति अष्टमः खण्डः।।8।।

9.नामकरण(कुमारयज्ञ)प्रयोगः

द्वादशे नामकरणं पुण्यर्क्षे वा शुभे दिने।
86. पुरस्तन्त्रे कृते कृत्वा पुत्रमङ्केषु वाससा।।1।।
घोषाद्यन्ते तु सान्तस्थं द्व्यक्षरं चतुरक्षरम्।
87. भद्रो धनञ्जयोऽसीति कर्णे नामोचितं वदेत्।।2।।
म्यन्ताश्वन्तं स्त्रियः कुर्यात् सुकेशी कमलेति च।
88. अनादिष्टहविष्केषु होमेष्वाज्यं हविः भवेत्।।3।।

यजेत जन्मनक्षत्रं तद्दैवतमथो तिथिम्।

89. अष्टाभ्यो देवताभ्यश्च जुहुयात् सप्त चाऽऽहुतीः।।4।।
समाप्य चोत्तरं तन्त्रं कारयेत्स्वस्तिवाचनम्।

90. अस्मै चैत्राय कृष्णाय स्वस्तीत्येवं तु वाचयेत्।।5।।
अब्दपूर्तेस्तु पर्यन्तं प्रतिमासं कुमारभे।

91. आज्येन पूर्वतन्त्रान्ते नक्षत्रं तस्य दैवतम्।।6।।
तिथिं च देवताः चाष्टौ यजेज्जन्मनि न स्त्रियः।

इति नवमः खण्डः।।9।।

10.उपनिष्क्रामणान्नप्राशनप्रयोगः

92. उपनिष्क्रामणं कुर्यात् शिशोर्मासि चतुर्थके।
स्वस्ति वाच्य द्विजैर्धान्ये स्थितं प्रोक्षेत्कयेति च।।1।।

93. षष्ठेऽन्नप्राशनं मासि भोजयित्वा द्विजोत्तमान्।
स्वस्ति कृत्वा हविश्शेषं प्राशयेत् प्राङ्मुखं शिशुम्।।2।।

इति दशमः खण्डः।।10।।

11.अंकुरार्पणप्रयोगः

94. चौलोपनयनगोदानस्नानपाणिग्रहेषु च।
अयुग्मदिवसे पूर्वमंकुरं तच्छुभेऽह्नि वा।।1।।

95. दिवाकार्ये दिवा कुर्यात् निशि चेन्निशि तत्क्रिया।
व्रतेषु गर्भसंस्कारे जाते नाम्नि च नांकुरम्।।2।।

96. शालीश्यामतिला माषमुद्गनिष्पावसर्षपाः।
आढकीकंकुसुनिका दशद्रव्याणि चांकुरे।।3।।

97. पालिकाः पञ्चमूलेषु बध्वाऽश्वत्थादिपल्लवाः।
क्षीरमिश्रिततोयं च गन्धपुष्पाणि कल्पयेत्।।4।।

98. पुण्याहं वाचयेदस्मिन् ओषधीशाधिदैवतम्।
वामदेव्येन चाब्लिङ्गैर्मन्त्रैः प्रोक्ष्य च पालिकाः।।5।।

99. सपुष्पाक्षतमादाय कूर्चे सायुधवाहनम्।
आवाह्य मध्ये ब्रह्माणं ब्रह्मजज्ञानमित्यृचा।।6।।

100. इन्द्रं पूर्वे यत इति नाकेस्विति ततो यमम्।
उदुत्तममिति प्रत्यक् वरुणं सोममुत्तरे।।7।।

101. सन्ते पयांसीति ततः स्नानाद्यैरभिपूज्य तान्।
सक्षीरौषधिमादाय तिष्ठन्ध्यायेच्च दिक्पतीन्।।8।।

102. दिशां पतीन् नमस्यामि सर्वकामफलप्रदान्।
कुर्वन्तु सफलं कर्म कुर्वन्तु सततं शुभम्।।9।।

103. साम्ना चोषधिलिङ्गेन चक्रमित्यभिमन्त्रितम्।
आवापो मध्यमारभ्य नमोऽन्तेनोत्तरावधि।।10।।

104. आवापयेद्वधूभिश्च गर्भिणीं कन्यकां विना।
रक्षाङ्कुरौ सकृत्कुर्यात् पृथङ्नान्दीसमुच्चये।।11।।

105. सप्तमात्परमुद्वास्य बीजान्यप्सु विनिक्षिपेत्।
कन्यकावरयोः कुर्यात् पृथगभ्युदयांकुरे।।12।।

106. पूर्वेऽभ्युदयश्राद्धं यदि सद्योऽङ्कुरक्रिया।

12.चूडाकरणप्रयोगः

तृतीयेऽब्दे द्वितीये वा चूडाकर्मोत्तरायणे।

107. क्षुरदर्पणकोष्णाम्बुदर्भपिञ्जूलिगोमयम्।।1।।
तिलमाषयवव्रीहिपूर्णमात्रचतुष्टयम्।

108. कल्पयित्वाऽङ्कुरं नान्दीकौतुकं स्वस्तिवाचनम्।।2।।
कृत्वा पराह्ने विधिवत् प्रतिष्ठाप्य च पावकम्।

109. विधाय च पुरस्तन्त्रं तूष्णीमाचम्य बालकम्।।3।।
अन्वारब्धो व्याहृतिभिः विरूपाक्षेण चाज्यतः।

110. हुत्वाऽथ क्षुरमादाय सव्ये पाणौ निधाय तम्।।4।।
आदायोष्णाम्बु संसिच्य च्छित्वा केशांश्च दक्षिणे।

111. सुकेशदर्पपिञ्जूलीं दृष्ट्वाऽऽदर्शेन तान् स्पृशेत्॥5॥
छित्वा केशान् सपिञ्जूलीन् निदध्याद्गोमयोपरि।
112. पश्चिमोत्तरयोरेवं क्षुरदानं पुनर्न च॥6॥
नापिताय क्षुरं दद्यात् तत् क्षुरेणेति मन्त्रतः।
113. स्नात्वाऽऽगते परं तन्त्रं प्रायश्चित्तान्तमाचरेत्॥7॥
ततो मन्त्राच्छिरः स्पृष्ट्वा कर्मशेषं समापयेत्।
114. एवमेव स्त्रियः कुर्यात् प्रधानान्तं समन्त्रकम्॥8॥
क्षुरदानाद्यमन्त्रेण यदि तच्च समन्त्रकम्।
क्षौरात् परं प्रधानेज्या विरूपाक्षाहुतिं विना॥9॥
115. नापितः पूर्णपात्राणि हरेद्गां गुरवे दिशेत्।
सूनोर्मातरि गर्भिण्यां चूडाकर्म न कारयेत्॥10॥

इति द्वादशः खण्डः॥12॥

13. उपनयनप्रयोगः

116. जन्मतः पञ्चमे वर्षे सप्तमे वोपनयनम्।
गर्भाष्टमं न लङ्घेत नवमे त्वायुरिच्छतः॥1॥
117. वस्त्रोपवीतमौञ्जीत्वक्समिद्दण्डाश्मभाजनम्।
कल्पयित्वाऽङ्कुराद्यन्ते सङ्कल्प्य स्वस्तिवाच्य च॥2॥
118. कृतक्षौरं वटुं स्नातमक्ताक्षं समलंकृतम्।
आत्माग्निमन्तरान्नीत्वा दक्षिणेनोपविश्य तम्॥3॥
119. पुरस्तन्त्रे कृते मन्त्रं उक्त्वाऽऽचार्यस्समुत्थितः।
परिधाप्या स इत्वेनं कृत्वा यज्ञोपवीतिनम्॥4॥
120. आचान्तं च यथाशास्त्रं अधिष्ठाप्य शिलां गुरुः।
स्वदक्षिणे स्थितं बालं स्पृष्ट्वा सम्पादयन्घृतान्॥5॥
121. महाव्याहृतिभिर्हुत्वा कृत्वा वेदाहुतित्रयम्।
तदाज्येन वटोरास्ये कुर्याद्भूरृच आदिभिः॥6॥

122. आहुतित्रयमन्त्रेण गीर्णे जीर्णे स्रुवाग्रतः।
आचान्तं वादयन्मन्त्रं अग्निं परिणयेद्बटुः॥7॥

123. अधिगन्तरिति ब्रूयात् शिष्यस्य प्राङ्मुखं गुरुः।
भो प्रदातः कृष्णशर्मन् मह्यं त्वं यज्ञशर्मणे॥8॥

124. वेदान्प्रयच्छेत्युक्त्वाऽथ प्राङ्मुखेनावतिष्ठति।
गुरुः प्रत्यङ्मुखस्तिष्ठन् करेणाऽऽपूरिताञ्जलिः॥9॥

125. चतुर्वेद षड्दर्शनपुराणान्यधिकुर्विति।
अथ स्नातं जलं तस्य प्राञ्जलिभिः प्रपूरयेत्॥10॥

126. गुरुः प्रत्यङ्मुखस्तिष्ठेत् आसमिन्मन्त्रमुच्चरन्।
ब्रह्मचर्यमिति द्वाभ्यां वाक्याभ्यामर्थयेद्गुरुम्॥11॥

127. को नामासीति संस्पृष्ट्वा स्वकं नाम वदेद्बटुः।
गुरुर्हि भूरिति जपेत् ततो वटुकरग्रहः॥12॥

128. नाभिं स्पृष्ट्वा सहृदयं परिदाय च शास्ति तम्।
उपविश्य वटुं क्षिप्त्वा घृताक्ताः समिधश्च षट्॥13॥

129. बध्नीत त्रिवृतां मौञ्जीं मन्त्रमुक्त्वा स्वयं वटुः।
तस्यांसे त्वचमासज्य दण्डं दद्याद्गुरुस्ततः॥14॥

130. भिक्षेत मातरं पूर्वं जीवास्थेति पिबेदपः।
न्यस्य भिक्षां गुरोरन्ते तस्यान्तिकमुपाविशेत्॥15॥

131. ब्राह्मणान्त्समनुज्ञात्वा कुर्याद्ब्रह्मोपदेशनम्।
प्राङ्मुखो गुरुरासित्वा शिष्यः प्रत्यङ्मुखो नतः॥16॥

132. तं पच्छोऽर्धर्चशस्सर्वं सावित्रीं वाचयेद्गुरुः।
आद्यं साम च ऋक्पूर्वं गापयेदथ मेखली॥17॥

133. क्षिपेच्चतस्रः समिधः घृताक्ता अथ तं गुरुः।
ब्रह्मचर्यादि षट् प्रेषान् कृत्वा तन्त्रं समाप्य च॥18॥

134. अक्षीरलवणं भैक्षं त्रिरात्रं भोजयेद्बटुम्।

इति त्रयोदशः खण्डः॥13॥

14. सन्ध्यावन्दनप्रयोगः

एतत्सायमुपक्रम्य सन्ध्यावन्दनमाचरेत्।

135. सन्ध्यामुपासते ये तु सततं शंसितव्रताः।। 1।।
विधूतपापास्ते यान्ति ब्रह्मलोकं सनातनम्।

136. त्रिराचम्य शुचिर्भूत्वा रवेरस्तमयात्पुरा।।2।।
सायं सन्ध्यामुपासिष्य इति सङ्कल्प्य मानसा।

137. आपोहिष्ठेति ऋक्पादैः मार्जयित्वा पवित्रवान्।।3।।
अग्निश्चेत्यभिमन्त्र्यापः ब्रह्मतीर्थेन ताः पिबेत्।

138. सूर्यश्चापः पुनन्त्वेतौ प्रातर्मध्याह्नयोः क्रमात्।।4।।
प्रतिमन्त्रं ऋषिं छन्दः दैवतानि च संस्मरेत्।

139. आपस्तरत् कयेत्यद्भिर्वामदेव्येन मार्जयेत्।।5।।
गायत्र्या प्रक्षिपेदर्घ्यं सायं ह्युपविशन्भुवि।

140. विश्वामित्र ऋषिः छन्दः निचृद्गायत्रमुच्यते।।6।।
देवता परमात्मा च सवितापि प्रकीर्तितः।

141. पाणिना जलमादाय सकृदात्मप्रदक्षिणम्।।7।।
उपविश्य त्रिराचम्य ग्रहादींस्तर्पयेद्विजः।

142. सायं प्रत्यङ्मुखो दर्भेष्वासीनो वाग्यतश्शुचिः।।8।।
आनक्षत्रोदयं सन्ध्यां ध्यायेन्नियतमानसः।

143. सन्ध्ययोश्च बहिर्ग्रामात् आसनं वाग्यतस्मृतिः।।9।।
प्रातः प्राग्वदनः स्थित्वा ध्यायेदाभास्करोदयम्।

144. ततः परं जपं कुर्यात् इत्येतज्जैमिनेर्मतम्।।10।।
सव्याहृतिकां सप्रणवां गायत्रीं शिरसा सह।

145. त्रिः पठेदायतः प्राणः प्राणायामस्स उच्यते।।11।।
प्राणानायम्य गायत्रीं शतकृत्वोऽपि वा जपेत्।

146. दर्भहीना तु या सन्ध्या यच्च दानं विनोदकम्।।12।।
असंख्यातं च यज्जप्तं तत् सर्वं स्यान्निरर्थकम्।

147. नीरन्ध्रमङ्गुलीः कृत्वा सपवित्रमतो जपेत्।। 13।।
उदयास्तमयं सुप्तः तच्छेषानामनुस्मरन्।
148. पूर्वां सन्ध्यां जपेत्तिष्ठन् उपासीनस्तु पश्चिमाम्।। 14।।
प्राणानायम्य गायत्रीमुद्वास्योत्तम इत्यतः।
149. अग्ने त्वन्न इति द्वाभ्यां अग्निञ्च वरुणं क्रमात्।। 15।।
उपस्थाय तथा प्रातः उद्वयं प्रेरि तद्वदेत्।
150. क्रमादित्यमिति त्रेच यमायेति यमं तथा।। 16।।
ऋतं सत्यमितीशानं भूरित्याशाप्रदक्षिणम्।
151. नमेत्प्रवरगोत्रं स्वं नामान्युच्चार्य केशवम्।। 17।।
त्र्यहमुपनीता(म)ग्नौ आपूर्विकविधानतः।
152. मन्त्रैरग्नय इत्याद्यैः प्रक्षिप्य समिधश्च षट्।। 18।।
वन्देत स्वगुरुन्नित्यं प्रतिसायं समित्क्रिया।
153. समिदाधानमिच्छन्ति केचित्कालद्वयेऽपि च।। 19।।

इति चतुर्दशः खण्डः।। 14।।

15.पालाशयागप्रयोगः

प्राच्यामुदीच्यां वा गत्वा सशिष्यः पर्णभूरुहम्।
154. गोमयालिप्ततन्मूलं आज्येनाभ्यज्य नूतनम्।। 1।।
उपव्यानादिकं प्रोक्ष्य तूष्णीं परिसमूहनम्।
155. परिस्तीर्यार्चनं कृत्वा तूष्णीञ्च परिषिच्य च।। 2।।
चरुमादाय हस्तेन तन्मूले व्याहृतीर्यजेत्।
156. परिषिच्य पुनस्तूष्णीमुपस्थाय ततो वटुः।। 3।।
दण्डादिकं समुत्सृज्य सर्वं नूतनमाहरेत्।
157. अनुपाकृतवेदोऽपि ब्रह्मयज्ञमुपक्रमेत्।। 4।।
धानाद्यैः जैमिनेः पूजा गौर्देया गुरुदक्षिणा।
158. साक्षादग्नेरभावेन तदर्थं यत् समूहनम्।। 5।।
परिषेकद्वयं स्तूष्णीं होमस्तु घृततेजसि।

16. उपाकर्मप्रयोगः

159. गौदानिकव्रतारम्भं कृत्वा कुर्यादुपाकृतिम्।
श्रावण्यां प्रोष्ठपद्यां वा हस्तयोर्वाऽप्युपाकृतिः।। 1।।

160. सम्प्रदायाश्च षट्कालः नक्षत्रस्योपलक्षणात्।
प्रवर्क्षासम्भवे हस्तौ ग्राह्याविति च भाष्यकृत्।।2।।

161. दधिलाजांश्च पुष्पाणि तत्पात्राणि च सैकतम्।
यज्ञोपवीत कूर्चाश्च कल्प्य शिष्यैरुपाकृतौ।। 3।।

162. कामोऽकार्षीज्जपं कुर्यात् उत्सर्गो न कृतो यदि।
षडुत्तरे च ऋष्यादीन् जैमिन्यादींश्च पूर्वतः।।4।।

163. वंशस्थान्दक्षिणे कुर्यात्सकूर्चान् सिकतामयान्।
अग्निर्मध्ये गुरुः पश्चात् आसीरन् परितः परे।। 5।।

164. स्थण्डिलेऽग्निं प्रतिष्ठाप्य भूम्यारम्भजपात् पुरा।
प्राणायामैस्त्रिराचम्य जपेयुस्सहनोस्त्विति।। 6।।

165. दधिधानाप्रणीताज्या उत्पूयाग्निमुखे कृते।
नवयज्ञोपवीतेभ्यः शिष्येभ्यस्तु गुरुस्त्रिधा।। 7।।

166. सावित्रीं सामसावित्रीं सोमं राजानमेव च।
आग्नेयाद्यमथैन्द्राद्यं पावमानाद्यमित्यपि।। 8।।

167. ब्रूयादृक्पूर्वकं साम तेऽपि ब्रूयुर्यथोदितम्।
या ऋचोऽस्तु शाखायामानीयन्ते त्रिभिः स्वरैः।। 9।।

168. दधिमिश्रितलाजाभिः यष्ट्वा ऋष्यादिषट् ऋषीन्।
ऋक् सदसस्पत मेधावी हुत्वा स्विष्टकृतं यजेत्।। 10।।

169. प्रागन्तमुदगन्तं च ऋष्यादेः पूजने कृते।
वंशस्थमपि सम्पूज्य कुर्युर्धानानिवेदनम्।। 11।।

170. वंशस्थपूजने किञ्चित् न च पश्यामि किञ्चन।
पारम्पर्यादविच्छेदात् कुर्वन्नपि न दुष्यति।। 12।।

171. ऋष्यादींस्तर्पयित्वाऽद्भिः जैमिन्यादींश्च तर्पयेत्।

तन्त्रशेषं समाप्याथ हविश्शेषाभिमर्शनम्॥13॥

172. पूजयेयुर्गुरुन्नत्वा त्र्यहानध्ययनं भवेत्।
वेदारम्भं व्रती कुर्यात् प्रकृष्टदिवसे शुचिः॥14॥

173. तत्तत्पर्वसमाप्तौ च देयोक्ताः पर्वदक्षिणाः।
मांसादीन् वर्जयेदेकं गुरुनेको न चापरे॥15॥

इति षोडशः खण्डः॥16॥

17.उत्सर्गप्रयोगः

174. स्यात्तैषे मासि पूर्णायां उत्सर्गो हस्तभेऽथवा।
अधीयानास्तु वेदेषु यथास्वमिति मन्त्रतः॥1॥

175. सङ्कल्प्योत्सर्जनं कुर्युरुपाकर्म यथा कृतम्।
न वेदाध्ययनं कार्यम् उत्सृज्य च दिनत्रयम्॥2॥

176. आपूर्वाध्ययनं नेतो नाधीयीरन्धनावृते।
अनेनाधीतवेदानां उत्सर्गो नेति गम्यते॥3॥

177. अयातयामताहेतोराम्नायानामुपाकृतिः॥

इति सप्तदशः खण्डः॥17॥

18.अवकीर्णव्रतप्रायश्चित्तप्रयोगः

अकृत्वा भैक्षचरणम् असमिध्य च पावकम्।

178. अनातुरः सप्तरात्रं अवकीर्णव्रतं चरेत्॥1॥
प्रणीय विधिवद्वह्निं आपरिस्तरणे कृते।

179. तूष्णीमाज्यस्य संस्कारं कृत्वोत्पूय घृतं स्रुवम्॥2॥
समिधं परिषेकान्ते तूष्णीं निक्षिप्य पावके।

180. कामावकीर्ण कामाभिदुग्धोऽस्मीति द्वयेन च॥3॥
आज्याहुतिद्वयं कुर्यादुपस्थानं ततः परम्।

181. सं मा सिञ्चन्तु मरुतः इति मन्त्रेण मेखली॥4॥

इति अष्टादशः खण्डः॥18॥

19. महानाम्नीकव्रतप्रयोगः

छन्दः पाठमधीयानो गौदानिकव्रतं चरेत्।
182. वस्त्रोपवीतदण्डादीन् व्रतारम्भेषु कल्पयेत्।। 1।।
अग्निं प्रतिष्ठाप्याचान्तं कृत्वाऽयमुपनीतवत्।
183. वस्त्रोपवीतमौञ्जीत्वग्दण्डवान् गुरुणा कृतः।।2।।
परिषिच्याथ पर्युक्ष्य चतस्रः समिधः क्षिपेत्।
184. परिषेचनपर्युक्षे कृत्वाऽग्निमुपतिष्ठते।।3।।
व्रतान्ते तु विशेषोऽस्ति सङ्कल्प्य प्रोक्षणे कृते।
185. गीत्वा व्रतस्य सामानि ततः क्ष्मारम्भनादिकम्।।4।।
वस्त्रादीनां क्रिया नात्र मन्त्रोहस्तु ह्यचारिषम्।
186. इति व्रतान्तसमिधं क्षिप्त्वा कुर्यादुपस्थितिम्।।5।।
एवं कुर्याद्व्रातिकादिचतुष्टयमपि व्रती।
187. व्रतपर्व व्रातिकान्ते श्रावयेत्प्रति तं गुरुः।
आदित्यव्रातिकस्यान्ते श्रावयेच्छुक्रियाणि तम्।।6।।
188. तथोपनिषदस्यान्ते श्रावयेज्जेष्ठसामकम्।
आग्नेयैन्द्रपवमानत्रयं छन्दोऽभिधीयते।।7।।
189. आरणादौ हुवे वाचम् आरभ्य व्रातिकं विदुः।
वैरूपाभिधयद्यादि शुक्रियन्नाम कथ्यते।।8।।
190. उदुत्यं चित्रमित्याभ्यां ऋग्भ्यां यत्साम गीयते।
तत्सामोपनिषत्प्रोक्तं ज्येष्ठसामेति च स्मृतम्।।9।।
191. गायेद्व्याहृतिसामानि गायत्रमपि तद्व्रते।
बृहच्छिशुगणं नाम ब्राह्मणं वा पठेदिह।।10।।
192. अग्नानात्समिदाधानं स्नानं सन्ध्याद्वयेऽपि च।
कुर्वन्विशेषमादिष्टं वत्सरान्ते समापयेत्।। 11।।
193. गौदानिकव्रातिकाख्यं आदित्यव्रातिकं तथा।
तथोपनिषदं पश्चात् महानाम्निकमेव च।। 12।।

194. सज्जलं शैवलं कांस्यं बिभ्राणं मीलितेक्षणम्।
आसीनं प्रातरभ्येत्य गुरुः स्पृष्ट्वाऽभ्यपूरुषाः॥13॥

195. तिस्रश्च श्रोत्रियायेति ऋक्पूर्वमथ वाससा।
संवेष्ट्यास्य मुखं गच्छेदादायैनं स्वमन्दिरम्॥14॥

196. दिवा तिष्ठेदयं मौनी रात्रिमासीत साम्यकृत्।
श्वशरण्ये प्रणीयाग्निं वस्त्रमुद्वेष्ट्य तं गुरुः॥15॥

197. अपोऽभीत्यादिभिः पश्येत् अप्सूर्याग्निपशून्क्रमात्।
सामन्त्य इत्यपः सिक्त्वा वस्त्रादि गुरवे दिशेत्॥16॥

198. आचार्यः पूर्वतन्त्रान्ते चरुं द्विरवदाय च।
यजेत विश्वामित्रेन्द्रौ महानाम्नीरपः क्रमात्॥17॥

199. व्रतान्ते समिधः क्षिप्त्वा कुर्यात्स्विष्टकृदादिकम्।
भोजयित्वा गुरुं तस्मै गां दद्याच्छ्रद्धया वटुः॥18॥

इति एकोनविंशः खण्डः॥19॥

20. गोदानकरणप्रयोगः

200. व्रतान्ते षोडशे वर्षे गोदानं कर्म चोलवत्।
औदुम्बरवटाश्वत्थत्वक्कल्कं चन्दनस्रजम्॥1॥

201. कल्पयेच्चौलसम्भारान् गुरुर्गोदानकर्मणि।
गोदानादित्रयस्यापि तन्त्रेणांकुरकौतुकम्॥2॥

202. कृत्वाऽथाग्निमुखस्यान्ते चौलवत् पञ्च चाहुतीः।
कृत्वेहोपनयादिष्टव्रतान्ते समिदिष्यते॥3॥

203. चौलवद्गुरुरुत्थाय कुर्याद्विग्वपनादिकम्।
स्नात्वा वनस्पतेर्मन्त्रत्रयेणापि यथाक्रमम्॥4॥

204. त्वचं त्वचा समुत्सृज्य स्नात्वा गन्धस्रजोर्ग्रहः।
आदर्शोऽसीति तद् दृष्टं माल्यं व्यपनयेद्गुरुः॥5॥

205. व्रतारम्भसमित्क्षेपः शेषं कुर्याच्च चौलवत्।
आचरन्नुक्तधर्मांश्च गां दद्याद्गुरवे व्रती॥6॥

21. समावर्तनप्रयोगः

206. वेदार्थ ब्रह्मचर्यान्ते स्नानं गोदानचौलवत्।
गोदानचौलसम्भारं कोष्णं स्वर्णयुतं जलम्।।1।।

207. वस्त्राण्युपानहौ दण्डं एरकामञ्जनं मणिम्।
सम्पाद्य पूर्वतन्त्रान्ते व्रतान्तसमिदाहुती।।2।।

208. उदग्दशाम्बरास्तीर्णां नीत्वैनमेरकां गुरुः।
द्विषतामित्यस्य दण्डं पात्रस्थास्वप्सु सादयेत्।।3।।

209. उदुत्तममृचा मौञ्जीं विस्रंस्याप्सु विनिक्षिपेत्।
चौलप्रधानहोमांश्च कृत्वा दिग्वपने कृते।।4।।

210. सर्वाङ्गं वापयित्वैव शिरश्श्मश्र्वादिपूर्वकम्।
तान्केशान्निखनेन्मूलेऽश्वस्थस्यौदुम्बरस्य वा।।5।।

211. स्नात्वाऽऽगतं जलैः कोष्णैः शिवा नः स्नापयेत् गुरुः।
रोहिण्यादौ यदि स्नायात् स्नानं तल्लिङ्गमन्त्रतः।।6।।

212. गोदानवत्त्वचाऽऽलिप्य स्नात्वा प्राप्य स एरकाम्।
मन्त्रेण चन्दनस्रग्वी गुरुणाऽऽच्छादिताम्बरः।।7।।

213. यशसर्चा सव्यमक्षि तथैवोक्त्वा च दक्षिणा।
आदर्शे वीक्षितात्मानं उत्तरीयं नयेद्गुरुः।।8।।

214. शिष्यः स्वस्तीति पालाशं कण्ठे धत्ते त्रिवृण्मणिम्।
ब्रह्मेत्यर्केति मन्त्राभ्यां बैल्वार्कौ यदि धारयेत्।।9।।

215. वेणुदण्डमुपादाय गन्धर्वोऽसीति मन्त्रतः।
उपानहावादधीत नेत्रे स्थ इति मन्त्रतः।।10।।

216. तूष्णीमुपानहौ मुक्त्वा नाजातेत्यादिशासनम्।
समाप्य परतस्तन्त्रं चौलवद्गुरुदक्षिणा।।11।।

इति एकविंशः खण्डः।।21।।

***

22. मधुपर्कप्रयोगः

217\. दध्ना वा पयसा युक्तं मधु स्यान्मधुपर्ककम्।
विष्टरं पाद्यमर्घ्यं चाऽऽचम्य गां च प्रकल्पयेत्॥1॥

218\. मधुपर्कं भवान्मह्यं आनयत्विति तद्गुरुः।
बोधितः स्नातकायास्मै प्राङ्मुखाय तमाहरेत्॥2॥

219\. विष्टरादीनि षट् चास्य नामपूर्वन्तु मादिशेत्।
पाद्येन क्षालयेत्पादौ मयि श्रीः श्रयतामिति॥3॥

220\. मयीत्यर्घ्यं प्रगृह्याद्भिः आचम्य गुरुणेरितम्।
दध्ना चेत् दधिमन्थाख्यं पयस्वं पयसा मधु॥4॥

221\. उदकेनोदमन्थाख्यं विष्टरान्तरवस्थितम्।
देवस्य त्वेति हस्ताभ्यां गृहीत्वा भूतलं नयेत्॥5॥

222\. अङ्गुष्ठानामिकाभ्यां च त्रिः प्राश्य मह्यमित्यतः।
शेषमुत्तरतो दद्याद्गर्ते वाऽभ्युक्ष्य तन्नयेत्॥6॥

223\. गौर्धेनुरित्युपांशूच्चैः ओमित्युक्त्वोत्सृजेच्च गाम्।
ऋत्विगाचार्यसुस्नातकाभिषिक्तो महीपतिः॥7॥

224\. प्रियः सखा श्रोत्रियश्च षडर्घ्यार्हा भवन्ति हि॥

इति द्वाविंशः खण्डः॥22॥

23. विवाहप्रयोगः

स्नात्वा गुरुकुलादेव मातरं पितरं गृहे।

225\. सम्यक्परिचरन् ताभ्यामनुज्ञातो गृहाय सः॥1॥
वाससी पूर्णकुम्भं च शूर्पमश्मानमेरकाम्।

226\. शमीपलाशसम्मिश्रान् लाजान्त्सम्पातभाजनम्॥2॥
कल्पयित्वा विवाहार्थं सङ्कल्प्य स्वस्तिवाच्य च।

227\. अनुमन्य च कन्यार्थं यान्तं दूतमनृक्षरान्॥3॥
कल्याणवेषभृद्गच्छेत् कन्यां निश्चित्य तद्गृहम्।

228\. तत्रोक्तमधुपर्कः सन्नथानुज्ञाप्य भूसुरान्॥4॥

करिष्यमाणकर्ममध्ये गणनाथं प्रपूज्य च।

229. आह्रीयमाणं तत्राग्निं अग्निरित्यनुमन्त्र्य च॥5॥
इमामित्युपतिष्ठेत दीप्तमग्निं प्रतिष्ठितम्।

230. सम्भारान्प्रोक्ष्य वस्त्रे द्वे वध्वै दद्याच्च या इति॥6॥
धृताम्बरां क्षालिताङ्घ्रि आचान्तां पावकात्मनोः।

231. मध्यं नीत्वा दक्षिणतः स्वासने चोपविश्य ताम्॥7॥
माङ्गल्यसूत्रं बध्नीयाद्गीत्वा शौक्ताख्यसामनी।

232. माङ्गल्यतन्तुनाऽनेन मम जीवनहेतवे॥8॥
कण्ठे बध्नामि सुभगे त्वं जीव शरदः शतम्।

233. सङ्कल्प्याथ पिता वध्वा दत्वाऽस्मै विष्टरादिकम्॥9॥
कन्यकावरयोरुक्त्वा गोत्रनाम त्रिपूरुषम्।

234. गोत्रजां शर्मणो नप्त्रीं पौत्रीं पुत्रीमिमामिति॥10॥
गोत्राय नप्त्रे पौत्राय पुत्रायामुकशर्मणे।

235. प्रजासहत्वकर्मभ्य इत्युक्त्वा जलपूर्वकम्॥11॥
कन्यां कनकसम्पन्नां सर्वाभरणभूषिताम्।

236. दास्यामि विष्णवे तुभ्यं ब्रह्मलोकजिगीषया॥12॥
इति दत्तां स गृह्णीयाद्देवस्य त्वेति मन्त्रतः।

237. अथैतां दक्षिणे पार्श्वे वरः प्रत्युपवेश्य च॥13॥
पुरतोऽग्नेः पूर्णकुम्भं धृत्वा तिष्ठेन्महीसुरः।

238. सशमीलाजवच्छूर्प धृत्वा माता तु दक्षिणे॥14॥
ततः कुर्यात्पुरस्तन्त्रं भूम्यारम्भणपूर्वकम्।

239. देवो व इति वक्तव्यं लाजोत्पवनकर्मणि॥15॥
एरकां पूर्वतन्त्रान्ते परिस्तरणबर्हिषः।

240. पश्चादर्थं यथा प्राप्नुयात् तथा सम्यक्प्रसार्य च॥16॥
इमामिति स्त्रियं ब्रूयात् सा ब्रूयात् पुम इत्यमुम्।

241. प्रास्या इति वरो ब्रूयात् अशक्ता यदि वा वधूः॥17॥

अध्यास्य चैरकामेवं अन्वारब्धश्च जायया।
242. चतसृभिर्व्याहृतिभिः या तिरश्चीति सप्तभिः।।18।।
पावके हुतशिष्टाज्यं सम्पाते निवपेत्तथा।
243. हुत्वा सम्पादिकाज्येन राधयामसि संस्थया।।19।।
प्रथमर्चा वधूमूर्ध्नि सिञ्चेत् प्रत्यङ्मुखस्थितः।
244. गृभ्णामीत्यादिमन्त्रेण पाणिमस्याः प्रगृह्य च।।20।।
अस्याः पादमधिष्ठाप्य दृषदं वामपाणिना।
245. प्राच्यां तयोक्षितोऽघोरचक्षुरित्यादि सं जपेत्।।21।।
असाविति पदे वध्वाः सम्बुध्या नाम निर्दिशेत्।
246. पुनर्गृहीत्वा तन्नाम परिक्रम्याग्निमिन्धति।।22।
भ्राजाञ्जलिद्विरावापान् उपस्तीर्याभिघारितान्।
247. कन्यलेति वदंल्लाजान् कन्यकाञ्जलिनाऽऽवपेत्।।23।।
विश्वा इति जपेदन्ते लाजहोमत्रयस्य च।
248. गृहीत्वा पूर्ववन्नाम जपित्वेत्वमसीति च।।24।।
इयन्नार्यर्यमभ्याञ्च क्रमाद्धोमत्रये कृते।
249. तच्छेषं जुहुयान्माता शूर्पेणात्रापि तज्जपः।।25।।
न स्विष्टकृत् सर्वहोमान् नाकृतार्थाद् घृतादपि।
250. प्रतिपत्तिरिदं कर्मलोपनोत्पाद्यतां हविः।।26।।
एकमित्यादिभिस्सप्त पदं विक्राम्य तद्वधूम्।
251. प्रोक्षेत्कुम्भं पुनर्भर्ता लाजदः कुम्भधृग्द्विजः।।27।।
सुमङ्गलीरिति स्त्रीं तां दर्शयित्वा सुमङ्गलीः।
252. समाप्य तन्त्रकालश्चेत् ध्रुवादीन् दर्शयेद्वधूः।।28।।
अमुकस्य कुले लक्ष्मीः भूयासममुनेति च।
253. पत्यात्मनामनी ब्रूयात् ध्रुवारुन्धत्युपस्थितौ।।29।।
अशक्ता चेत् स्वयं ब्रूयात् तूष्णीं सप्ताप्युपस्थितिः।
इति त्रयोविंशः खण्डः।।23।।

24. प्रवेशहोमप्रयोगः

254. गृहं गच्छेद्रथेनाथ पूषेति प्रस्थितां वदन्।
तत्रावरोपयन्त्येनां इह प्रियमिति स्त्रियः।।1।।

255. कल्पयित्वा फलं किञ्चित् चर्म चानडुहं घृतम्।
प्रविश्य सवधूर्गेहं पूर्वतन्त्रक्रियोपरि।।2।।

256. इह गाव इति स्त्रीभ्यां उपवेश्य च चर्मणि।
तस्यामङ्के स्थितं बालं तोषयित्वा फलादिना।।3।।

257. मन्त्रैरिहधृतीत्याद्यैः अष्टौ हुत्वा घृतेन च।
समाप्य तन्त्रं व्रतिनौ भवेतां तौ दिनत्रयम्।।4।।

इति चतुर्विंशः खण्डः।।24।।

25. उद्वाहशेषहोमप्रयोगः

258. ऊर्ध्वं त्रिरात्रात्सायाह्ने सह संस्नाय दम्पती।
निश्याज्यं चरुसम्पातं सम्पाद्याग्निमुखे कृते।।1।।

259. सम्पातमग्न इत्यादेः आज्येनाहुतिपञ्चकम्।
हुत्वा चरुं समादाय यजेताग्निं प्रजापतिम्।।2।।

260. सम्पाताज्यहविस्तस्यै स्रोतांस्यङ्क्ष्वेति सन्दिशेत्।
स्त्रीभिः कृतेऽञ्जने तस्याः स्रोतास्यं नाभिपूर्वकम्।।3।।

261. चरुणा स्विष्टकृद्धोमं कृत्वा मूलाञ्जनं चरौ।
घृतेऽपि कृत्वा तत्रान्ते विदध्यात्स्वस्तिवाचनम्।।4।।

262. आवाभ्यां दम्पतिभ्याञ्च स्वस्तीत्युक्ते द्विजैरपि।
युवाभ्यां दम्पतिभ्यां चेत्युक्ते संवेशनं निशि।।5।।

263. ऋतावृतावेवमेव गौर्देया गुरुदक्षिणा।

इति पञ्चविंशः खण्डः।।25।।

26. वैश्वदेवताम्बूलचर्वणप्रयोगः

कृत्वा वैवाहिकं शेषं औपासनमुपक्रमेत्।

264. व्रीहिभिर्वा यवैर्वाऽग्नौ जुहुयात्तण्डुलेन वा।।1।।

एनोनिर्हरणायादौ कृत्वाऽथ शकलाहुतीः।
265. पाकाग्नौ वैश्वदेवः स्यात् पञ्चसूनापनुत्तये।।2।।
प्रोक्षणाद्युक्षणान्तं च कृत्वा पात्रकृतोदनः।
266. विभज्य पूर्वभागेन यजेताग्न्यादिदेवताः।।3।।
अग्नेरुत्तरतो भूमौ तेनैव त्रिबलिं हरेत्।
267. रेखां शङ्खाकृतिं कृत्वा गृह्याभ्य इति मन्त्रतः।।
पश्चाद्भागेन वै दद्यात् हविषा बलिसप्तकम्।
268. तदुत्तरे तु प्राङ्मुख्यां रेखायां तु चतुर्बलिम्।।5।।
धन्वन्तर्यादिकं क्षिप्त्वा दक्षिणाग्नेः स्वधां हरेत्।
269. आत्माग्न्योर्मध्यभागे तु वायसादिबलिं क्षिपेत्।।6।।
अग्नेर्दक्षिणतो दद्यात् चित्रादिबलिपञ्चकम्।
270. शेषं तन्त्रं समाप्याथ प्रक्षाल्याऽऽचम्य वाग्यतः।।7।।
अनुज्ञाप्य द्विजान् दत्वा फलदानं समाचरेत्।
271. ताम्बूलचर्वणं कृत्वा दद्याद्गां गुरवे शुभाम्।।8।।

इति षट्विंशः खण्डः।।26।।

इति तरुणाग्निहोत्रिकारिका सम्पूर्णा

5. गौतमकारिका

1. नक्षत्रदेवतामन्त्रकारिका

1. अथ छन्दोगसूत्रस्य ग्रहाराधनकर्मणि।
वक्ष्येऽहं कृत्तिकादीनामृक्षाणां मन्त्रदेवताः॥1॥

2. कृत्तिकास्वग्न आयाहि मन्त्रोऽग्निर्देवता मता।
प्रजापते नत्वदेतद्रोहिण्यास्तु प्रजापतिः॥2॥

3. उच्चाते जा मृगशिरस्तारका सोमदेवता।
आर्द्रा तु रुद्रदैवत्या ह्यावो राजानमन्त्रतः॥3॥

4. पुनर्वसू महित्रीणामदितिर्देवता मता।
बृहस्पतिमन्त्रस्य पुष्यं देवो बृहस्पतिः॥4॥

5. आयं गौरिति मन्त्रश्च आश्लेषा सर्पदेवता।
ऊर्जं वहन्तीर्मन्त्रश्च मघा स्यात्पितरः स्मृताः॥5॥

6. यं रक्षन्तीति पूर्वायाः फल्गुन्या देवताऽर्यमा।
उत्तरस्यात्तु फल्गुन्या भगोनचि भगः स्मृतः॥6॥

7. हस्ते तत्सवितुर्मन्त्रः सविता देवता मता।
चित्रा तु त्वष्टृदैवत्या त्वष्टा नो दैव्यकं वचः॥7॥

8. स्वात्यास्तु वात आवातु मन्त्रो वायुश्च देवता।
इन्द्राग्नी अपादिमन्त्रो विशाखे मन्त्रदेवते॥8॥

9. ऊर्जा मित्रो ह्यनूराधा तारका मित्रदेवता।
यस्ते नूनमिति ज्येष्ठायास्त्विन्द्रो देवता मता॥9॥

10. वेत्था हि नीति मूलस्य नैर्ऋतो देवता मता।
यदा कदेति पूर्वस्याषाढाया वरुणः स्मृतः॥10॥

11. उत्तराढा च यद्वा उ विश्वेदेवास्तु देवता।
इदं विष्णुः श्रवणभे विष्णुदैवत्य ईरितः॥11॥

12. तमग्निमस्ते वसवो धनिष्ठायास्तु देवता।
प्रमित्रायाश्शतभिषक् वरुणो देव ईरितः॥12॥

13. पूर्वप्रोष्ठोत्तरप्रोष्ठे उभयोर्मन्त्रदेवते।
अहिरस्यहिर्बुध्न्यस्तु ह्यजोऽसीत्यज एकपात्।।13।।

14. सोमः पूषा तु रेवत्याः पूषा वै देवता स्मृता।
येते पन्था अधोऽश्विन्या अश्विनौ देवते उभे।।14।।

15. नाके सुपर्णं भरणी यमो वै देव ईरितः।
एवमुक्तं गौतमेन ह्यायुषोऽस्याभिवृद्धये।।15।।

इति नक्षत्रदेवतामन्त्राः।।

2.वास्तुहोमकारिका

16. अथातो वास्तुहोमस्य प्रयोगस्तूच्यतेऽधुना।
पूर्वप्रोष्ठपदे तारे ह्यन्तर्गृहसमायताः।।1।।

17. रज्जूः कृत्वा चतस्रस्तु मध्ये शङ्कुन्निधाय च।
प्रतिकोणं प्रतिदिशं रज्जूरायम्य वै ततः।।2।।

18. प्रागुपक्रममष्टौ च शङ्कुनष्टासु दिक्षु च।
प्रदक्षिणं निधायाथ रज्ज्वन्तांस्तेषु बन्धयेत्।।3।।

19. गोमयेनोपलिप्याथ शङ्कुरज्जुपरीवृतम्।
शमीपलाशश्रीपर्णवृक्षाणां पत्रसञ्चयैः।।4।।

20. अवकीर्य गृहं सर्वं श्वेतपुष्पाक्षतैरपि।
उपलिप्ते च मध्ये तु चरुतन्त्रं प्रवर्तयेत्।।5।।

21. ब्रह्मोपवेशनान्ते तु वास्तोष्पत इतीर्य च।
त्वा जुष्टं निर्वपामीति पयसा क्षालयेत्ततः।।6।।

22. पायसं चोदनं कुर्यान्नाज्यभागं तु कारयेत्।
न चोपस्तरणं नाभिधारणं स्विष्टकृन्न च।।7।।

23. हुतशेषं न भक्षीत न दद्याद्ब्रह्मणेऽपि तत्।
प्रपदान्तं ततः कृत्वा हुत्वा व्याहृतिभिस्तथा।।8।।

24. आज्येन पायसं मिश्रीकृत्य जुह्वां ततः परम्।
गृहीत्वाऽऽष्टगृहीतं तु धानावन्तमिति स्वयम्।।9।।

25. साम गीत्वा ततो वास्तोष्पत इत्याहुतिं चरेत्।
ततोऽप्यष्टगृहीतं तु कृत्वाऽनुक्त्वैव साम च।।10।।

26. हये राक इति प्राग्वत् ऋग्भिर्होमचतुष्टयम्।
ततश्च वामदेव्यर्ग्भिः महाव्याहृतिभिस्तथा।।11।।

27. प्रजापते नत्वदिति सप्ताहुतिरथो भवेत्।
सर्वाश्चाष्टगृहीतेन कुर्यादाहुतयस्तथा।।12।।

28. अथोपरिष्टात्तन्त्रं तु कृत्वा शंकुप्रदेशतः।
दिक्षु कुर्याद्बलिं तत्र सामविध्युक्तमन्त्रतः।।13।।

29. पलाशतरुपर्णानि कृत्वोत्तानानि तान्पुटे।
अधश्चोपरि चैव स्यात्परिषेकोऽत्र सर्वतः।।14।।

30. हुतशेषाच्च पात्रस्थात् किञ्चित्किञ्चिच्च पायसात्।
गृहीत्वा निदधीतात्र प्रजापतय ईरयेत्।।15।।

31. स्वाहेत्युक्त्वा तु मध्ये स्यात् प्राच्यामिन्द्राय दापयेत्।
आग्नेय्यां वायवे स्वाहा यमायैव तु दक्षिणे।।16।।

32. प्राचीनावीतिना पित्र्यती र्थाद्दक्षिणपश्चिमे।
पितृभ्यस्तु स्वधेत्युक्त्वा दद्यात्स्वाहेति वा वदन्।।17।।

33. पश्चादप उपस्पृश्य पुनर्यत्रोपवीतिना।
पश्चिमे वरुणायेति पश्चादुत्तरपश्चिमे।।18।।

34. महाराजाय चेत्युक्त्वा सोमायोत्तरदेशतः।
ततः प्रागुत्तरे देशे महेन्द्रायेति दापयेत्।।19।।

35. भूमौ वासुकये स्वाहा यत्र क्वचन कारयेत्।
नमो ब्रह्मण इत्युक्त्वा चाकाशे कारयेद्बलिम्।।20।।

36. पुण्याहं वाचयेत्पश्चाद् ब्राह्मणैर्वेदपारगैः।
स्वाहाकारोऽन्तिमो मन्त्र एवं कर्मणि संस्थिते।।21।।

37. पुनः कुर्याच्चतुर्मासेष्वथ वा वत्सरेषु वा।
वास्तुहोमे कृते तस्य धनधान्यादि वर्धते।।22।।

3.मृत्युञ्जयशान्तिकारिका

38. अपमृत्युञ्जयं होमं सर्वपापप्रणाशनम्।
महादेवप्रियकरं महाज्ञानस्य साधनम्।।1।।
39. गुह्यं यशस्यमायुष्यं सर्वव्याधिहरं परम्।
गुह्यानां गुह्यमेवेदं सामगाचार्यसम्मतम्।।2।।
40. अकालमरणं प्राप्तं अनाचाराद्भविष्यति।
होमैर्दानैर्जपैर्ध्यानैर्देवतानां च पूजनैः।।3।।
41. पापक्षयाय कर्तव्यं क्षीणपापस्तु जीवति।
व्याधिभिर्बाध्यमानस्य कर्तव्यं तु विशेषतः।।4।।
42. वत्सरे वत्सरे कुर्यात् मासि मासि विशेषतः।
आरोग्यं सन्ततिं चैव विपुलां श्रियमाप्नुयात् ।।5।।
43. अपमृत्युं जयत्याशु इति गौतमभाषितम्।।

इति गौतमोक्ता मृत्युञ्जयशान्तिः।।

***

4.षष्ठ्यब्दपूर्तिकारिका

अथातस्सम्प्रवक्ष्यामि शान्तिं षष्ठ्यब्दपूरणे।
44. छन्दोगहितकामार्थं गौतमो मुनिरब्रवीत्।।1।।
ब्राह्मणान्तसमनुज्ञाप्य सम्पूज्य गणनायकम्।
45. अथ भक्तिध्यानपूर्वैरखिलैरुपचारकैः।।2।।
षष्ठ्यब्दपूर्तिजन्मर्क्षे षाष्टिकीं शान्तिमाचरेत्।
46. षष्ठ्यब्दपूर्तिशान्तिं वै गौतमोक्तप्रकारतः।।3।।
करिष्य इति सङ्कल्प्य स्वाचार्यं पूजयेत्ततः।
47. स्वशाखावेदिनं विप्रमाचार्यं वरयेत्सुधीः।।4।।
वेदाध्ययनसम्पन्नां तथाऽष्टौ ब्राह्मणानपि।
48. गोमयेनोपलिप्याथ स्थण्डिलं चतुरश्रकम्।।5।।
तत्र व्रीहीन्विनिक्षिप्य तस्योपरि च तण्डुलान्।

49. ब्रह्मादींस्तत्र संस्थाप्य घटेषु नवसु क्रमात्।।6।।
शुद्धोदकैः पूरितेषु पञ्चत्वक्पल्लवैरपि।
50. सुवर्णै रजतैर्वाऽपि प्रतिमाः कारयेन्नव।।7।।
स्वीयवित्तानुसारेण वस्त्राण्यपि तथा नव।
51. प्रतिमाः पञ्चगव्येन स्नापयित्वा यथाविधि।।8।।
स्थापयेत्प्रतिमास्तास्तु तत्तत्कुम्भोपरि क्रमात्।
52. वेष्टयेन्नवभिर्वस्त्रैः कुम्भांस्तु सकलानपि।।9।।
अलंकृत्य ततस्तांस्तु चन्दनैरक्षतैरपि।
53. ततः प्राणान्प्रतिष्ठाप्य कुर्यादावाहनं क्रमात्।।10।।
ब्रह्माणमिन्द्रमग्निं च यमं निर्ऋतिमेव च।
54. वरुणं च तथा वायुं सोममीशानमेव च।।11।।
आचार्य ऋत्विजश्चापि मन्त्रैश्चापि तदीयकैः।
55. स्थण्डिलस्य च मध्ये तु ब्रह्मकुम्भं निवेशयेत्।।12।।
अन्यानिन्द्रादिकुम्भांश्च तत्तद्दिक्षु निवेशयेत्।
56. आवाहितांश्च ब्रह्मादीनर्चयेदासनादिभिः।।13।।
ऋत्विग्भिः साकमाचार्यः कुम्भं स्पृष्ट्वा जपेत्ततः।
57. प्रथमं वेदजननीं वेदादींश्च ततः परम्।।14।।
अष्टोत्तरशतं ब्रह्म जज्ञानमिति मन्त्रकम्।
58. इन्द्रादिलोकपालानां मन्त्रांश्चाष्टोत्तरं शतम्।।15।।
पौरुषं सूक्तकं ब्राह्मं रौद्रं वारुणमेव च।
59. श्रीसूक्तं च ततः पश्चाद्घृतसूक्तं तथैव च।।16।।
नवग्रहाणां सामानि मृत्युसूक्तं ततः परम्.
60. नमकं चमकं चैव विष्णुसूक्तमतः परम्।।17।।
भूसूक्तं स्नानवर्गं वै चारिष्टं वर्गमेव च।
61. ततः पवित्रवर्गं च पञ्चशान्तिं तथैव च।।18।।
त्रिर्जपेत्परिधानीयामों नमो ब्रह्मणे ततः।

62. कुम्भानामीशदिग्भागे प्रतिष्ठाप्य हुताशनम्।।19।।
ततो होमं प्रकुर्वीत चाचार्य ऋत्विजस्तथा।
63. स्वगृह्योक्तविधानेन मुखान्तं होममाचरेत्।।20।।
आचार्यो ब्राह्ममन्त्रेण घृतेनाष्टोत्तरं शतम्।
64. समित्तिलान्नलाजाज्यमाषमुद्गमरीचिभिः।।21।।
दिक्पालानां स्वस्वमन्त्रैः ऋत्विजो जुहुयुस्तथा।
65. उद्देशस्य तथा त्यागं यजमानो वदेत्क्रमात्।।22।।
ब्रह्मजज्ञानमिति च मन्त्रेण ब्रह्मणो घृतम्।
66. यत इन्द्रेति चेन्द्रस्य पलाशसमिधो हुनेत्।।23।।
अग्निं दूतमितीर्याग्नेरन्नं वै जुहुयाद्बुधः।
67. नाके सुपर्णमिति च यमस्य जुहुयात्तिलान्।।24।।
लाजैर्वेत्थाहि मन्त्रेण निर्ऋतेर्होममाचरेत्।
68. आज्यं तूदुत्तममिति वरुणस्य हुनेत्क्रमात्।।25।।
वात आवातु मन्त्रेण वायोर्माषान्हुनेत्ततः।।
69. आप्यायस्वेति सोमस्य मुद्गांश्च जुहुयात्ततः।।26।।
मरीचिमात्वा सोमस्येतीशानस्य हुनेत्क्रमात्।
70. ततः स्विष्टकृतं हुत्वा होमशेषं समापयेत्।।27।।
पुनः पूजां ततः कृत्वा ब्रह्मादीनां यथाविधि।
71. तत्तन्मन्त्रेण ब्रह्मादीनुद्वास्य च यथाक्रमम्।।28।।
आचार्य ऋत्विजश्चैव कुम्भाद्भिः सकलैरपि।
यजमानं सपत्नीकं सर्वारिष्टनिवृत्तये।।29।।
72. अब्लिङ्गैः पावमानैश्च स्नापयेयुर्विशेषतः।
यजमानः शुष्कवस्त्रं परिधाय शुभं मतः।।30।।
73. पूर्ववस्त्रं सोत्तरीयमाचार्याय प्रदापयेत्।
ऋत्विगाचार्यपूजां च कुर्याद्वित्तानुसारतः।।31।।
74. कुम्भोपकरणैर्वस्त्रप्रतिमादक्षिणादिभिः।

तुष्टेषु तेषु विप्रेषु सर्वान्कामानवाप्नुयात्।।32।।

75. दशदानं ततः कुर्याद्भूरिदानं च शक्तितः।
अन्यानि चैव दानानि स्वीयवित्तानुसारतः।।33।।

76. ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चादाशीर्वादं च कारयेत्।
छन्दोगहितकामेन गौतमेन महर्षिणा।।34।।

77. षष्ठ्यब्दपूर्तिकी शान्तिः व्याख्याता गृह्यतां बुधैः।
सर्वपीडाप्रशमनी पूर्णायुष्यप्रदायिनी।।35।।

।।इति षष्ठ्यब्दपूर्तिकारिका।।

***

5. पितृमेधकारिका

(1)

1. प्रणम्य गौतमाचार्य्यं सूत्रमाश्रित्य तत्कृतम्।
कारिकासंग्रहं वक्ष्ये सुबोधायाल्पमेधसाम्।।1।।

2. सूत्रश्रैष्ठ्यमनालोच्य मोहादुक्तं मयाऽधुना।
इमं ग्रन्थं समालोच्य विद्वांसः क्षन्तुमर्हथ।।2।।

3. प्रायणकाले पित्रादेः कर्तव्यः पुत्रकादिना।
आदौ सङ्कीर्तनं नाम्नां गीतायाः पठनं तथा।।3।।

4. गङ्गादितीर्थपानं च शालग्रामजलं तथा।
तुलसीधारणं चैव भस्मरुद्राक्षधारणम्।।4।।

5. प्रायश्चित्तं च षड्दानं दशदानमतः परम्।
भूरिदानं च कृत्वाऽथ दर्भेषु शयनं तथा।।5।।

6. स्मृतिभ्रंशात्पूर्वमेव कर्णमन्त्रजपस्तथा।
यात्रादानं च गोदानं उत्क्रान्ते च प्रजापतेः।।6।।

7. हृदयं च जपित्वाऽथ नमस्कारं यमस्य च।
शवस्नानमलङ्कारं आसन्दीकरणं तथा।।7।।

8. कर्ता स्नानमनुज्ञां च प्रेताधानादिकर्म च।
अङ्गुष्ठबन्धनं कृत्वा चासन्द्यां सन्निवेश्य च।।8।।

9. आच्छाद्य वाससा प्रेतं वहेयुर्ज्ञातिबान्धवाः।।

इति प्रथमः खण्डः।।1।।

(2)

अग्निं क्षीरं दधि घृतं तिलदर्भाक्षतान्मधु।

10. उदकुम्भं च परशुं यज्ञपात्राणि गृह्य च।।1।।
गत्वा श्मशानं सङ्कल्प्य शाखया प्रक्रमान्क्रमेत्।

11. गच्छाग्रमध्वनः पूर्वमिति स्थाननिरीक्षणम्।।2।।
अपसर्पतमन्त्रेण स्थलशुद्धिं च शाखया।

12. तिस्रः कर्षूश्च खात्वाऽथ मृत्तिकाग्रहणं तथा।।3।।
तिलतण्डुलमुष्टिं च कर्षूषु क्षेपणं क्रमात्।

13. दर्भास्तीर्य चितां कृत्वा केशश्मश्रुनिकृन्तनम्।।4।।
चितायां प्रेतमारोप्य स्तरणं पात्रसादनम्।

14. आस्यादिसप्तस्थानेषु हिरण्याज्यादिसेचनम्।।5।।
यामं मनोहावायङ्गैः सत्रस्यर्द्धिं च सव्यतः।

15. केशान्प्रकीर्य इत्यादि चाप्रदक्षिणमेव च।।6।।
प्रदक्षिणं च वातास्त इत्येतेनानुमन्त्रणम्।।

इति द्वितीयः खण्डः।।2।।

(3)

16. अथ कर्ता इमा आप इति कुम्भप्रदक्षिणम्।
त्रिः कृत्वा पृष्ठदेशे तु कुम्भप्रहरणं तथा ।।1।।

17. कपालोदकसेकं च तिलप्रक्षेपणं तथा ।
अङ्गुष्ठपाशौ छित्वाऽथ सुरभिर्नामकर्म च।।2।।

18. हस्तप्रक्षालनं सूर्यगोब्राह्मणसुदर्शनम्।
स्वर्णमालभ्य दर्भेण छादयित्वा शवं दहेत्।।3।।

19. तस्मात्वमधिजातोऽसि त्वदयं जायतां पुनः।
असौ स्वर्गाय लोकाय स्वाहामन्त्रमुदीरयन्।।4।।

20. अग्निप्रदानं कृत्वाऽथ सामगानं यथाविधि।
नाके सुपर्णं त्वेषस्ते चाग्ने मृडमहाँ असि।।5।।

21. अगन्म ज्योतिरिति च गीत्वाऽऽहुतिं समापयेत्।
वामदेव्यं तृचे गीत्वा नमो वः पितरो जपेत्।।6।।

22. प्रदक्षिणं वरश्चैव चिताया नावलोकनम्।।

इति तृतीयः खण्डः।।3।।

(4)

भ्रातृपुत्रा अस्य वंशे ये जीवन्त्यादिकं तथा।

23. सगोत्रमैथुनो वाऽपि शाखाग्रहणमेव च।।1।।
मावतरत इत्यादि ब्रह्मदण्डं च वापनम्।

24. स्नात्वा गृहं प्रविश्याथ नग्नं कृत्वा यथाविधि।।2।।
पाषाणस्थापनं चैव वासोदकतिलोदके।

25. तीरे कृत्वा गृहे कुण्डे वासः पिण्डबलिं तथा।।3।।
वृद्धिश्राद्धं नवश्राद्धं कृत्वा पिण्डं जले क्षिपेत्।

26. स्नात्वाऽऽचम्य गृहं प्राप्य हविष्याशी व्रती भवेत्।।4।।

इति चतुर्थः खण्डः।।4।।

(5)

अथ सञ्चयनं व्युष्टे तीरे वासस्तिलोदके।

27. दत्वा वासोदकं पिण्डबलिं वृद्धिं गृहे तथा।।1।।
वासोदकं न कर्तव्यं गृहे सञ्चयनात्परम्।

28. गृहीत्वाऽपूपमुद्गादिलाजानाज्यकुशादिकम्।।2।।
गत्वा श्मशानं सङ्कल्प्य श्मशानाग्निं समिध्य च।

29. ब्रह्मान्तं चरुनिर्वापमिध्माङ्गान्तं यथाविधि।।3।।
भूमौ जपं च प्रपदमाज्यभागो न विद्यते।

30. उपस्तीर्याभिघार्य च स्विष्टकृच्च न विद्यते।।4।।
स्वाहा सोमाय पितृमते मन्त्रैश्च सप्तभिः क्रमात्।
31. सप्ताहुतिं च चरुणा कृत्वा तन्त्रं समापयेत्।।5।।
क्षीरोदकेन चास्थीनि संसिच्याथ यथाक्रमम्।
32. पलाशसन्दंशेनास्थिग्रहणं शिर आदिषु।।6।।
कुम्भे निक्षिप्य धौतीति दध्यादिपूरणं ततः।
33. गङ्गादिपञ्चनद्यास्तु स्मरणं च यथाक्रमम्।।7।।
उपरिष्टाद्धिरण्यं च स्वर्गे लोके महीयते।
34. प्राग्वाहिनीं समारभ्य प्लावयित्वान्तमाचरेत्।।8।।
वृक्षमूले चास्थिकुम्भं निदधाति यथाविधि।।

(6)

35. अथ भस्म समुह्यादि कर्दमाच्छादनं तथा।
वीरणस्तम्बकृत्यं च मृतप्रतिकृतिं तथा।।1।।
36. पुष्पाणि फलभक्षांश्च प्रकीर्य हुतशेषकम्।
प्रेतराजाय नमः प्रेतायेति विनिक्षिपेत्।।2।।
37. ब्राह्मणेभ्यो धनं दत्वा स्नात्वा च गृहमाविशेत्।
दिवसे दिवसे स्नात्वा वासोदकतिलोदके।।3।।
38. दत्वा पिण्डबलिं वृद्धिं नवश्राद्धं यथाविधि।
एवं तु नवमाहान्तं श्रद्धया तु समाचरेत्।।4।।

इति षष्ठः खण्डः।।6।।

(7)

39. दशमेऽहनि सम्प्राप्ते सर्वेषां क्षौरतर्पणम्।
कर्ता वासोदकादीनि वृद्धिश्राद्धान्तमाचरेत्।।1।।
40. बन्धुवर्गादिसहितः प्रभूतबलिमाचरेत्।
पाषाणोद्यापनं चैव कुर्यात्तु गृहतीरयोः।।2।।
41. उपस्थानं शान्तिहोमं दीपग्रहणमेव च।

कर्मण्यन्ते तु संस्कर्ता प्रायश्चित्तं समाचरेत्।।3।।

इति सप्तमः खण्डः।।7।।

(8)

42. एकादशेऽहनि प्रातः स्नानं पुण्याहमेव च।
नवश्राद्धं वृषोत्सर्गमाद्यमासिकमाचरेत्।।1।।

43. अग्नावनुष्ठितं पूर्वमथावृत्ताद्यमासिकम्।
कृत्वा स्नानं च पुण्याहं श्राद्धशेषं विसर्जयेत्।।2।।

44. द्वादशाहादिकालेषु सपिण्डीकरणं स्मृतम्।
तत्पूर्वं सोदकुम्भं च षोडशश्राद्धमाचरेत्।।3।।

45. आकृष्यापि तथा कुर्यादन्नेनामेन वा पुनः।
ततः सपिण्डीकरणमेकोद्दिष्टसहेन वै।।4।।

46. पार्वणेनैव विधिना कुर्यात्सूत्रोक्तमन्त्रकैः।
वरणावाहनादीनि वासोदानान्तमाचरेत्।।5।।

47. निमित्तोद्यापनं चैव पाथेयं च सवस्त्रकम्।
गोदानं दशदानं च षड्दानं भूरिदक्षिणा।।6।।

48. सत्कृत्य ब्राह्मणांस्तेभ्यो दद्याद्वित्तानुसारतः।
अर्घ्यसंयोजनं कृत्वा पिण्डसंयोजनं तथा।।7।।

49. उपस्थायाथाञ्जनादि वामदेव्यान्तमाचरेत्।
न श्रावणं नापि पिण्डप्राशनं स्नानमेव च।।8।।

50. इष्टैः सह श्राद्धशेषभोजनं न निमित्तजम्।
श्वोभूते ग्रहयज्ञं च ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः।।9।।

इति अष्टमः खण्डः।।8।।

(9)

51. दिने दिने सोदकुम्भं मासि मास्यथवा पुनः।
प्रतिमासं मृततिथौ मासिकं च समाचरेत्।।1।।

52. ऊनत्रैपक्षिकं चैव ऊनषाण्मासिकं ततः।

ऊनाब्दिकं च कुर्वीत तत्तत्कालेषु नान्यथा।।2।।

53. मृताहादिसपिण्ड्यन्तं आब्दिकान्तमथापि वा।
अधस्संवेशनादीनि नियमानि समाचरेत्।।3।।

54. पूर्णे वर्षे मृततिथावाब्दिकं च समाचरेत्।
परेद्युर्ग्रहयज्ञं च ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः।।4।।

इति नवमः खण्डः।।9।।

55. अनुग्रहेण च गुरोः हरेश्च कृपया मया।
सूत्रं च सूत्रवृत्तं च समालोच्य यथाविधि।

56. संस्कारादिसपिण्ड्यन्तकारिकासंग्रहः कृतः।।

इति पितृमेधकारिका समाप्ता।।

***

श्रौतकारिकावलिः

6. कल्पकारिका

(क्रतुप्रायश्चित्तकारिका)

1. गणेशं शङ्करं नत्वा कल्पकारमतः परम्।
   प्रायश्चित्तानि वक्ष्येऽहं कर्मवैगुण्य शान्तये।।
2. शार्ङ्गादि परिसाम्नाञ्चेत् प्रस्तोतास्खलितो यदि।
   पुनर्गीत्वा तदाज्येन महाव्याहृतिभिर्हुनेत्।।
3. इष्ट्यङ्गसाम्नां भ्रेषश्चेत् विशेषोऽत्र प्रकल्प्यते।
   विष्णवर्चमुक्त्वा प्रस्तोता जुहुयात्सर्पिषाऽऽहुतिम्।।
4. प्रवर्ग्योद्वासनात्पूर्वं प्रायश्चित्तानि यानि च।
   प्राग्वंशे तानि सर्वाणि कुर्यादाहवनीयके।।
5. प्रवर्ग्योद्वासनादूर्ध्वं प्रायश्चित्तक्रियाम्बुधः।
   वह्नावुत्तरवेद्यां च प्रकुर्यात्स्रुवसर्पिषा।।
6. यजुर्मन्त्रास्तु ये लुप्ताः प्रमादाद्यदि तान्पुनः।
   उद्गातारो जपित्वाऽथ जपेयुर्व्याहृतित्रयम्।।
7. आप्यायने निह्नवने यद्यप्यन्तरिते पुरा।
   सुब्रह्मण्यात्पुनः कुर्युः तदूर्ध्वं तज्जपः स्मृतः।।
8. गायत्र्याः पादविन्यासैः मधुपर्को भवेद्यदि।।
   उद्गाता तु पुनः कुर्यात् व्याहरेत् व्याहृतित्रयम्।।
9. देवता व्यत्यये लोकद्वारसामसु सर्वतः।।
   भ्रेषे च (दोषेषु)कुर्यात्सर्वत्र प्रायश्चित्तविचक्षणः।
10. सर्वप्रायश्चित्तमिति समस्तन्ताहुतिः स्मृता ।।
    आदौ च प्रणवं कृत्वा भूर्भुवस्वरिति स्फुटम्।।
11. अभूदुषेति समये वेद्याक्रमणमुच्यते।
    अकृतं यदि तत्कुर्यात् (र्युः) जपेयुर्व्याहृतीः पुनः।।

12. पुरा यदि प्रमायेन हविर्धानप्रवेशनम्।
प्राग्वसतीवरीभ्यश्चेत् प्रायश्चित्तं ततः स्मृतम्।।

13. तस्मिन्नेव त्रयस्ते तु महाव्याहृति चिन्तनम्।
कुर्युस्तद्दोषशान्त्यर्थं पश्यन्तो वसतीवरीः।।

14. अकृत्वा स्पर्शनं राज्ञः प्रवेशो यदि वा भवेत्।
शकटस्योत्तरं प्राप्य स्पर्शेयुस्ते समन्त्रकम्।।

15. सव्यावृतमकृत्वा तु यदि वेद्यु (चेद्) पवेशनम्।
पुनः सव्यावृतं कृत्वा त्रयाणामुपवेशनम्।।

16. न बहिष्पवमानस्य पुरस्तादृग्जपो यदि।
उद्गातुर्वैष्णवो होमः पूर्वदेशे तु तज्जपः।।

17. एकहस्तेन कुर्याच्चेत् कलशाध्यूहनं यदि।
स्पृशेद्धस्तद्वयेनैव जपित्वा व्याहृतित्रयम्।।

18. सम्मार्जनप्रोहणे द्वे नैव कुर्यात्सदःस्थले।
कुर्याच्चेत् पाणिपादौ च प्रक्षाल्य व्याहृतीर्हुनेत्।।

19. सम्मार्जनप्रोहणयोः व्यत्ययौ भवतो यदि।
तदा कुर्यात् क्रमेणैव व्याहृतित्रयमीरयेत्।।

20. पवित्रप्रासनं त्यक्त्वा कलशं मार्जयेद्यदि।
गायत्रीमन्त्रमुच्चार्य मृदा प्राशनमाचरेत्।।

21. यद्यसम्मार्जनं द्रोणकलशस्य प्रमादतः।
पुनस्सम्मार्जनं कुर्यात् ऋचमुक्त्वा तु वैष्णवीम्।।

22. राजन्यभिषुते यानि कर्म्माणि व्यत्य(यानि)येन वै।
उच्चार्य तु समस्तान्तं भ्रेषे कुर्याद्घृताहुतिम्।।

23. प्रवरास्तु निवर्तेरन् त्रयाणाञ्च मिथस्तदा।
तत्प्रत्यवायशान्त्यर्थं प्रायश्चित्तं यथाक्रमम्।।

24. प्रस्तोता चिन्तयेदग्निमग्निं दूतमितीरयन्।
ब्रूयादोङ्कारमुद्गाता ध्यायेच्चापि बृहस्पतिम्।।

25. प्रतिहर्ता जपित्वा च व्याहृतित्रयमात्मनि।
वायुं ध्यायेदिति प्रोक्तं प्रायश्चित्तं क्रमेण च॥

26. यत्र यत्र न कुर्वन्ति वाचो नियममध्वरे।
तत्र तत्र जपेयुस्ते ऋङ्मन्त्रं विष्णुदैवतम्॥

27. अन्वारम्भणविच्छेदः प्रस्तोतुर्यदिसर्पणे।
ब्रह्मणे च वरं दत्वा पुनर्यज्ञं समाचरेत्॥

28. उद्गातुर्यदि विच्छेदः प्रायश्चित्तं तदा स्मृतम्।
अदक्षिणेन तं यज्ञं पुनः कुर्यात्समाहितः॥

29. प्रतिहर्तुरवच्छेदे दत्वा सर्वस्व दक्षिणाम्।
यागं कुर्यात् पुनश्चैवं उत्तरे सवनद्वये॥

30. ऋग्व्यत्ययेन प्रस्तोता बहिस्तोत्रे करोति चेत्।
आभिर्गीर्भिरिमं मन्त्रं प्रस्तोतोक्त्वा हुनेद्घृतम्॥

31. उद्गातुरप्येवमेतत् स्खलनेषु विधीयते।
चात्वालदर्शनादीनां लोपे व्याहृतिकीर्त्तनम्॥

32. प्रमादादपि लोपः स्याद्यदि प्रवृतहोमयोः।
स्रुवेण घृतमादाय समस्तान्तं समाचरेत्॥

33. सर्वस्तोत्रेष्वन्तरितः पुरस्तादृग्जपो यदि।
महाव्याहृतिविष्ण्वर्च द्वयेन जुहुयाद्घृतम्॥

34. देवतानामुपस्थाने सवनेष्वपि कुण्ठिते।
प्रायश्चित्तविशेषोऽस्ति तत्स्वरुपं प्रकथ्यते॥

35. नर्चेत्प्रातरुपस्थानं समस्तान्ताहुतिक्रिया।
तद्देवताध्यानमात्रं अन्यत्र सवनद्वये॥

36. सर्वत्र सञ्चरभ्रेषे तत्तत्सञ्चारभूमिषु।
सञ्चरेयुर्यज्ञशञ्चतेति मन्त्रमुदीर्य च॥

37. प्रागवच्छादनान्मुञ्चेत् खातामौदुम्बरीं न च।
यदि मञ्चेत्तदा कुर्यात् प्रायश्चित्तञ्च तत्कथम्॥

38. द्युतानेत्यादि मन्त्रादि प्रत्येकं त्रिस्त्रिरभ्यसेत्।
त्रयञ्चाथ समस्तान्तं होमं कुर्याद्विचक्षणः।।

39. औदुम्बरीं नमस्कृत्य भक्त्या नमितकन्धरः।
गायत्रीञ्च जपेत् पश्चात् प्रायश्चित्तमितीदृशम्।।

40. मन्त्रोप(मन्त्रप्र)वेशने लुप्ते सदस्युद्गातृभिस्सदा।
तं मुक्तमन्त्रमुच्चार्य जप्त्वा तु व्याहृतित्रयम्।।

41. अन्योन्योपवहं तत्र न कुर्वन्ति सदःस्थले।
तदा पुनरुपह्वानं सम्यक् कुर्युः परस्परम्।।

42. सवनादौ यदोद्गाता त्वाहृते चमसे यदि।
अवाचयित्वाऽग्निर्मेति चमसं भक्षयेद्यदि।।

43. प्रायश्चित्तं तदा ज्ञेयं एवं तद्भक्षणे बुधैः।
आभिर्गीर्भीस्तु होमः स्यात् एवमुत्तरयोः क्रिया।।

44. इडाकाले निधायाङ्के चमसं यदि तिष्ठति।
महाव्याहृतिमन्त्रेण प्रस्तोता जपमाचरेत्।।

45. असर्वभक्षं(क्षांश्च)चमसं(सान्)निःशेषं भक्षयति चेत्
आप्यायस्वेति चमसे क्षिपेयुः वसतीवरीः।।

46. ततो हुत्वा समस्तान्तं मन्त्रवद्भक्षणं पुनः।
कुर्युः सशेषं चमसं इति प्रोक्तं सुपण्डितैः।।

47. चमसे भक्षणात्प्राक् चेत् केशकीटादि दूषणम्।
ब्रह्मणे यजमानाय दूषणं तन्निवेदयेत्।।

48. प्रायश्चित्ताभ्यनुज्ञानं ताभ्यामादाय कुर्विति।
प्रस्तोतृहस्त आदाय(हस्तादादाय)उद्गाता चमसं ततः

49. तत्रस्थ सोमं सदसो बहिरङ्गुलिमात्रके।
निम्ने निनीय कुर्वीत महाव्याहृतिचिन्तनम्।।

50. तत्र स्वर्णजलं कृत्वा भक्षयेयुरमन्त्रकम्।
इत्येवं गदितः सर्वचमसेष्वप्ययं विधिः।।

51. यदि मन्त्रव्यत्ययेन भक्षयेच्चमसं ततः।
तन्मन्त्रं पुनरुच्चार्य वैष्णवं होममाचरेत्।।

52. चमसाप्यायने लोपो यद्यादिसवने भवेत्।
महाव्याहृतिभिर्होमं आप्यायस्वेति वा ऋचा।।

53. माध्यन्दिने विशेषः स्यात् होमः सन्तेपयेत्यृचा।
आप्यायस्वेति तार्तीये द्विरुक्त्वा होम उच्यते।।

54. स्वरादिहानिः मन्त्राणां यत्र यत्राध्वरे भवेत्।
हवनं तत्र तत्रैव महाव्याहृतिपूर्वकम्।।

55. सुब्रह्मण्यस्वरभ्रेषे विशेषकथनं भवेत्।
आभिर्गीर्भिरित्यमुना महाव्याहृतिभिर्हुनेत्।।

56. आज्येषु व्यत्यये स्तावे प्रस्तुत्यास्त्रं (सं) प्रतीष्यते।
महाव्याहृतिभिर्होमः प्रायश्चित्तं विधीयते।।

57. व्यत्यये पवमाने तु प्रस्तावे च विशेषतः।
आभिर्गीर्भि(रेव)रिति होमः पुनः कार्यं तु संस्मृतेः।।

58. विस्मृतो यत्र यत्र स्यात् प्रस्तावः क्रतुजालके।
तत्र तत्र पुनः कुर्यात् जपेयुर्व्याहृतित्रयम्।।

59. हित्वा स्वभक्तिं प्रस्तोता स्तुते भक्त्यन्तरे सति।
उद्गाता यदि चोद्गायेत् अविचार्य कथं तथा।।

60. पुनः प्रस्तुत्य जुहुयात् स्तोताऽभिर्गीर्भिमन्त्रतः।
उद्गातैवञ्च हर्ता च महाव्याहृतिभिर्हुनेत्।।

61. पवमानेषु सर्वेषु स्वभक्तौ विस्मृते तथा।
पुनर्भक्तिं तदा गीत्वा ऋतं साम ऋचाहुतिः।।

62. पवमानेष्वेतदेव प्रायश्चित्तं विदुर्बुधाः।
आवृत्तिषु विशेषोऽस्ति वक्ष्यते चोत्तरत्र सः।।

63. य(द्यु)द्यद्गायति चोद्गाता स्तोत्र भ्रेषे रथन्तरे।
स्वभक्तिविस्मृतौ कार्यं प्रायश्चित्तं तदेव तु।।

64. स्तोता स्मरति चोद्गातुर्विभक्तेः पूर्वमेव वा(च)।
प्रायश्चित्तं तदा नास्ति तत ऊर्ध्वं विधीयते।।

65. पुनः प्रस्तुत्य च स्तोता जुहुयादाभिरित्यृचा।
प्रतिहर्ता सति भ्रेषे महाव्याहृतिभिर्हुनेत्।।

66. भकारव्यत्ययं(ये)कृत्वा गाता गायति यद्यपि।
स्तोमादीनां पुनःकृत्यं तदाभिर्गीर्भिराहुतिम्।।

67. अन्योन्य भक्तिविन्यासैः गायेयुर्यदि विस्मृताः(तेः)।
स्वभक्तिं पुनरुच्चार्य तदाभिर्गीर्भिराहुतिम्।।

68. इति क्रियाकलापेन प्रायश्चित्तविनिर्णयः।
उद्गातॄणां स्तुतिष्वेवं आवृत्तिषु विधीयते।।

69. उत्तरं कर्म कुर्याच्चेत् यजमानवचो विना।
इदं विष्णुरिति प्रोक्तं जपकर्म समाचरेत्।।

70. बहिस्तुतौ यदि भ्रेषे कुर्याद्गाताऽऽभिराहुतीः।
जुहुयात् स्तोमयोगेऽपि भ्रेषे व्याहृतिभिर्घृतम्।।

71. प्रमादादन्यचमसो भक्षितश्चेत्त्रिभिर्यदि।
चात्वाले वमनं स्नानं समस्तान्ताहुतिस्तदा।।

72. इति गौतमशाण्डिल्य धानञ्जय्यमतं कृतम्।
ब्रह्मणे च वरं दत्वा पुनस्तोमो विधीयते।।

73. उद्गातृभक्षणादूर्ध्वं प्रस्तोता(भक्षितो)स्मर्यते यदि।
तत्प्रायश्चित्तमुद्गातुरेवमेवेतरौ पृथक्।।

74. गानञ्च विश्वरूपाणां अकृत्वा ज्योतिषां तदा।
प्रायश्चित्तन्तु नास्त्येव विकल्पद्वयसम्भवात्।।

75. नाकरणे प्रत्यवायः करणेऽभ्युदयस्तदा।
सूत्रकारस्त्विति प्राह विकल्पद्वयमीदृशम्।।

76. ब्रह्मा स्तुतेति न ब्रूयात् स्तोमयोगात्पुरा यदि।
पवमानेऽपि चावृत्तौ पुनाकरणमिष्यते।।

77. ताम्बूलचर्वणादीनि न कुर्यात् सदसःस्थले।
कुर्याच्चेत् पाणिपादौ च प्रक्षाल्य व्याहृतीर्जपेत्।।

78. ग्रहावेक्षणमुद्गाता यदि चेत् षोडशीग्रहे।
न करोति तदा कुर्यात् तृतीये सवनेऽपि वा।।

79. ऋषिच्छन्दो देवतानां उद्गीथोपासनस्य च।
व्यत्यये स्तोमयोगस्य विष्णुव्याहृतिहोमकौ।।

80. पृष्ठहोमे सति भ्रेषे प्रस्तोता प्रजपेत्तदा।
तन्मन्त्रं पण्डितः सर्वप्रायश्चित्ताहुतिं चरेत्।।

81. उक्तो वा स्वल्पकालेन कथं वृद्धैः पुरादृतः।
प्रायश्चित्तगणस्त्वेष शङ्का स्याद्यदि शङ्किते।।

82. एतच्छङ्का निरासार्थं सम्यक् प्रत्युत्तरं मया।
ग्रन्थान्तरेषु(तु)यत्प्रोक्तं पुरा विद्भिस्तदुच्यते।।

83. प्रायश्चित्तमिति भ्रेषेऽन्यत्रापि सर्वकर्मणाम्।
अवादीद्गौतमो यस्मात् तस्मादुक्तं मयापि च।।

84. सर्वत्र मन्त्रलोपे तु विष्णवर्चाहुतिरित्यलम्।
जगाद शाट्यायनोऽपि तस्मात्सर्वत्र सा स्मृता।।

85. स्तोमस्तोत्रव्यत्ययोऽस्ति यत्रयत्राहुतिक्रिया।
आभिर्गीर्भिस्तु मन्त्रेण शाण्डिल्यवचनं यतः।।

86. स्तोमशब्देन चावृत्ति स्तोत्रमित्युच्यते बुधैः।
पवमानमिति प्रोक्तं स्तोत्रशब्देन चात्र वै।।

87. मन्त्राणां यजुषां लोपे महाव्याहृति चिन्तनम्।
कर्तव्यमिति सर्वत्र धानञ्जय्यो यतोऽब्रवीत्।।

88. केशादिदूषिते सोमे तं त्यक्त्वा हेमवारिणा।
धानञ्जय्यश्च शाण्डिल्यः ऊचतुः पूरयेदिति।।

89. मृत्पात्रेषु प्रभिन्नेषु स्पृष्ट्वा तं भिन्नमध्वरे।
[1]भिद्यतामिति मन्त्रान्तो भूमिरित्यादिको जपः।।

90. विशेषस्तु महावीरे य ऋतेत्यादिकं जपेत्।
[2]माभेमन्त्रं मयेहीत्यन्तं मुद्गातु......तयोः।।

91. यद्यज्ञ उल्बणं गच्छन्नितयेत्सलिलं तदा।
ययोरोजसेत्यमुना मन्त्रेण स्वाहया सह।।

92. यजमानो नष्टचेताः क्रतौ स्कन्ने व्रतादिके।
भवेत्तद्दोषशान्त्यर्थं वरं दद्यात्स ऋत्विजाम्।।

93. वरदानात्ततो होम समस्तान्तेन संजपेत्।
प्रायश्चित्तं तदेव स्यादिति गौतमसम्मतिः।।

94. स्कन्नाद्धाप्यथवाभिन्नान् यदि दोषस्तु सम्भवेत्।
धानञ्जय्योऽब्रवीत् प्रायश्चित्तं तदिति नान्यथा।।

95. यद्यत् स्वाहाकृतं द्रव्यं पतेच्चेत् भूतले द्रवेत्।
जपेत्तत्पात्रमालभ्य देवान्दिवमिति त्रिभिः।।

96. इति तत्पात्रमालभ्य प्रजपेद्वैष्णवीमृचम्।
स्कन्न प्रायश्चित्तमिति कथितं ब्रह्मवित्तमैः।।

97. अज्ञातं यदि न ज्ञातं यदि कर्मभवेत्तदा।
अपिवाऽऽज्ञातमित्येव(ष) मन्त्रहोमस्तयोः स्मृतः।।

98. औदुम्बरी पतेत् भूमौ यद्यपि प्रोच्छ्रिता तदा।
प्रायश्चित्तं प्रकर्तव्यं तद्विधिः प्रोच्यते मया।।

99. अथ तत्पतनं चेत्स्यात् प्राक्बहिस्तोतृकर्मणः।
त्रिभिर्द्युतानमुख्यैस्तां पुनर्मन्त्रैः समुच्छ्रयेत्।।

100. तदूर्ध्वं चेत्पुनस्तुत्वा बाह्यस्तवनमादितः।
तन्मन्त्रैरुच्छ्रयित्वा तां समस्तान्ताहुतिं यजेत्।।

101. पतत्याज्यस्तुतेरूर्ध्वं तां मन्त्रैरुच्छ्रयेत् पुनः।
एवमौदुम्बरी पातप्रायश्चित्तमुदाहृतम्।।

102. पुनश्चोत्थापयित्वा तं यूपेप्यवनिशायिनि।
त्रयो जपेयुर्युगपत् कर्मत्वं (त्वात्) तस्य मन्त्रकम्।।

103. यदि सोमोऽतिरिक्तः स्यात् प्रातःसवनतस्तदा।
मरुत्वतीषु गायत्रं अस्ति सोमेति संस्तुयुः।।

104. तत्पञ्चमं विधायाज्यं त्रिवृत्पञ्चदशे क्रमात्।
मध्यन्दिने तु कर्तव्ये ब्रह्माच्छावाक सामनी।।

105. यदि मध्यन्दिने सोमो याति चेदतिरेकताम्।
स्तुयुर्गौरीवितेनादित्यवतीष्विति वण्महान्।।

106. तत्कृत्वा पञ्चमं पृष्ठं तृतीये सवने स्तुयुः।
आर्भवश्च पदे साम्नां स्थाने च त्रिवृताद्वयम्।।

107. सफं परिप्रधन्वेति प्रथमं सामचार्भवे(वम्)।
पर्यूष्विति द्वितीयं स्यात् श्यावाश्वार्भवमुच्यते।।

108. पवस्व सोम महान् समुद्रेति तृतीयकम्।
आन्धीगवमिति प्रोक्तं इति सामत्रयं बुधैः।।

109. सोमातिरेकसवनात् तृतीयात्त्रिवृता स्तुयुः।
किमित्तेति बृहत्तत्र शिपिविष्टवतीष्वलम्।।

110. सोमेधिके सति प्रातःसवने ह्रासयेत्तदा।
मध्यन्दिने पृष्ठगाने तेन सत्सम्पत्तिष्यते।।

111. एवमेवान्ययोः कुर्युः स्तोत्रसाफल्यसम्पदम्।
शेषं प्रकृतिवत्कर्म सवनेषु त्रिषूच्यते।।

इति प्रायश्चित्तविषये
कल्पकारिकाष्टोत्तरशतं सम्पूर्णम्।।

1. अयं मन्त्रः दृश्यते – भूमिर्भूमिमगान्माता मातरमप्यगात् भूयास्म पुत्रैः पशुभिर्योस्मान् द्वेष्टि सभिद्यतामिति। षड्विंशे)

अयं मन्त्रः दृश्यते- य ऋते चिदभिश्रिषः पुरा जत्रुभ्य आदृतः। सन्धाता सन्धिम्मघवा पुरुवसुर्निष्कर्ता विह्रुतं पुनः। माभेमनिष्या इवेन्द्रत्वदरुणा इव वनानिन प्रजहितानि)

2. मामेरिष्या इवेन्द्रत्वणा इव। वनानि न प्रजहितान्यद्रिवो दूरोधा सोमं महीत्तदाशवोनुहाभक्ष्व वृत्रहन् सकृत् सुतेमहशूरराधसानुस्सोमम्मदेमहीति।

7. क्रतुसंग्रहकारिका

1. अथाऽग्निष्टोमसंस्थेन ज्योतिष्टोमेन याजयेत्।
सपूर्वमृत्विजो वृत्वा देवभूमिविनिश्चये॥
2. दीक्षणीयां निर्वपेत्सः पत्नीसंयाजसंस्थितिः।
कृते प्राचीनवंशेऽथ संस्कारा वपनादयः॥
3. हुत्वा दीक्षाहुतीः कार्या दीक्षा कृष्णाजिनादिभिः।
दीक्षितो नियमैर्युक्तो भवेत् क्षीरव्रतादिभिः॥
4. द्वादशाहं दीक्षितोऽथ भिक्षित्वा द्रव्यमानयेत्।
सोमञ्चर्मण्यवस्थाप्य विवसेत्सोमविक्रयी॥
5. शंख्वन्ता प्रायणीया स्यात् गृह्णीयात्क्रयणीपदम्।
क्रीत्वा सोमं रथे क्षिप्त्वा प्राग्वंशाग्रे समानयेत्॥
6. आतिथ्यां निर्वपेत्सोममासन्द्यामुपसादयेत्।
आतिथ्येष्टिरिडान्तास्यात्तनूनप्त्रमवद्यति॥
7. दीक्षामवान्तरामेति प्रवर्ग्योपसदोः कृतिः।
दिनत्रये तत्कृतं स्याद्वेदिर्मध्यन्दिने भवेत्॥
8. षट्त्रिंशत्पददीर्घैषा प्राग्वंशात्पूर्वतः स्थिता।
प्रातः प्रवर्ग्यमुद्वास्य पश्चादुत्तरवेदितः॥
9. शकटे द्वे हविर्द्धाने हविर्द्धानञ्च मण्डपम्।
पश्चात्सदः तस्य मध्ये निखातौदुम्बरीमिता॥
10. दक्षिणास्यानसोऽधस्ताद्गर्तानुपवरान्खनेत्।
विधाय फलकाम्यान्तानग्रे कुर्यान्मृदा खरम्॥
11. निर्वपेद्धिष्ण्यगानग्नीषोमीयं पशुमाचरेत्।
प्रयुज्योचितपात्राणि दर्शवत्सर्वमाचरेत्॥
12. आज्य आसादिते वेद्या अन्ते यूपं समुच्छ्र्येत्।
यूपस्योच्छ्र्यणादूर्ध्वं समापय्य पशुं ततः॥

13. वैसर्जनानि हुत्वाऽग्निं सोमं ग्रावादि चानयेत्।
हविर्धाने स्थापयित्वा गृह्णीयाद्वसतीवरीः।।

14. प्रयुञ्ज्यात्सोमपात्राणि महारात्रे खरादिषु।
ग्रावस्तुत्स्थापिते सोमे पक्षिणां ध्वनितः पुरा।।

15. स्यात्प्रातरनुवाकार्थमुपाकरणमादरात्।
वसतीवर्यपां प्राप्तौ प्रचारः स्याद्दधिग्रहे।।

16. उपांश्वदाभ्यौ हुत्वाऽथ महाऽभिषवमाचरेत्।
उपांशुमन्तर्यामञ्च हुत्वाऽरिक्तन्तु सादयेत्।।

17. अथेन्द्रवायवं पात्रे गृहीत्वा सादयेत्खरे।
यो मैत्रावरुणन्तत्तु श्रीणाति पयसा ग्रहम्।।

18. शुक्रः श्रुतो हिरण्येन श्रुतो मन्थी तु सक्तुभिः।
गृहीत्वाऽग्रयणं गृह्णात्यतिग्राह्याभिधग्रहान्।।

19. गृहीत्वोक्थ्यं ध्रुवो ग्राह्यः पवमानग्रहास्त्रयः।
पूतभृद्द्रोणकलशो पराश्चाधवनीयकः।।

20. ते बहिष्पवमानाय प्रश्रयन्त्यत्र पञ्च ते।
गृहीत्वाश्विनमाग्नेयपशोः कुर्यादुपाकृतिम्।।

21. सवनीयपुरोडाशैश्चरित्वा ह्यैन्द्रवायवम्।
हुत्वा ग्रहं द्वयोर्मैत्रावरुणाश्विनयोर्हुतिः ।।

22. शुक्रमन्थादिकान् कृत्वा चमसानपि जुह्वति।
संरक्ष्यर्त्तुग्रहेन्द्राग्निसोमप्रतिगरस्ततः।।

23. आज्यस्तोत्रेभ्य ऊर्ध्वं हि प्रातःसवनसंस्थितिः।
माध्यन्दिने तु सवने पुरोडाशाः पशोर्भवेत्।।

24. ग्रहो मरुत्वतीयः स्यात्पवमानेन संस्तुतिः।
दधिघर्म्मे हुते दद्याद्दक्षिणास्ते यथायथम्।।

25. मरुत्वतीयांस्तान् हुत्वा माहेन्द्रेण समाप्यते।
तृतीयसवनारम्भमादित्यग्रहमाचरेत्।।

26. आर्भवेण स्तुवीताथ पश्वङ्गः प्रचरत्ययम्।
सावित्रवैश्वदेवाख्यौ ग्रहौ सौम्यचरुस्तथा।।

27. पात्नीवतग्रहादूर्ध्वं यज्ञायज्ञीयसंस्तवः।
आग्निमारुतशस्त्रं स्याद्दृत्नीयाद्धारियोजनम्।।

28. समाप्ते सवने पश्चात्कुर्यादवभृथन्ततः।
कुर्यादुदयनीयेष्टिं अनुबन्ध्यां यजेत गाम्।।

29. दैनिकानिर्वपेद्देवसुवासापि यजूंष्यथ।
उपोष्य वेदिमाग्नेयमिष्ट्वाऽग्निष्टोमसंस्थितिः।।

।।इति क्रतुसंग्रहकारिका।।

***

8. मन्त्रविनियोगसंग्रहकारिका

1. ब्राह्मणप्रथमाध्याये मन्त्राणां विनियोजनम्।
अत्रादौ वृत उद्गाता महदित्यादिकं जपेत्।।

2. देवो गृहाद्विनिर्गत्य दूरङ्गत्वा विहा जपेत्।
यागभूम्यन्तिके बद्धा पितरः पित्रुपस्थितिम्।।

3. नृम यूपोच्छ्रितौ मन्त्रौ मृदा वेद्याक्रमे जपेत्।
रराटीस्पर्शनं विष्णोर्हविर्द्धानमिषे विशेत्।।

4. नवात्र मन्त्राः प्रथमे खण्डे सम्यगुदीरिताः।
युन बाहून्नयेत्सोमे ऋतस्येत्युपवेशनम्।।

5. ऋतं स्पृशेद्द्रोणकुम्भं वानप्रोहेदमुम्पुरः।
मरुग्रावः स्पृशेदेषु द्रोणस्याध्यूहनं त्विदम्।।

6. मृज्याद्वस्त्राद्वसद्रोणं पविद्रोणे पटं क्षिपेत्।
प्रशु धाराञ्जपेदत्र नवमन्त्रा उदीरताः।।

7. कुर्युः प्रवृतहोमौ द्वौ वेकु सूर्य इति द्वयात्।
तृणाऽपसरणं योऽद्य योम स्याद्युपवेशनम्।।

8. अग्नेरिति स्तोमयोगे ह्यन्नमन्त्रं जपेद्द्वयम्।
स्वामिनं वाचयेच्छ्येनः संवर्चसा प्रेक्ष्य जपेत्।।

9. उपस्थानं नमः सूर्ये दशमन्त्राः इहेरिताः।
अध्वाऽऽदित्ये ह्युपस्थानं सम्राडाहवनीयके।।

10. तुथोऽस्याऽस्तावदेशे स्याच्चात्वाले तु नभोऽसि हि
असंमृष्टोऽसि शामित्रं आग्नीध्रीये विभूरसि।।

11. होतुर्द्धिष्ण्ये वह्निरसि श्वा मैत्रावरुणीयके।
तु ब्राह्मणाच्छंसिके स्यादुशिक् स्यात्पोतृधिष्ण्यके।

12. नेष्टकेङ्गारिरच्छावाकेऽवस्युरसीत्यथ।
शुन्ध्युर्मार्ज्जालीय औदुम्बर्यां स्यादृतधेतिहि।।

13. समुद्रो ब्रह्मणः स्थाने अहिः प्राजहिते भवेत्।
स्याद्गार्हपत्येऽजोसीति सगरा दक्षिणाग्निके।।

14. कव्यो दक्षिणवेद्यन्ते पातमा सर्वसंहतौ।
चतुर्थखण्डे मन्त्राणां विंशतिः समुदीरिता।।

15. ऋतमृज्याद्द्वारबाहू मामेत्यन्तः प्रवेशनम्।
नम इत्युपविश्याथ श्येनश्चमसवीक्षणम्।।

16. इन्दो द्विर्भक्षयेदूर्ध्वो मुखच्छिद्राणि संस्पृशेत्।
सोमरा हृदयस्पर्शः सोमगीर्न्नाभिमामृशेत्।।

17. चमसं पूरयेदाप्याऽवमैरद्यात्रिमन्त्रतः।
दीक्षायै स्तोमभागोऽयं भवेन्मन्त्रचतुष्टयात्।।

18. वायुर्माध्यन्दिने योगो वृषकः स्वामिवाचनम्।
इन्दो भक्षस्तोमयोगः सूर्योयु सवने भवेत्।।

19. स्वरोसि वाचयेदिन्दो कुर्याच्चमसभक्षणम्।
आयुः सौम्यं चरुं पश्ये द्यन्मे तत्र विकल्पयेत्।।

20. येन सौम्यञ्च संस्पृष्ट्वाऽङ्गुलिभ्यामक्षिमार्ज्जनम्।
पञ्चविंशतिमन्त्राः स्युः पञ्चमे खण्ड ईरिताः।।

21. ऐन्द्र मन्त्रे स्तोमभक्षः स्तुतस्य स्वामिवाचनम्।
इष्टसन्धौ स्तोमभक्षमृतस्य स्तोममोचनम्।।

22. सोमेन निर्गमः सूर्यस्योपस्थानं सुभूरिति।
अपां द्वाभ्यामाहुती द्वे धानाभक्षो हारियोजने।।

23. देवाष्टौ शकले होमा अप्सुधौ चमसं स्पृशेत्।
मधु पाणीनुपघ्राय चमसोत्सेचनं शमत्।।

24. कामाभ्यावर्तयेदेतत् ऊर्गस्तदुरसि क्षिपेत्।
प्राणेति मुखसंस्पर्शो दधीति दधि भक्षयेत्।।

25. चतुर्विंशतिमन्त्रास्तु षष्ठे खण्डे प्रकीर्तिताः।
साश्वं रथं दक्षिणार्थं प्रतिगृह्णन्ति चेत्तदा।।

26. मृज्यादश्वमुखान्यश्वतामयुग्मचतुष्टयम्।
रथोर्ध्वस्पर्श आदित्याः वायोश्चर्म्म प्रतिग्रहे।।

27. अस्थि प्रतिग्रहे नक्षसूर्य लोहप्रतिग्रहे।
रथेति दक्षिणे चक्रे स्पर्शो वामेत्यधिष्ठितौ।।

28. बृहदित्युत्तरे चक्रे चक्रावङ्क्ेति संस्पृशेत्।
वैश्वारथं समारोहे गिदेत्यत्र स्थितो जपेत्।।

29. कृशा यच्छेत्सव्यरज्जुं स्पृशेद्दासेति दक्षिणम्।
मन्त्रास्तु सप्तमे खण्डे षोडशेत्यवगम्यताम्।।

30. पुरस्तात्सर्वमन्त्राणां देवस्यत्वेत्यमुञ्जपेत्।
वरुणेत्यादयो मन्त्राः क्रमात्तत्तत्प्रतिग्रहे।।

31. अश्वो गौरप्यजः स्वर्णमजाऽविवसनाङ्गिराः।
उष्ट्रो मृगश्च पुरुषो हस्तिवरा व्रीह्यादयः।।

32. तिला अश्वतरे मन्त्रं क इत्यन्तं जपेदथ।
अष्टादशात्र मन्त्राः स्युरष्टमे खण्ड ईरिताः।।

33. रश्मिरित्यादयस्तोम भागास्तैरनुमन्त्रणम्।
कुर्यात् क्रमेण स्तोत्राणां ते त्रयस्त्रिंश ईरिताः।।

34. वेदार्थस्य प्रकाशेन तमो हार्दन्निवारयन्।
पुनर्थांश्चतुरो दद्यात् विद्यातीर्थमहेश्वरः।।

इति ताण्ड्ये मन्त्रविनियोगसंग्रहकारिका

***

9. श्रौतप्रकाशिका

1.मङ्गलाचरणम्

1. फुल्लपङ्कजदलायतेक्षणं वासवाद्यखिलदेवपूजितम्।
अन्तरायतिमिरप्रभाकरं हस्तिराजमुखमाश्रयेऽनिशम्॥

गुरुनमस्कारः

2. ऐक्याप्त्युपायमनिशं श्रुतिसीमसारं
सौख्येन शिष्यततये समुपादिशन्तः।
तुर्याश्रमे विदधते सफलं जनिं ये
श्रीवालुकेश्वरगुरून् प्रणमाम्यहं तान्॥

3. ये साम्ना सुगजाननं कृतशिरःकम्पं व्यतन्वंश्चिरं
सामाध्यापनतश्च सामगगणे गण्यं व्यधुर्य स्वयम्।
तान्नित्यं कलयन्ननर्घ्यसुगुणान् वेदस्वरूपात्मनः।
सोऽहं नौमि च सामगान् गुरुवरान् श्रीरामनाथाभिधान्।

3.ग्रन्थारम्भः

अथ शब्दार्थः सामान्यत उक्तानां परिभाषादीनां सर्व क्रत्वर्थत्वं च॥

4. [1]**अथेति** मङ्गलार्थस्स्यात्स[2]**र्वक्रत्वर्थ** एव च।
सुब्रह्मण्यायजुः प्रायश्चित्ताम्नायस्तथैव च॥3॥

4.याज्ययाजकलक्षणम्

5. [3]**द्वयस्तो**ऽषण्ड एवं स्यान्नाभेरूर्ध्वमधस्तथा।
समो वा [4]**याज्य** एव स्यादार्षेयादित्रयान्वितः॥4॥

5.सामान्यतः उद्गातृपरिभाषा

6. [5]**एकवचनेनोक्ते** तत्रोद्गाता प्रतीयते।
[6]**अनादिष्टमन्त्रा** येप्यायोष्ट्वासदनादयः॥5॥

1,2. द्रा.श्रौ.सू.1.1.1, 3. द्रा.श्रौ.सू.1.1.7, 4. द्रा.श्रौ.सू.1.1.8, 5. द्रा.श्रौ.सू.1.1.4, 6. द्रा.श्रौ.सू. 1.1.5

6.सुब्रह्मण्यागानप्रकारः

7. [1]प्राङ्मुखत्वमनादेशे सुब्रह्मण्यास्तथैव च।
आतिथ्यान्ते तु (न) [2]सम्प्रैषन्त्र्यहेऽतीत एव च।।6।।

8. [3]एतावदहेत्युक्तिः सुत्याप्राक्कालमुक्तवान्।
सुत्यामिति पृथग्देशात् [4]श्वस्सुत्येति च दर्शनात्।।7।।

9. [5]ब्रह्मा दक्षिणतस्तिष्ठेदाह्वाने सर्वदा तथा।

7.कर्मसंयुक्तद्रव्याणि तत्तत्कर्मकर्तुरेव

[6]दक्षिणावत्सु क्रतुषु शकटँ राजवाहनम्।।8।।

10. अनोयुक्तं प्रदद्याच्च कर्मसंयोगहेतुतः।
कर्मसंयुक्तवस्त्राणां प्रस्तोतुश्च कुशान्वितम्।।9।।

11. औदुम्बर्यर्थमुद्गातुः प्रतिहर्तुर्दशान्वितम्।
पत्न्यावृतं च प्रस्तोतुः वचनादिति निर्णयः।।10।।

8.नामसुब्रह्मण्याह्वानम्

12. द्विपिता वा द्विमाता वा [7]नामग्राहं द्वयोर्द्वयोः।
एवं पितामहादेश्च स्त्रीपुँसोर्ज्येष्ठतस्तथा।।11 ।।

13. पौत्रात्पुत्रोऽनुजः स्याच्चेत्पुत्रवर्गं समाप्य च।
पौत्रस्य ग्रहणं पश्चात्प्रपौत्रस्यैवमेव च।।12।।

14. प्रत्ताया नाम गृह्णीयान्न मृतस्य तथैव च।
न च षण्डस्य गृह्णीयात्पतितस्य न चेष्यते।।13।।

15. न सन्यासिन एव स्यान्न शाक्यादेस्तथैव च।
[8]अमुष्य शब्दे स्त्रीपुँसोस्साधारण्येन चोच्यते।।14।।

9.सुब्रह्मण्यास्वरनिर्णयः

16. [9]उच्चान्तं यज्ञशर्मेति क्रियां यजत इत्यपि।
आद्युदात्तवतीं ब्रूयात्सैव सर्वत्र योज्यते।।15।।

---

1. द्रा.श्रौ.सू.1.2.22, 2. द्रा.श्रौ.सू.1.2.24, 3. द्रा.श्रौ.सू.1.3.4-5, 4.जै.ब्रा.2.80, 5. द्रा.श्रौ.सू.12.1.1, 6. द्रा.श्रौ.सू.1.3.1, 7. द्रा.श्रौ.सू.1.3.19-21, 8. द्रा.श्रौ.सू.1.3.20, 9. द्रा.श्रौ.सू.1.3..23 -27

17. उपेन्द्रादिकषष्ठ्यन्ताश्चान्तोदात्ताः प्रकीर्तिताः।
पुत्रादिप्रथमान्तानां द्वितीयाक्षरमुच्चकम्।।16।।

18. पितृवर्ग समाप्याथ मातृवर्गोऽभिधीयते।
श्रीलक्ष्मीदाया इत्यत्र दाया इत्युन्नतः स्वरः।।17।।

19. मध्ये द्वे अक्षरे उच्चैः जनिष्येति पदस्य च।
पिता इत्यत्र ताकार आद्यान्त्यौ च पितामहे।।18।।

20. प्रपीत्येतौ च होकारः प्रपितामहवाचके।
सुब्रह्मण्यास्वराश्चैवं सूत्रभाष्यादिसम्मताः।।19।।

10.परिसामगानप्रकारः

21. [1]प्रस्तोता परिसामानि गायेन्नादेश एव तु।
[2]तृचेषु त्रिचमापन्नानि त्रिर्गायेदितराणि तु।।20।।

11.प्रवर्ग्यगानप्रकारः

22. [3]प्रवर्ग्यानि च सामानि सूत्रोक्तानि दशाष्ट च।
[4]तत्र शार्ङ्गवदारूढाऽङ्गिरसे च त्रिरभ्यसेत्।।21।।

23. अन्त्यं [5]स्वर्निधनोऽपेतं गायेत्सूत्रकृतां मतम्।
[6]एकान्येव तु शेषाणि होतृलिङ्गोऽपपत्तितः।।22।।

12.धेनुसाम्नि मतभेदेन गाननिर्णयः

24. [7]धेनुसामानि सूत्रोक्तान् विकल्पान् वच्मि सुस्फुटम्।

13.धेनुसाम्नि गौतममतम्

[8]देवतासूच्यमानासु सोपायँ स्तोभमाहरेत्।।23।।

25. पादायात्रानुपायं तु अभ्यसेदुत्तमं पदम्।
यथा पञ्चधने देव्ये तद्वदत्रापि गौतमः।।24।।

---

[1] द्रा.श्रौ.सू.2.1.1, [2] द्रा.श्रौ.सू. 2.1.2, [3] आ.पि..., द्रा.श्रौ.सू. ध.भा.2.1.3,
[4] द्रा.श्रौ.सू.2.1.3, [5] द्रा.श्रौ.सू.2.2.40, [6] द्रा.श्रौ.सू. 2.1.4-5,
[7] द्रा.श्रौ.सू.2.2.29, [8] द्रा.श्रौ.सू.2.2.30

14.तत्रैव शाण्डिल्यमतम्

26. [1]शाण्डिल्यमतेनात्र समस्येत्पददेवते।
अत्राप्युत्तमं पादमभ्यसेदेव पण्डितः।।25।।

27. यथाध्ययनं सामान्ते सोपायस्तोभ एव तु।
देवता चतुष्टये पूर्वं निरुपायस्तोभ एव हि।।26।।

15.तत्रैव वार्षगण्यमतम्

28. [2]अभ्यसेन्नोत्तमं पादं समस्येत्पददेवते।
मरुतां भूतिवच्छेषं वार्षगण्ये समापनम्।।27।।

16.उद्गातुः कृत्यम्

29. अन्नादौ वृत उद्गाता [3]महदित्यादिकं जपेत्।
[4]देवो गृहाद्विनिर्गत्य दूरं गत्वा [5] विहाय च।।28।।

30. यागभूम्यन्तिके [6]बद्धा [7]पितरः पित्र्युपस्थितिम्।
[8]सुत्यायाः पूर्वदिवसे यदि चेद्गमनं भवेत्।।29।।

31. उद्गातुर्लोप एव स्या[9]त्तानूनप्त्रादिकर्मणाम्।
प्रायणीयदिनारभ्य त्रिष्वेवं दिवसेष्वपि।।30।।

32. अग्नीषोमीयपर्यन्तं (गाना) सोमाप्यायननिह्नवाः।

17.मन्त्राणां विनियोगप्रकारः

33. औदुम्बर्युच्छ्रयमन्त्रस्तु [10]द्युतानस्त्वेति कीर्त्यते।।31।।
श्वभ्रे दध्या[11]दायोष्ट्वा अवधाय जपे[12]न्नमः।

34. [13]अध्वर्युणाऽभिहुतायामौदुम्बर्या विशाखयोः।।32।।
हुनेत्तथा [14]घृतेनेति प्राजापत्याञ्च[15]तूत्तराम्।

35. अधस्तात्तु विशाखस्य परिगृह्य जपे[16]द्दिवि।।33।।

---

1. द्रा.श्रौ.सू.2.2.31, 2. द्रा.श्रौ.सू.2.2.32-33, 3. ता.ब्रा.1.1.1, 4.ता.ब्रा.1.1.2, 5.ता.ब्रा.1.1.3, 6.ता.ब्रा.1.1.4, 7. ता.ब्रा.1.1.5, 8. द्रा.श्रौ.सू.1.1.2, 9. द्रा.श्रौ.सू. 14.2.3, 10.ता.ब्रा.6.4.2, 11. ता.ब्रा.6.4.3, 12.ता.ब्रा.6.4.7, 13. द्रा.श्रौ.सू, 2.3.7, 14. द्रा.श्रौ.सू. 2.3.8, 15. द्रा.श्रौ.सू. 2.3.8, 16. द्रा.श्रौ.सू.2.3.13

देवान् दृँहमयि प्रजां अथ मध्ये जपेत्तथा।

36. [1]अन्तरिक्षे वयाँसीति दृँहमयि पशूनिति।।34।।

मूले [2]पृथिव्यामध्यौषधीर्दृँहमयि सजातान्।

37. श्वभ्रेऽवच्छाद्यमानायां [3]दिव्यञ्छद्मासि सन्तनि।।35

यूपोच्छ्रयणवेलायां जपेयु[4]र्नृमण मन्त्रकम्।।

18.प्रस्तोतुः यष्टुश्च कृत्यम्

38. महारात्रे प्रबुध्यैव प्रस्तोताऽग्नीध्र एव च।।36।।

यज्ञसारथिशालाग्नौ यष्टा लोकाहितिस्तथा।

39. उपावहृत्य सोमं तु होतरेहि यदोच्यते।।37।।

19.[5]विश्वरूपागानयाज्ञा प्रतिषेध समाधानानि

यष्टा त्वं विश्वरूपाश्च मम गायेति तं प्रति।

40. प्रत्याचष्टे यदोद्गाता चतुष्टोमातिरेकतः।।38।।

[6]चतुष्टोमादिहेतूक्तिः गायेत्याह च हेतुना।

41. वसतीवर्य इत्यादि नमाम्नामेति चेष्यते।।39।।

20.विश्वरूपागानम्

[7]प्रवेशः पूर्वया द्वारा होतुः पूर्वेण गच्छतः।

42. आर्च्चिकं मनसा यष्टुः स्तोत्रधर्मो न चेष्यते ।।40।।

अनिरुक्तं तथा गायेदुद्गाता च क्रमाश्रितः।

21.वि.गा.गायत्रीगानम्

43. अनिरुक्तस्य गानस्य लक्षणं प्रोच्यतेऽधुना।।41।।

[8]युञ्जेवाचं शतपदोमिति खेऽङ्गुष्ठसंस्थितिः।

44. ओमिति भ्रमणं कृत्वा तर्जन्यां पतनक्रिया।। 42।।

तेनाक्षरेण तत्रैव त्रिष्कर्षो भ्रमणोक्तितः।

45. हिङ्कारयुक्तमाकारं भ्रमित्वा पूर्ववत्पतेत्।।43।।

1.द्रा.श्रौ.सू.2.3.13, 2. द्रा.श्रौ.सू.2.3.14, 3. द्रा.श्रौ.सू.2.3.17, 4. ता.ब्रा.1.1.6, 5.द्रा.श्रौ.सू.2.4.6, 6.द्रा.श्रौ.सू..2.4.6, 7.द्रा.श्रौ.सू.2.4.9, 8.द्रा.श्रौ.सू.ध. 2.4.11,

आकाशे स्वाप्य चोकारं ततश्चाकारमक्षरम्।

46. सतर्जनीमध्यमादि कनिष्ठान्तं प्रसारयेत्।।44।।

22 .वि.गा.पाङ्क्गानम्

[1]युञ्जे वाचं शतपदोमित्युपक्रम्य पूर्ववत्।

47. पादत्रयं च युगपदुत्क्रान्त्ये प्रेङ्खपातनम्।।45।।

पञ्चमस्य प्रदेशिन्यां सकृच्चान्तं हि कर्षणम्।

48. तत्स्थाकारे द्विकर्षत्वं हिं आ इत्यादि पूर्ववत्।।46।।

23. प्रगाथगानम्

[2]प्रगाथीकरणस्यापि यथापूर्वमुपक्रमः।

49. द्वितीयपादे सप्रेंखैः तृतीयेन समापनम्।।47।।

तृतीयं च द्विरभ्यस्य चतुर्थेन समापयेत्।

50. तच्चाप्येवं द्विरभ्यस्य पञ्चमेन समापयेत्।।48।।

[3]गातृयष्ट्रोरनिरुक्तं गानं धन्वीति मन्यते।

24.सुत्यादिवसे सुब्रह्मण्याह्वानम्

51. सुब्रह्मण्यासमाह्वाने ह्यद्य सुत्येति चेष्यते।।49।।

25.प्रस्तोतृप्रतिहर्त्रोः उद्गातारमनुसृत्य उपवेशनम्

[4]युगपत्कर्मसूद्गातुः प्रस्तोता दक्षिणो भवेत्।

26.मन्त्राणां विनियोगः

52. सव्यं च प्रतिहर्ता तु [5]मृदा वेद्याक्रमे जपः।।50।।

रराटीस्पर्शनं [6]विष्णोः [7]हविर्द्धानमिषे विशेत्।

53. [8]युन बाहून्नयेत्सोमे [9]ऋतस्येत्युपवेशनम्।।51।।

[10]ऋत स्पृशेद्द्रोणकुम्भं [11]वान प्रोहेदमुं पुरः।

54. आरभ्याग्नेयमीशानदेशान्तं सप्रदक्षिणम्।।52।।

----

1. द्रा.श्रौ.सू. 2.4.11, 2. द्रा.श्रौ.सू. 2.4.15, 3. द्रा.श्रौ.सू.2.4.12, 4. द्रा.श्रौ.सू.3.1.1, 5. ता.ब्रा.1.1.7, 6.ता.ब्रा.1.1.8, 7.ता.ब्रा.भा.1.1.9, 8.ता.ब्रा.1.2.1, 9.ता.ब्रा.1.2.2, 10.ता.ब्रा.1.2.3. 11.ता.ब्रा.1.2.4

[1]मरुग्रावस्पृशेदेषु द्रोणस्याध्यूहनं [2]त्विदम्।
55. निदध्युः कलशं ग्राव्णां उपरी[3]द मितीर्य च॥53॥
निर्दिशेदमुमित्यत्र यजमानस्य नाम वै।
56. [4]वसवस्त्वेति सम्मृज्याद्गाता कलशदण्डकम्॥54॥
[5]रुद्रास्त्वेति तन्मध्यं [6]आदित्यास्त्वेति तद्बिलम्।
57. उदग्दशमवाङ्नाभि [7]पवि द्रोणेपटं क्षिपेत्॥55॥
उद्गातैव तु धारायां सन्ततायां [8]प्रशुक्रिति।
58. बहिस्तोत्रस्थलं प्रोक्तं वेदेरन्तस्सदोबहिः॥56॥
कुर्युः(शुनां चोपवेशं)(स्वनाम्नोपहवं) [9]त्रयस्सर्वत्र हिंकृतौ।
59. अत्र वाग्यमनं चैव आबहिस्स्तोत्रपूरणात्॥57॥

27.ज्योतिर्गानम्

[10]यदि विश्वरुपाभिगीता कर्तव्यं ज्योतिरत्र वा।
60. अग्निर्ज्योतिस्स्त्रीन् पादान् प्रत्येकं त्रिस्त्रिरभ्यसेत्॥58॥
गायत्रमनिरुक्तं त्रिः गायेद्धन्वीति मन्यते।

28.ज्योतिर्गाने कालविकल्पः

61. [11]यद्वा प्रातरनुवाके सूक्ते होत्रा समापिते॥59॥

29.सर्पणम्

[12]पञ्चर्त्विजः प्रसर्पन्ति यजमानश्श्रुतेर्बलात्।

30 . प्रवृत(त्त)होमादि

62. [13]कुर्युः प्रवृत(त्त)होमौ द्वौ [14]बेकु [15]सूर्य इति क्रमात्॥60॥
[16]ऋचँ सामेति द्वितीया [17]मुद्गातैव तु केवलम्।

---

1. ता.ब्रा.1.2.5, 2. ता.ब्रा.1.2.6, 3. ता.ब्रा.1.2.6, 4.ता.ब्रा.1.2.7, 5. ता.ब्रा.1.2.7, 6.ता.ब्रा. . . ., 7. ता.ब्रा.1.2.8, 8.ता.ब्रा.1.2.9, 9.द्रा.श्रौ.सू 3.3.1, 10. द्रा.श्रौ.सू.2.4.17-23, 11. द्रा.श्रौ.सू. 3.3.12, 12.द्रा.श्रौ.सू.3.3.13, 13. द्रा.श्रौ.सू.3.3.17, 14.ता.ब्रा.1.3.1, 15.ता.ब्रा.1.3.2, 16. द्रा.श्रौ.सू.3.3.19, पू.आ.369, 17. द्रा.श्रौ.सू.भा.3.3.19

31. त्रयाणां मन्त्रवदुपवेशनम्

63. तृणापसरणे [1]**योऽद्य** [2]**यो मे** स्यादुपवेशने।।61।।
[3]**नमस्सखीति** मन्त्रं ते स्तोत्रेष्वावृत्तिषु त्रयः।

32. स्तोमयोगः

64. [4]**स्तोताध्वर्युणा** दत्तं प्रस्तरं प्रतिगृह्य च।।62।।
ब्रह्मन् स्तोष्याम इति प्रयच्छेद्गातृहस्तके।

65. [5]**अग्नेरिति** स्तोमयोगो दक्षिणामुपहृत्य च।।63।।
[6]**अग्नेरुद्गीथ** इत्यादि अन्तमेव **बृहस्पतेः**।

33.बहिष्पवमानम् ([7]धूर्गानेऽनिरुक्तगानम्)

66. हृदि कृत्वार्च्चिकं गानं वाचा गायेदनार्च्चिकम्।।64।।
ओङ्कारेणैव चोद्गीथभक्त्युपक्रमणं भवेत्।

67. सकृत्सकृत्प्रेङ्खयित्वा प्रत्येकं [8]**पवमाक्षरैः**।।65।।
नायेन्दावाइ प्रदेशिन्या मध्याङ्गुल्यवरोहणम्।

68. [9]**अभिदेवाँ** इयेत्यत्र तर्जन्यां कर्षणं सकृत्।।66।।
आकारं तु यकारस्थं द्विःकर्षेदनवानतः।

69. गायेद्गायत्रवत्सर्वं स्तोत्रीये च द्वितीयके।।67।।
[10]**उत्तमं** मध्यमस्यास्य प्रथममुत्तमस्य च।

70. व्यतिषङ्गेन गातव्यं श्रादेयर्वं श्रुतेर्बलात्।।68।।
तृतीये शङ्गनेत्यत्र पवमेतिवदुच्यते।

71. निक्षिप्य तर्जनीस्थाने यशमेत्यक्षरत्रयम्।।69।।
र्वाकारेण समुत्थाय ताईत्यत्रैव सम्पतेत्।

72. [11]**शँ राजेति** क्रमाद्वर्णा नीचोच्चा नीचसंमिताः।।70।।
सँकृष्टो जस्थिताकारो नो इति भ्रमणं ततः।

1.ता.ब्रा.1.3.3, 2. ता.ब्रा.1.3.4, 3. द्रा.श्रौ.सू.4.4.12, 4.द्रा.श्रौ.सू. 3.4.17, 5.ता.ब्रा. 1.3.5, 6.छा.उ.2.22, 7. ष.वि.2.1.25, 8.आ.पि.., 9.उ.आ.1.1.1, 10.ष.विं.2.1.8 11. उ.आ.1.1.3

73. षाधा इत्यक्षरद्वन्द्वमुच्चनीचं क्रमेण तु।।71।।
धान्त्याकारो द्विकर्षेण स्वरेणैव प्रयुज्यते।
74. चतुर्थगाने सम्प्राप्ते परिष्टोभन्तियाकृपा।।72।।
सकृत्सकृदिह प्रेङ्खं चतुर्थाष्टमवर्णयोः।
75. सोमाश्शुक्रेत्यत्र वर्णाः क्रा इति प्रेङ्ख उच्यते।।73।।
गावा इत्यत्र षाधावत्स्वरनिर्णय इष्यते।
76. गाने तु पञ्चमे कुर्यादावाजं वाजियक्रमीत्।।74।।
अत्र सप्ताक्षराण्युच्चैर्नीचैर्मोकार ईयते।
77. मकारवासि(र्सि) नः कुर्यादीकारस्य द्विकर्षणम्।।75।।
सीदन्तो वेत्यत्र दन्तो उच्चँ स्यादक्षरद्वयम्।
78. आकारे च वकारस्थे योजयेत्कर्षणद्वयम्।।76।।
नीचं पर्व नुषेत्येतदाकारे कर्षण(त्र)द्वयम्।
79. षष्ठे च गाने कुर्वीत शङ्ग्मानो दिवाकवे।।77।।
द्विचतुष्षष्ठसप्तमाक्षराण्युच्चवन्ति वै।
80. पवस्वसूरियेत्यत्र सूरीत्युच्चमुदीरयेत्।। 78।।
(आशे यकारसंस्थस्य)
आकारे च यकारस्थे कर्षणद्वयमुच्यते।
81. यथा तत्सवितुर्गाने शुद्धगायत्रमीरितम्।।79।।
सप्तमे चाष्टमे चाऽपि तथैवार्च्चिकमूह्यते।
82. नवमे प्रस्तुते गाने ह्यस्तङ्गाव इतीहतु।।80।।
प्रत्यक्षरं [1]प्रेङ्खभूतं कुर्यात्स्पष्टतरं बुधः।
83. गायेत्तदनवानेन प्रदेशिन्यां न धेनवः।।81।।
तृतीयाक्षरमत्रोच्चं विदध्यात्पण्डितोत्तमः।
84. अग्मन्नृतस्य योऽत्रेति नीचमाद्यन्तमक्षरम्।।82।।
यकारस्थितमोकारं कर्षयेद्विर्विचक्षणः।

----
1. आ.पि

34.धूर्गाने अनिरुक्तगानप्रकारः

85. एतेष्वार्च्चिकगानेषु यावत्यः स्वरकल्पनाः।।83।।
अनिरुक्तेऽपि ताः कुर्यात्प्रणवेनास्तविन्दुना।

86. धूर्गाने प्रथमे कुर्याद[1]हिङ्कारत्वमेव च।।84।।
व्यक्तीकुर्यात्तृतीये तु [2]षाधा इत्यक्षरद्वयम्।

87. [3]सोमाश्शुक्राः चतुर्थे तु द्योतयेदक्षराणि च ।।85।।
धूर्गाने [4]पञ्चमे पादं द्वितीयं च [5]नुषेत्यपि।

88. अस्तङ्गाव इति स्थाने [6]भकाराणां चतुष्टयम्।।86।।
अत्रा[7]प्याकाररहितं हिङ्कारं भ्रमयेत्सकृत्।

35.स्तोत्राङ्गजपः

89. आदौ बहिः स्तुते[8]रुर्ध्वं [9]ह्यन्नमन्नं जपेद्वयम्।।87।।

36.यजमानवाचनं मन्त्रविनियोगश्च

स्वामिनं वाचये[10]च्छ्येनः यष्टुरभ्यर्थनं ततः।

90. उपह्वयध्वं गातारः [11]संवर्चसा प्रेक्ष्य जपेत्।।88।।
उपस्थानं [12]नमस्सूर्ये गाता प्रास्येत्तृणं [13]यदि।

91. [14]समुद्रं वोदनयनमयुग्मानि पदानि च।।89।।

37. धिष्ण्योपस्थानम्

[15]अध्वादित्येह्युपस्थानं [16]सम्राट् आहवनीयके।

92. [17]तुथोऽस्यास्तावदेशे स्याच्चात्वाले [18]नभोऽसि हि।।90।।
[19]असंमृष्टोऽसि शामित्रं आग्नीध्रीये [20]विभूरसि।

93. होतुर्धिष्ण्ये [21]वह्निरसि [22]श्वा मैत्रावरुणीयके।।91।।
[23]तु ब्राह्मणाच्छँसिके स्यात् [24]उशिक्स्यात्पोतृधिष्ण्यके।

94. नेष्ट्रकेऽ[25]ङ्गारिरच्छावाककेऽवस्युरसीत्यथ।।92।।

1.द्रा.श्रौ.सू.3.4.23, 2.3.4,5.ष.वि.2.1, 6.द्रा.श्रौ.सू.3.4.24, 7. द्रा.श्रौ.सू.3.4.23
8.ता.ब्रा.भा.1.3.6, 9.ता.ब्रा.1.3.7, 10.ता.ब्रा.1.3.8, 11.ता.ब्रा.1.3.9, 12. ता.ब्रा.1.3.10,
13.द्रा.श्रौ.सू.4.1.7, 14. द्रा.श्रौ.सू.4.1.8, 15 तः 25.ता.ब्रा.1.4.1 तः 1.4.15

[1]शुन्ध्युर्मार्जालीय औदुम्बर्या [2]ऋतधेति हि।
95. [3]समुद्रो ब्रह्मणस्स्थाने [4]अहिः प्राजहिते भवेत्।।93।।
स्याद्गार्हप(त्यो) त्येऽ [5]जोऽसीति [6]सगरा दक्षिणाग्निके।
96. [7]कव्यो दक्षिणवेद्यन्ते [8]पातमा सर्वसँहतौ।।94।।
[9]मा मा सन्ता प्रवेशश्च [10]नम इत्युपवेशनम्।

38.चमसभक्षणप्रकारः

97. निमित्तभक्षणादूर्ध्वं समाख्याभक्षणक्षणे।।95।।
प्रकुर्वीरंश्च सर्वत्र [11]श्येनः चमसवीक्षणम्।
98. आप्यायनीयं चमसं [12]इन्दो द्विर्भक्षयेद्बुधः।।96।।
आप्यायनोक्ति तस्योक्तं सर्वभक्षणमेव तु।
99. [13]ऊर्ध्वस्सप्तऋषीत्यादि मुखच्छिद्राणि सँस्पृशेत्।।97।।
[14]सोमरा हृदयस्पर्शः [15]सोमगीर्नाभिमामृशेत्।
100. चमसं पूरये[16]दाप्याऽ[17]वमैर्नाराशभक्षणम्।।98।।
[18]दीक्षायै स्तोमभागोऽयं भवे[19]न्मन्त्रचतुष्टयात्।

39.कुशाविधानम्

101. प्राक्सँस्थ उदगग्र विष्टावः प्रथमः स्मृतः।।99।।
तं पश्चिमेन प्रागग्र उदक्सँस्थश्च मध्यमः।
102. प्रत्यक्सँस्थोऽदगग्रः पश्चिमेनैव तं प्रति।।100।।
पर्यायाश्चैवमेव स्युः [20]प्रस्तावान्ते कुशाविधिः।
103. [21]पर्यायादिषु हिङ्कारं स्तुवीरँस्ते त्रयोऽपि हि।।101।।
[22]प्रस्तुत्योत्तमांस्तोतैषा शँसिष्यन्तं वचोऽब्रवीत्।

40.यजमानवाचने स्तोममोचनमन्त्रश्च

104. [23]स्तुतस्य स्तुतमसीति वाचनं यष्टुरेव च।102।।
स्तोममोचनमन्त्रस्तु [24]ऋतस्यत्वा भवेत्तथा।

----

1 तः 8 . ता.ब्रा.1.4.1-15, 9 तः 18.ता.ब्रा.1.5.1-10, 19.द्रा.श्रौ.सू.5.1.26, 20.द्रा.श्रौ.सू.5.2.9
21. द्रा.श्रौ.सू.5.2.17, 22. द्रा.श्रौ.सू.5.2.18, 23. द्रा.श्रौ.सू.5.2.19, 24. द्रा.श्रौ.सू.6.1.4

41.आज्यस्तोत्राणि तद्गानप्रकारश्च

105. [1]**अग्न आ याहि** दाविद्यु आनो मित्राभिते तथा॥103॥
स नः पवस्ववदायाहि इन्द्राग्नी हिन्ववत्तथा।
106. आज्याद्यं तु दविद्युवदानोमित्राभिते तथा॥104॥
(स नः पवस्ववदायाहि इन्द्राग्नी हिन्ववत्तथा)।

42.माध्यन्दिनँ सवनम्

107. लोकद्वारं तथाग्नीध्रे वेद्याक्रमणं [2]**मृदाशिथि**॥105॥
[3]**पातमाग्नय** इत्यादि प्रविश्योपहवस्तथा।
108. **गच्छेत्स्तोता**[4] हविर्धानं रराट्यालम्भनादयः॥106॥
प्रस्तोता तैश्च सर्पेत ऋग्जपादीनि चेष्यते।
(जपोग्निः प्रतिनेष्यते)

43.दक्षिणाप्रतिग्रहमन्त्रोहः

109. शतानां द्वादशान्तानां दत्तानां ग्रहणे विधिः॥107॥
[5]**देवस्यत्वेति** सर्वेषां [6]**पुरस्ताज्जप** उच्यते।
110. [7]**वरुणत्स्वेति** [8]**क इदमित्यास्मिन्मन्त्रयुग्मके**॥108॥
[9]**त्वादेवि** दक्षिणस्थाने [10]**वो देव्यो** दक्षिणा इति।
111. [11]**गांतयेत्यत्र** गास्ताभिः शेषं प्रकृतिवद्भवेत्॥109॥
इमा इतीदमित्यत्र त्वा स्थले व इतीरयेत्।
112. [12]**नयत्वित्यत्र देवीत्येतयोर्बहुवा(चि)चकम्**॥110॥
[13]**तत्ते** इत्यत्र **तास्ता** इत्यन्यत्प्रकृतमुच्यते।
113. गवादिद्रव्यजातीनां एवमूहो विधीयते॥111॥

---

1. द्रा.श्रौ.सू.21.4.11, 2.ता.ब्रा.1.1.7, 3. ता.ब्रा.1.4.15, 4. द्रा.श्रौ.सू.5.3.7, 5. ता.ब्रा.1.8.1, 6. द्रा.श्रौ.सू.5.3.14, 7.ता.ब्रा.1.8.2, 8. ता.ब्रा.1.8.17, 9. द्रा.श्रौ.सू.5.3.21, 10. द्रा.श्रौ.सू.भा.5.3.21, 11. ता.ब्रा.1.8.3, 12.ता.ब्रा.1.8.3, 13.ता.ब्रा.1.8.17

44.माध्यन्दिनपवमानस्तोत्रम्

गाहीयरौरवे चैव यौधाजयमथौशनम्।
114. माध्यन्दिनाभिधानं च पवमानमितीरितम्।।112।।

45.तत्र हिङ्कारप्रकारः

[1]साम्ने साम्ने च हिंकुर्युः अग्नेरित्यादिकं भवेत्।

46.पृष्ठस्तोत्राणि

115. रथन्तरं वामदेव्यं नौधसं च ततः परम्।।112।।
कालेयं चेति पृष्ठानि चत्वारि कथितानि वै।

47.स्तोमयोगः यजमानवाचनं च

116. [2]वायुर्मध्यन्दिने योगः [3]वृषकः स्वामिवाचनम्।। 114।।

तृतीयसवनम्

48.मन्त्रविनियोगादिकथनम्

अपरेणोत्तरां वेदिं लोकद्वारद्वयं तथा।
117. मृदाशिषातमेव स्यात् ऋतस्याद्युपहूय च।। 115।।
आदित्ये च हृते [4]हर्तुः हविर्द्धानप्रवेशनम्।
118. विष्णोश्शिरोसीष ऊर्ज वसवस्त्वा त्रयं [5]भृति।। 116।।
पवित्रं ते च तस्मिन्त्स्यात् न द्रोणे न प्रशुक्रणम्।
119. होमादि पूर्ववत्कार्यं प्रतिहर्तूर्ध्वचाहुतिः।। 117।।
माध्यन्दिने तृतीये च स्तोता हर्ता च केवलम्।
120. होमादिसर्पणं चैव कुर्यात्तावेव केन च।। 118।।

49.आर्भवपवमानस्तोत्रम्

स हितं च तृचे गायेत् [6]एकर्चे सफपौष्कले।
121. श्यावाश्वान्धीगवकावमार्भवे पवमानके।। 119।।

----

1. द्रा.श्रौ.सू.4.1.5, 2.ता.ब्रा.1.5.11, द्रा.श्रौ.सू.4.1.1, 3. द्रा.श्रौ.सू.1.4.6, ता.ब्रा.1.5.12,
4. द्रा.श्रौ.सू..5.3.8, 5. द्रा.श्रौ.सू.3.4.37, 6. द्रा.श्रौ.सू. 16.3.24

50.स्तोमयोगचमसभक्षणयजमानवाचनानि

तृतीये च स्तोमयोगः [1]सूर्योयु सवने भवेत्।
122. [2]स्वरोऽसिवाचये[3]दिन्दो कुर्याच्चमसभक्षणम्।। 120।।

51.सौम्यचर्ववेक्षणादि

[4]आयुस्सौम्यं चरुं पश्ये[5]द्यन्मे तत्र विकल्प्यते।
123. [6]येन सौम्यं च सँस्पृष्ट्वाऽङ्गुलिभ्यामक्षिमार्जनम्।।121।।

52.अग्निष्टोमस्तोत्रं तद्धर्माश्च

सर्वे प्रावृतशिरस्काः स्वासु यज्ञीयमेव हि।
124. अग्निष्टोमगानं वै एकविँशो भवेदिह।। 122।।
[7]उत्तमायामनभ्यासं के [8]चिदभ्याससूचिरे।
125. [9]प्रतिहिङ्कारकालं च पत्न्यवेक्षणमाचरेत्।।123।।
[10]निनयेद्दक्षिणोरुं च पत्नी तु निधनक्षणे।
126. [11]स्तोत्रीयायां तृतीयायां प्रस्तुतायां तु तज्जलम्।।124।।
निश्शेषं निनयेदूरौ पत्नी स्वीये तु दक्षिणे।
127. भक्षणं नाप्यायनं च [12]ऋतस्य स्तोममोचनम्।।125।।

53.क्रतुसमाप्तौ यजमानवाचनम्

[13]तन्तवेमा ज्योतिषा श्रीदत्तशर्मन्नितीरयेत्।
128. तदनन्तर[14]मनुमातनुहि ज्योतिषेति च।। 126।।
ज्येष्ठानुक्रमशः पुत्रान्यजमानं प्रवाचयेत्।
129. [15]जनिष्यमाणा इत्यत्र [16]तनुतेति विशेषयेत्।।127।।

1.ता.ब्रा.1.5.14, द्रा.श्रौ.सू.4.1.1, 2. ता.ब्रा.1.5.15, द्रा.श्रौ.सू.4.1.6, 3.ता.ब्रा.1.5.16, 4.ता.ब्रा.1.5.17, 5. ता.ब्रा.1.5.18, 6. ता.ब्रा.1.5.19, 7. द्रा.श्रौ.सू.6.2.18, 8. द्रा.श्रौ.सू. 6.2.19, 9. द्रा.श्रौ.सू.6.2.15, 10. द्रा.श्रौ.सू.6.2.16-17, 11. द्रा.श्रौ.सू.6.2.17, 12.ता.ब्रा.1.6.5, 13. द्रा.श्रौ.सू.6.3.8, 14. द्रा.श्रौ.सू.6.3. 9, 15.द्रा.श्रौ.सू.6.3.10, 16. द्रा.श्रौ.सू.6.3.10.

54.निर्गमादि

[1]सोमे हि निर्गमस्सूर्यस्योपस्थानँ [2]सुभूरिति।
130. [3]अपां द्वाभ्यामाहुती द्वे धानाभक्षो [4]हारियोजने।। 128।।
[5]देवाष्टौ शकलहोमो [6]अप्सुधौ चमसं स्पृशेत्।
131. [7]मधुपाणीनुपाध्राय चमसोत्सेचनं [8]शमत्।। 129।।
[9]कामाभ्यावर्तयेदेत [10]दुर्गस्तदुरसि क्षिपेत्।
132. [11]प्राणेति मुखसँस्पर्शो [12]दधीति दधि भक्षयेत्।।130।।

55.अवभृथसामादिकथनम्

गायेत्सामावभृथं [13]स्तोभेत्पदपदाय च।
133. [14]उपेयुर्निधनँ सर्वेजपे[15]दवभृथो [16]द्वयम्।। 131।।
कृत्वाऽदित्यमुपस्थानं अस्ते त्वाहवनीयकम्।
134. कुर्यु[17]स्समित्रयँ [18]होममुपतिष्ठेरन्तमेव च।। 132।।
[19]अपो अद्याहवनीयं प्रस्तोता उपविश्य वै।
135. उदयनीयायामिष्टौ तू [20]द्वद्धार्गमचोदसम्।। 133।।
स्वारं पयः पयस्यायां आग्नीध्रमण्टपे स्थितः।
136. स्वारं चतुर्थं त्रिर्गायेदामिक्षेष्टौ प्रधानके।। 134।।

56.उदवसनीयासामकथनम्

उदवसनीयापूर्णाहुतौ [21]वँशीयमेव च।
137. तृचे तु गायेत्प्रस्तोता अग्निष्टोम इतीरितः।। 135।।

अग्निष्टोमप्रकाशिका समाप्ता।।

***

---

1 तः 8. ता.ब्रा.1.6.6 -13, 9. ता.ब्रा.1.6.14, 10. ता.ब्रा.1.6.15,
11. ता.ब्रा.1.6.16, 12. ता.ब्रा.1.6.17. 13. द्रा.श्रौ.सू. 2.2.2,
14. द्रा.श्रौ.सू.6.4.3, 15. द्रा.श्रौ.सू..6.4.8, 16. द्रा.श्रौ.सू.6.4.9,
17. द्रा.श्रौ.सू.6.4.11, 18. द्रा.श्रौ.सू.6.4.13, 19. द्रा.श्रौ.सू.6.4.13
20. द्रा.श्रौ.सू.2.2.23 21. द्रा.श्रौ.सू.2.2.52

57.विकृतिसाधारणधर्माः

[1]**अग्निष्टोमादन्ययज्ञक्रतुष्वस्ति न धूर्विधिः।**
138. आज्येष्वपि न धूर्गानं [2]**न विश्वज्योतिषां** क्रिया।। 136।।
[3]**अहिङ्कारत्वमात्रञ्च** भकाराणाञ्चतुष्टयम्।
139. सर्वेष्वपि च यज्ञेषु द्वयमेतत्प्रशस्यते।। 137।।

58.अत्यग्निष्टोमः

अत्यग्निष्टोममुख्यानां क्रतूनां प्रतिपन्नुतौ।
140. यज्ञीयान्ते भक्षयित्वा चमसन्तदनन्तरम्।।138।।
षोडशिग्रहमीक्षेत [4]**यस्मादन्य** इतीरयन्।
141. [5]**निर्गमश्च** समस्तोपस्थानं प्रवेशनादिकम्।।139।।
त्रीण्येतान्यपि न सन्त्यत्र षोडश्यादि क्रतुष्वपि।
142. [6]**समयाविषितो** धर्मो न कर्तव्योऽत्र कर्मणि।। 140।।
षोडशिन्येव कर्तव्यः क्रत्वन्तरयुतो न चेत्।
143. [7]**षोडशिस्तोत्रसमये** न्यसेत्कृष्णं तुरङ्गमम्।। 141।।
पूर्वस्यां सदसो द्वारि पश्चिमायामथाऽपि वा।
144. कृष्णाभावेऽपि यः कश्चिद्गौरश्वाभाव एव वा।। 142।।
छागो वा तदभावेऽपि प्रयोक्तव्यो विपश्चिता।
145. वितस्येन्द्रजुषस्वेति [8]**स्वराडनुष्टुबुच्यते**।। 143।।
गौरीवितेन्द्रा[9]**विन्द्रश्च** बृहच्चेति विधायकम्।
146. त्रयीविद्येत्युपस्थानं स्तोमसङ्ख्या तु पूर्ववत्।। 144।।
[10]**तृणग्रहणमुद्गाता** सहिरण्यन्तु धारयेत्।
147. धारयेयुस्तद्धिरण्यं त्रयोपि स्वस्वभक्तिषु।। 145।।
सर्वे निधनवेलायां स्पृशेयुर्गातृहस्तगम्।

1.द्रा.श्रौ.सू.21.3.14. 2. द्रा.श्रौ.सू.2.4.23, 3. द्रा.श्रौ.सू.ध. 3.4.23,
4.ता.ब्रा.12.13.32, 5. द्रा.श्रौ.सू.5.3.5, 6. द्रा.श्रौ.सू.7.1.14,
7. द्रा.श्रौ.सू. 7.1.14, 8. उप.नि.2.2, 9.ता.ब्रा.12.13.1, 10. ता.ब्रा.12.13.25

148. [1]विशेषो भक्षणमन्त्र[2]स्त्वैन्द्रँ सह इतीरितः।।146।।
नाप्यायनं तस्य कुर्युः ततोऽश्वञ्च हिरण्मयम्।
149. [3]प्रदद्याद्दक्षिणावत्सु गात्रे सत्रेतरेषु तु।। 147।।

59.उक्थ्यः

अथोक्थसँस्थां वक्ष्येऽहं तृतीयाद्य [4]क्रमागताम्।
150. यज्ञीयानन्तरं [5]साकमश्वं [6]सौभरमेव च।। 148।।
[7]नार्मेधञ्चेति चोक्थ्यानि कुशाक्लृप्तिर्यथा पुरा।

60.प्रथमोक्थ्यस्तोत्रम्

151. एह्यूषु साकमश्वस्य प्रथमोक्थ्यस्य कर्मणः।।149।।
ऋषिश्शुनश्शेपोऽग्निस्तु देवता परिकीर्तिता।
152. छन्दो गायत्री देवा वा ब्राह्मणञ्च विधायकम्।।150।।

61.द्वितीयोक्थ्यस्तोत्रम्

वयमुत्वामपूर्व्येति द्वितीयोक्थ्यस्य निर्णयः।
153. त्रिष्टुप्सु भर इन्द्रश्च पूर्वव(त्साम)द्ध्यानमुच्यते।।151।।

62.तृतीयोक्थ्यस्तोत्रम्

अधाहीन्द्रेति नार्मेधं तृतीयोक्थ्यस्य कर्मणः।
154. ऋषिर्नृमेधाश्चेन्द्रस्तु देवता चेति कीर्त्तिता।।152।।

63.भक्षणे विशेषः

आहृते चमसेऽवेक्ष्य [8]जगच्छन्दस्क भक्षणम्।
155. न तस्याप्यायनं कुर्युः त्रिष्वेतेष्वपि सामसु।। 153।।

64.षोडशी

अथ षोडशिनः कर्म सर्वं पूर्ववदुच्यते।

----

1. द्रा.श्रौ.सू.7.1.23, 2.ता.ब्रा.1.6.1, 3. द्रा.श्रौ.सू. 7.1.16,
4. द्रा.श्रौ.सू. 13. 4 17, 5. ता.ब्रा.8.8.5, 6. ता.ब्रा.8.8.9,
7. ता.ब्रा.8.8.21, 8. ता.ब्रा.1.5.16, द्रा.श्रौ.सू.ध. 5.1.5

65.स्तोत्रधर्माः

156. उक्थ्यान्ते षोडशिस्तोत्रं तस्य निर्गमनादिकम्।। 154।।
[1]मन्द्रस्वरेण पर्यायः प्रथमो मण्डलेऽरुणे।

157. मध्येनास्ते मध्यमश्च तृतीयश्चोच्चकैर्निशि।। 155।।
समयाविषितो ह्येष विशेषेणात्र कीर्तितः।

158. हिरण्यधारणादिश्च सर्वं पूर्ववदुच्यते।। 156।।
समयाविषितेऽतीते दैवाद्वा मानुषाद्यदि।

159. कार्यमुच्चस्वरेणैव षोडशिस्तोत्रकर्मणि।।157।।

66.सँस्था वाजपेयः

अथ सँस्थावाजपेयः षोडश्यन्तस्तु पूर्ववत्।

160. भक्षणञ्च समस्तोपस्थानं कुर्युस्ततः परम्।। 158।।
स्तुवीरन् [2]स्वासु बृहता त्रिपञ्चस्तोमसंख्यया।

161. [3]किमित्तेति बृहत्साम्ना स्तोत्रं सप्तदशेन वा।। 159।।

67.स्तोत्रे ऋष्यादिकथनम्

अस्य स्वासु बृहत्साम्नो बृहतीककुबुत्तरा।

162. भरद्वाज इतीन्द्रश्चोद्यन् हिङ्कार उपासनम्।। 160।।

68.प्रस्तावादि भक्तिप्रदर्शनम्

[4]एकारान्तस्स्तावभागो बृहत्यत्र सुनिश्चितः।

163. [5]तुवङ्काष्ठेतिसस्तोभो हारान्तो हसितीरितः।।161।।

69.स्तोत्रान्तरकथनम्

शिपिविष्टवती चेत्स्यात् त्रैष्टुभच्छन्द उच्यते।

164. स्वासुवद्भागकल्पश्च भक्षणं [6]त्रिष्टुवेतयोः।। 162।।

----

1. द्रा.श्रौ.सू.7.1.12-15   2. द्रा.श्रौ.सू.24.4.12,   3.ता.ब्रा.18.7.13,
4. प्रस्ता.सू.7   5. प्रति.सू.11.8 ,   6.द्रा.श्रौ.सू.7.1.24

70.तत्रैव कश्चन विशेषः

बृहत्युपद्रवे वर्णं द्वितीयं वृद्धमुच्चरेत्।
165. द्व्यष्टकासु कुशास्वेव [1]ह्रस्वमन्त्यकुशाविधौ।।163।।

71.क्रत्वन्तरवाजपेयः

अथ क्रत्वन्तरं वक्ष्ये वाजपेयँ सविस्तरम्।
166. तस्य षोडशिवत्कल्पः सर्वस्सप्तदशो भवेत्।।164।।

72. तत्र सुब्रह्मण्याह्वाने विशेषः

[2]इन्द्रागच्छेत्यत्र शक्रागच्छेत्यूहो विधीयते।
167. [3]देवा ब्रह्माण इत्यत्र विश्वे ब्रह्माण इत्यपि।।165।।
इत्येतावान्विशेषोऽस्ति सुब्रह्मण्यस्य कर्मणि।
168. नामग्राहेप्येवमूहः सर्वमन्यत्पुरा यथा।।166।।

73.तत्र बहिष्पवमानम्

उपास्मै दविद्युततीत्येते असृग्रमिन्दवः।
169. तन्त्वा नृपवमानस्यते कवेति बहिस्तुतिः।।167।।

74.बहिस्तुतौ विशेषकथनम्

तन्त्वानृम्णेति पञ्चर्च(र्चं) इतरे च तृचास्स्मृताः।
170. ऋधक्सोमेत्यत्र कार्यं ऋधगिन्दोसुवस्तये।।168।।
ऋग्जपे नाऽनिरुक्तत्वं [4]भाष्यकारेण वर्णितम्।

75.क्रत्वन्तर वाजपेये आज्यानि

171. होता देवस्तथा तानश्शक्तं सुरूपकृत्तथा।।169।।
तमीडिष्वेति च प्रोक्तं आज्यानान्तु चतुष्टयम्।
172. [5]देवशब्दे यज्ञशब्दं विदध्यात्प्रथमाज्यके।।170।।

1.नि.सू.2.9, 2. द्रा.श्रौ.सू.1.4.9,10.ष.विं.1.1.10 3. द्रा.श्रौ.सू.1.4.10,
4. ता.ब्रा.18.6.7 5. द्रा.श्रौ.सू.भा.1.4.9

[1]**इन्द्रमग्निमिति** स्थाने शक्रं वह्निञ्चतुर्थके।
173. एतेषामपि चाज्यानां पूर्ववदृषिदेवते।। 171।।
पवमानस्य चाप्याद्यसवनेऽत्र च पूर्ववत्।

76.क्रत्वन्तरे वाजपेये माध्यन्दिनपवमानः

174. अस्य प्रत्नामनुद्युतमिति गायत्र हीयवे।। 172।।
परीतोषिमन्तँ [2]**स्यादेकर्च्चकरणे** तथा।
175. दैर्घन्तिसृषु ज्ञेयँ स्यात्तिसृषु स्थानमेव च।। 173।।
[3]**श्रीणन्त** इति यौधायँ सोमाः पार्थमनन्तरम्।
176. मध्यमं पवमानँ स्यादिति छन्दाँसि पूर्ववत्।। 174।।

77.तत्र ऋष्यादिकथनम्

ऋषयो देवताश्चापि वक्ष्यन्ते ह्येतदन्तरम्।
177. अग्निंदीर्घश्रवामन्तदैर्घश्रवसयोःक्रमात्।। 175।।
स्थानस्य वरुणः प्रोक्तो यौधाजयस्य पूर्ववत्।
178. पार्थस्य पृथिवीवैन्यः सोम एव हि देवता।। 176।।
विधायकब्राह्मणादि सर्वं पूर्ववदुच्यते।

78.माध्यन्दिने भक्तिनिरूपणम्

179. गायत्र्यामह्ययोस्साम्नोः पूर्वमुक्ता विभक्तयः।। 177।।
[4]**मन्तस्य पादः प्रस्तावः** [5]**हारस्सुषावसो** इति।
180. होवाहाइतिसस्तोभ इडेति च समापनम्।। 178।।
[6]**एकारान्तं** पर्वमात्रं दैर्घस्य स्ताव उच्यते।
181. उच्येते प्रतिहारौ द्वौ [7]**दधन्वाँ** यस्सुषावसो।। 179।।
[8]**स्तावक्रियापर्वणैव** स्थानस्य कथितो(ता) बुधैः।
182. [9]**हाइत्यादि** स्तौभिकान्तो प्सुवन्तरेति हारता।। 180।।

----

1. द्रा.श्रौ.सू.1.4.9, 2. द्रा.श्रौ.सू.16.3.14, 3. द्रा.श्रौ.सू.16.3.18, 4. प्रस्ता.सू. 7, 5.प्रति.सू.3.35, 6. प्रस्ता.सू.7, 7.प्रति.सू.3.30, 8.प्रस्ता.सू.7, 9.प्रति.सू.11.6

[1]सहोनरस्सत्यमोजः सुवर्ज्योति रेस्थादिदम्।
183. द्यौरक्रानिति मुख्यानि कीर्त्यन्ते निधनानि वै।। 181।।
[2]**जयस्य पादप्रस्तावः** उत्सो हारो भवेत्तथा।
184. ([3]**यौधाजयस्य पूर्वोक्ता** प्रस्तावाद्यँ शकल्पना)
[4]**पार्थस्य स्तोभसंय्युक्तः** पादभागः पृथक्पृथक्।। 182।।

79.दानप्रतिग्रहमन्त्राः

185. दासीनिष्करथाश्वाग्र्यहस्तियानगवां तथा।
दुन्दुभीदिव्यवस्त्रा(णि)दि दक्षिणानां ततः क्रमात्।। 183
186. ऋत्विजः प्रतिगृह्णीयुः तत्तन्मन्त्रैश्श्रुतीरितैः।
साश्वँरथं दक्षिणार्थं प्रतिगृह्णति चेत्तदा।। 184।।
187. [5]**मृज्यादश्वमुखान्य**[6]**श्वनामयुग्मचतुष्टयम्**।
[7]**रथोर्ध्व** स्पर्श [8]**आदित्या** वायोश्चर्म प्रतिग्रहे।। 185।।
188. अस्त्र प्रतिग्रहे नक्ष सूर्य लोह प्रतिग्रहे।
रथेति दक्षिणे चक्रे स्पर्शो वामेत्यधिष्ठितौ ।। 186।।
189. बृहदित्युत्तरे चक्रे चक्रा वङ्केति संस्पृशेत्।
[9]**वैश्वारथं** समारोहेत् [10]**गिदेत्यत्र** स्थितो जपेत्।। 187।।
190. [11]**कृशा** यच्छेत् सव्यरज्जुं स्पृशे[12]**द्वासेति** दक्षिणाम्।
पुरस्तात्सर्वमन्त्राणां [13]**देवस्यत्वेत्यमु** जपेत्।। 188।।
191. [14]**वरुणेत्यादयो** मन्त्राः (न्) क्रमात्तत्तत्प्रतिग्रहे।
[15]**अश्वो गौरप्यजः** स्वर्णमजाविर्वसनां गिराः।। 189।।
192. उष्ट्रो मृगश्च पुरुषो हस्तिवरा व्रीह्यादयः।
तिला अश्वतरो मन्त्रं [16]**काद्येतत्ते**ऽन्तमेव च।। 190।।

----

1. द्रा.श्रौ.सू.20.8.32 ?, 2. प्रति.सू.9.10, 3. द्रा.श्रौ.सू.18.3.16, 4.द्रा.श्रौ.सू.20.2.4, प्रति.सू.6.4, 5. द्रा.श्रौ.सू.5.3.23, 6.ता.ब्रा.1.7.1, 7. द्रा.श्रौ.सू.5.4.1, 8.ता.ब्रा.1.7.2-9, 9.ता.ब्रा.1.7.6, 10. ता.ब्रा.1.7.7., 11. ता.ब्रा.1.7.8, 12. ता.ब्रा.1.7.9, 13. द्रा.श्रौ.सू.5.3.14, 14. द्रा.श्रौ.सू.5.3.15,ता.ब्रा .1.8.1,16, 15. द्रा.श्रौ.सू.5.3.18,19, 16.ता.ब्रा.1.8.17,

193. [1]रश्मिरित्यादयस्स्तोमभागास्तैरनुमन्त्रणम्।
कुर्यात्क्रमेण स्तोत्राणां इत्येषा मन्त्रयोजना।। 191।।

80.क्रत्वन्तरे वाजपेये पृष्ठस्तोत्राणि

194. नाराशँसं भक्षयित्वा पृष्ठहोमं तु पूर्ववत्।
कृत्वा रथन्तरं देव्यं स्तुवीरन्पूर्ववत्तथा।। 192।।

81.अभीवर्तो ब्रह्मसाम

195. [2]अभीवर्तो ब्रह्मसाम तंवोदस्ममितीरितः।
उपधावेप्यभीवर्तं सामोपेति विशिष्यते।। 193।।
196. ऋषिः प्रजापतिः प्रोक्तः शिष्टं प्रकृतिवत्स्मृतम्।

82.तत्र प्रस्तावादिकथनम्

[3]वान्तस्तावो [4]हार इन्द्रं गीर्भिर्हाईति नैधनम्।194।।
197. कालेयं पूर्ववद्गेयं सर्पतेति च निष्क्रमः।

83.तत्र आर्भवः

[5]आर्भवे तु विशेषोऽस्ति स विशेषोऽभिधीयते।। 195।।
198. गायत्रँ स्वाशिरामर्को यस्त इत्यृक्षु गीयते।
सफश्रुध्ये पवस्वेन्द्रमच्छेत्येकर्चकारि(संहि)ते।। 196।।
199. पुरोजितीति यज्ञीयान्धीगवे कीर्त्तिते तृचे।
ततस्सूर्यवतीष्वृक्षु कावमन्त्यं यथाविधि।। 197।।

84.तत्र ऋष्यादि कथनम्

200. गायत्री ककुबुष्णिक् चानुष्टुब्जगती तथा।
अग्निर्वैश्वानरोन्धीगुः प्रजापतिरिति क्रमात्।। 198।।
201. ऋषयः कीर्तिताश्चैवं देवता सोम उच्यते।

1.ता.ब्रा.1.9.1, द्रा.श्रौ.सू.15.3.1, 2.ता.ब्रा.18.7.14,प्रस्ता.सू.7, 3. प्रति.सू.5.2,
4.प्रति.सू.5.2, 5. द्रा.श्रौ.सू.16.3.24,

85.वाजपेये आर्भवे प्रस्तावादि कथनम्

(आ)अयामायमिति स्तोभ सहिताः पादभागकाः।। 199

202. यस्तेमदेति मर्क्कस्य स्यु स्तावोद्गीथ हारकाः।
उपद्रवस्य स्थाने तु तमेव स्तोभमाहरेत्।। 200।।

203. ईकारनिधनं ब्रूयुरेवमुत्तरयोरपि।
पूर्वमेव सफस्योक्तो भागपञ्चकनिर्णयः।। 201।।

204. श्रुध्यस्यापीन्द्रमच्छेति स्तावादि विधिरुच्यते।
वान्तः प्रस्तावभागः स्यात् श्रुध्यस्य परिकीर्तितः।। 202

205. श्रुधीयेत्येव हारः स्यात् [1]सर्वे डानिधनं ततः।
पुरोजितीति ज्ञीयस्य स्वासुवद्भागकल्पना।। 203।।

206. [2]अन्यस्थान निषेधोक्तेः स्तोत्रधर्मो न चेष्वत।

86.वाजपेये अग्निष्टोमसोत्रकथनम्

[3]त्वन्नश्चित्रेति वन्तीयमग्निष्टोम साम वै।। 204।।

207. ऋषिरिन्द्रो देवताऽग्निः [4]बृहती ककुवुत्तरा।
[5]वारवन्तीय साम्नोऽस्य पर्वणा स्तावकल्पना।। 205।।

208. प्रतीहारस्य देशे तु विकल्पोऽस्ति स उच्यते।
विदागाधन्तु चेतू इत्यक्षरेषु विकल्प्यते।। 206।।

209. [6]चतुरक्षरहारो वा [7]हारस्सप्ताक्षरोऽपि वा।

87.वाजपेये उक्थ्यस्तोत्राणि

अनन्तरँ [8]साकमश्वँ [9]सौभरञ्चापि पूर्ववत्।। 207।।

88.तृतीयोक्थ्ये विशेषः

210. [10]उद्वंशीयं तु तृतीयोक्थ्यं साम तस्यापि निर्णयः।
छन्दः प्रभृतयोऽनुष्टुप् उद्वँश(स्यो)स्येन्द्र उच्यते।। 208

----

1. द्रा.श्रौ.सू.20.2.4, प्रति.सू.11.9, 2. प्रति.सू.3.51, द्रा.श्रौ.सू.6.2.22, 3.ता.ब्रा.18.6.16, 4.पु.सू.9.1.22, प्रति.सू.3.8.10, 5.द्रा.श्रौ.सू.19.4.7, 6. द्रा.श्रौ.सू.भा.19.3.13, प्रति.सू.6.11, 7. द्रा.श्रौ.सू.भा.19.3.5 8. द्रा.श्रौ.सू 18.8.4, 9. द्रा.श्रौ.सू.18.8.9, 10.प्रति.सू.6.11

89.तत्र प्रस्तावादिकथनम्

211. वँशीयस्याङ्घ्रिकस्तावो हारः स्यात्पर्व पञ्चमम्।
उवित्यत्रेडिति कुर्यात् हाईति निधनं ततः।।209।।

90.वाजपेये षोडशी

212. पूर्ववत्षोडशिस्तोत्रमुद्वँशीयादनन्तरम्।
भक्षणन्निष्क्रमश्चाऽपि प्रवेशोपहवादिकम्।।210।।

91.वाजपेयसामकथनम्

213. [1]शिपिविष्टवतीष्वृक्षु बृहत्सामाथ वैष्णवम्।
अत्रापि स्वासुवत्कार्यो भागपञ्चकनिर्णयः।।211।।

92.तत्र विशेषः

214. अत्राप्युपद्रवे वृद्धँ षोडशस्वेव शँकुषु।
द्वितीयमक्षरं प्रोक्तं [2]ह्रस्वँ स्यात्षोडशेतरे।।212।।

93.अतिरात्रनिरूपणम्

215. अतिरात्रे [3]**षोडशिग्रहो**(हं) विकल्पेन विधीयते।
षोडश्यन्ते [4]**समस्तेन** पर्यायादि त्रयं तथा।।213।।

216. सन्धौ च सन्धिसाम्नां च [5]**सपराचीति** विष्टुतिः।
पृथक्तृचेभ्यो हिङ्कार[6]**स्तिरोह्यन्स्येति** च क्र(तू)तौ।।214

94.अतिरात्रे बहिष्पवमानम्

217. पवस्व वाचो दविद्यु पवमानस्यते कवे।
बहिष्पवमानमिति [7]**त्रिवृत्स्तोमश्च** कीर्तितः।।215।।

95.तत्राज्यानि

218. अग्निन्दूतं मित्रंवयमिन्द्रमिद्गाथिनो बृहत्।
इन्द्रे अग्नानम इति आज्यानां स्तुतिरिष्यते।।216।।

----

1. ता.ब्रा.18.6.25, 2.नि.सू.2.9, 3. द्रा.श्रौ.सू.26.4.11, 18.1.1, ला.श्रौ.6.5.23,
4. द्रा.श्रौ.सू.5.3.5, 5.ता.ब्रा.2.2.1, 6. द्रा.श्रौ.सू.6.3.18, 7.ता.ब्रा.20.1.1

96.अतिरात्रे माध्यन्दिनः

219. माध्यन्दिने पवमाने विशेषः कथ्यतेऽधुना।
गायत्रमामहीयवं रौरवं जयमौशनम्।।217।।

97.पृष्ठे विशेषः

220. बृहच्छ्यैतेऽत्र पृष्ठे स्तः सर्वमन्यद्यथा पुरा।
उक्थ्यानि च यथोक्थ्ये स्युः षोडश्यपि यथा पुरा।।218

रात्रिपर्यायाः

98.तत्र प्रथमः

221. [1]पान्तमा प्रवइन्द्रा वयमुत्वेन्द्रायमद्वने।
वैतहव्यं च शाक्त्यं च काण्वं कक्षमित्यपि।।219।।

222. पर्यायः प्रथमः प्रोक्तः द्वितीयो वक्ष्यतेऽधुना।

99.द्वितीयः

अयन्त इन्द्र दासं च पारमातून इत्यपि।।220।।

223. अभित्वेत्यार्षभं चैव इदं व गारमेव च।

100.तृतीयः

[2]पर्यायेतृतीयेऽदं घृतश्चुन्निधनमेव च।।221।।

224. दैवातिथमात्वेतानि योगे योगे तवस्तरम्।
सौमेधं कौत्समिन्द्र पर्याया रात्रिपूर्विकाः।।222।।

101.सन्धिस्तोत्रम्

225. [3]एना प्रत्यु इमा उवेति त्रिवृत्सन्धि प्रकीर्तितम्।

1.ता.ब्रा.9.1.6
2.ता.ब्रा.20.1.1
3.ता.ब्रा.9.1.28, 20.1.4

सर्वस्तोम सर्वपृष्ठाप्तोर्यामः

102.तत्र बहिष्पवमानम्

पवस्व वाचो दविद्यु पवमानस्य ते कवे।

226. बहिष्पवमानमित्येवं [1]त्रिवृत्स्तोमश्च कीर्तितः।।223।।

103.तत्र सगर्भाज्यानि

[2]गर्भवन्ति चाज्यानि स्तोमः [3]पञ्चदश स्मृतः।

104.तत्र गर्भाणि

227. अग्निन्दूतमानोमित्रा इन्द्रमिद्गाथिनो बृहत्।।224।।

इन्द्राग्नी आगतं चैव एषां गर्भाः क्रमेण हि।

105.गर्भाः

228. [4]सुषमिद्धो न आवह तानश्शक्तं पार्थिवस्य।।225।।

युञ्जन्तिब्रध्नमिति तमीडिष्वायो अर्चिषा।

229. [5]चतुर्दृचेऽन्त्यस्य उद्धारः कार्य एव हि।।226।।

106. तत्र माध्यन्दिनः

230. माध्यन्दिनः पवमानश्च वाजपेयवदिष्यते।

107. माध्यन्दिने विशेषः

ऋष्यादयः तथैव स्युः विशेषस्तत्र कथ्यते।।227।।

231. [6]देवस्थानमपोह्यात्र तासु गेयँ [7]रथन्तरम्

108.रथन्तरगानकाले विशेषः

[8]रथन्तरे पावमाने बहिर्वेदेरनन्तरम्।।228।।

232. वहेयुस्सन्ततँ रथं अन्ये स्तोत्रसमाप्तितः।

1.ता.ब्रा.20.3.1, 2. द्रा.श्रौ.सू.26.3.9, 3. ता.ब्रा.20.3.1,
4. ता.ब्रा.16.5.22, 5. द्रा.श्रौ.सू.16.4.14,15, 6.कल्प.सू.
7. ता.ब्रा.16.5.22, 8. द्रा.श्रौ.सू.9.1.1

109. पृष्ठस्तोत्रे गर्भिण्यः

233. [1]बृहच्च वामदेव्यञ्च श्यैतं कालेयमेव च।।229।।
[2]गर्भवन्तीनि च [3]पृष्ठानि एषां गर्भाः क्रमेण हि।

110. तत्र गर्भाः

234. [4]वैराजं च शक्वर्यश्च वैरूपं रेवत्यश्च वै।।230।।

111. तत्र स्तोमकथनम्

[5]एकविंशश्चतुर्विंशश्चतुश्चत्वारिँशश्च वै।
235. कार्या अष्टा चत्वारिँशस्स्तोमा एषां क्रमेण च।। 231

112. अत्र आर्भवः

परिस्वानो गायत्रं सँहितं रुपमेव च।
236. पवस्वेन्द्र सफ श्रुध्ये पुरोजिती श्यावान्धीगवे।। 232
परिप्रध सौहविषं कावँ सूर्यवतीषु च।
237. इत्यार्भवः पवमानस्सोमश्च [6]त्रिणवस्स्मृतः।। 233।।

113 . तत्र अग्निष्टोमगानम्

[7]यज्ञायज्ञीयमग्निष्टोम गानञ्च गर्भवद्धि तत्।

114. तत्र गर्भः

238. गर्भो बृहत्वमग्ने स्तामे[8]स्त्रयस्त्रिँश एव हि।। 234।।

115. मतभेदः

[9]क्रत्वन्तरे चाप्तोर्यामे गर्भं नेच्छति सूत्रकृत्।

116. उक्थ्ये गर्भविषये मतभेदः

239. उक्थ्यानि च सगर्भाणि [10]केचिदाहुर्मनीषिणः।।235।।
[11]केचिन्नात्र गर्भमाहुः यदि [12]गर्भो भवेत्तदा।

1.द्रा.श्रौ.सू.9.1.1, 2.द्रा.श्रौ.सू.26.3.1 , 3.द्रा.श्रौ.सू.26.3.11, ला.श्रौ.सू.6.5.20, 4.द्रा.श्रौ.सू. 26.3.1, नि.सू.8.2, ला.श्रौ.सू.6.5.21, 5.ता.ब्रा.3.8.13,20.3.1, 6.ता.ब्रा.20.3.1, 7. ला.श्रौ.सू. 6.5.20, द्रा.श्रौ.सू.26.3.11, 8.ता.ब्रा.3.8.13, 20.3.1, 9. द्रा.श्रौ.सू.भा.26.3.11, 10. द्रा.श्रौ.सू.26.3.9, ला.श्रौ.सू.6.5.21, 11.द्रा,श्रौ,सू.26.3.10, ला.श्रौ.सू.6.5.22, 12.ता.ब्रा.13.12.4

117. गर्भपक्षे गर्भाः

240. गूर्द्वो भद्रमुद्वंशश्च तेषां गर्भाः क्रमेण हि।।236।।

118. तत्र स्तोमकथनम्

[1]त्रिणवैकविँशसप्तदशस्तोमाः क्रमेण वै।

119. तत्र षोडशी

241. षोडश्यपि यथापूर्वमेकविँशो भवेत्तथा।।237।।
पर्यायाश्च यथापूर्वं विशेषस्तत्र कथ्यते।

120. पर्याये विशेषः

242. [2]पन्यँपन्यँ श्रौतकक्षं दैवोदासं तु पूर्ववत्।।238।।
कौत्सस्य स्थाने चात्वाविशन्त्विति दँष्ट्रकम्।
243. हेतुश्चात्राऽहीनपाठः शेषँ रात्रिवद्भवेत्।।239।।

121. तत्र सन्धिस्तोत्रम्

सन्धिस्तोत्रञ्च यथापूर्वं [3]त्रिवृत्सोमश्च इष्यते।

122. अत्र अतिरिक्तस्तोत्राणि

244. [4]स्तोत्राणि चातिरिक्तानि [5]क्लृप्तानि ब्राह्मणेन वै।।240

123 . तत्र भक्षणे विशेषः

[6]त्रिवृज्जराबोधीयं च [7]भक्षो गायत्रछन्दसा।

124. तत्र विष्टुतिः

245. विष्टुतिः कथिता तत्र वर्तनी परिपूर्विका।।241।।
[8]सत्रासाहीयं द्वितीयं स्तोमः सप्तदशस्स्मृतः।
246. मार्गीयवं तृतीयं च स्तोमः [9]पञ्चदशः स्मृतः।।242।।
तुरीयं वैष्णवं वारवन्तीयमेकविंशकम्।

1.ता.ब्रा.20.3.1, 2. द्रा.श्रौ.सू.26.2.16, 3.ता.ब्रा.20.3.1, 4.द्रा.श्रौ.सू.7.1.29, 5.द्रा.श्रौ.सू.7.1.29, 6.द्रा.श्रौ.सू.26.4.10, ला.श्रौ.सू.6.5.22, ता.ब्रा.20.3.2, 7.द्रा.श्रौ.सू.7.1.29, 8.ता.ब्रा.20.3.2 9.ता.ब्रा.20.3.2

125. सर्वस्तोमप्रकारकथनम्

247. [1]त्रिवृत् बहिस्तुतिश्चैव आज्यानि दश पञ्च च।।243।।
माध्यन्दिने सप्तदश स्तोमसंख्या प्रकीर्तिता।

248. होतुः पृष्ठं चैकविंशं छन्दोमा इतराणि वै।।244।।
आर्भवस्त्रिणवः स्त्रयस्त्रिँशोग्निष्टोम इष्यते।

249. विपरीतक्रमोक्थानि त्रिणवं प्रथमं तथा।245।।
एकविँशं द्वितीयंस्यात्साप्तदश्यं तृतीयकम्।

250. षोडशीचैकविँशस्यात् रात्रिस्सप्तदश स्मृता।।246।।
त्रिवृत्सन्धिस्तथाऽतिरिक्तस्तोत्रं प्रथममेव हि।

251. पाञ्चदश्यं द्वितीयं च साप्तदश्यं तृतीयकम्।।247।।
एकविंशं तुरीयं च त्रयस्त्रिशमितीरितम्।

252. सर्वस्तोमप्रकारोयं श्रुत्युक्तो विशदीकृतः।।248।।

*****

।।इति शम्।।

1.ता.ब्रा.20.3.1,2

प्रकाशितानि पुस्तकानि

1. नारदीयशिक्षा सभाष्या, पृष्ठ-166, मूल्य-125.00
2. सामवेदसन्ध्योपासना, पृष्ठ-64, मूल्य-50.00
3. फुल्लपोतम्, पृष्ठ- 452, मूल्य-300.00
4. गौतमीयापरसूत्रप्रकाशः, पृष्ठ-202, मूल्य-100.00
5. सामवेदीयाष्टब्राह्मणानि, पृष्ठ-566, मूल्य-1000.00
6. ऋक्तन्त्रं सभाष्यम्, पृष्ठ-246, मूल्य-350.00
7. सामवेदीय कर्मप्रदीपः, पृष्ठ-278, मूल्य- 400.00
8. सामप्रभा, पृष्ठ-144, मूल्य-150
9. जैमिनीय ऊह ऊषाणी, पृष्ठ-384, मूल्य-1000.00
10. राणायनीयवर्गपरिभाषितवेयगानम् भाग-1, पृष्ठ-250, मूल्य-200
11. राणायनीयवर्गपरिभाषितवेयगानम् भाग-2, पृष्ठ-312, मूल्य-200
12. सामवेदपदपाठः, पृष्ठ- 472, मूल्य-750.00
13. सामवेदीयश्रौतस्मार्तकारिकासंग्रहः, पृष्ठ-248, मूल्य- 450.00

DR GIRIJAPRASAD SHADANGI

डॉ गिरिजाप्रसाद षडङ्गी का जन्म २७ जनवरी १९७२ गुरुवार को ब्राह्मण परिवार में कसरदा ग्राम, कटक जिल्ला ओडीशा राज्य मे हुआ है। पिताजी का नाम हरमोहन षडङ्गी एवं माताजी का नाम सरोजिनी देवी है। दो बहनें और छे भाईयों में वह पांचवा भाई है। सामवेद के कौथुम, राणायनी और जैमिनी शाखाओं के वेत्ता है। ओडिआ, संस्कृत, कन्नड, तेलुगु, गुजराती, हिन्दी एवं अग्रेजी भाषाओं के ज्ञाता है। अपनी पढाई कर्णाटकराज्य के मैसूर, गोकर्ण और श्रृङ्गेरी में सम्पन्न किये है। वर्तमान तिरुपति के श्रीवेङ्कटेश्वर वेद विश्वविद्यालय में सामवेद के वरिष्ठ व्याख्याता के रूप में कार्यरत है। सामवेद के अलभ्य और अप्रकाशित अनेक ग्रन्थों को सम्पादन और प्रकाशन कार्य में रत है। विशेष करके प्राचीन पाण्डुलिपि में निबद्ध ग्रन्थों को देवनागरी लिपि में संशोधन करके प्रकाशित करना मुख्य ध्येय है।

ISBN 935321657-5
9789353216573

₹ 450/-